# शुष्क क्षेत्र में सब्जी उत्पादन की उन्नत तकनीक


**संकलन**

प्रदीप कुमार, प्रतापसिंह खापटे, सोमा श्रीवास्तव
रंजय कुमार सिंह एवं अनुराग सक्सेना



**भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान**

(आई.एस.ओ. 9001 : 2015)

जोधपुर 342 003 (भारत)


भाकृअनुप
ICAR

CGIAR
RESEARCH PROGRAM ON
Dryland Systems

केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर
CENTRAL ARID ZONE RESEARCH INSTITUTE, JODHPUR
1959

# शुष्क क्षेत्र में सब्जी उत्पादन की उन्नत तकनीक


**संकलन**

प्रदीप कुमार, प्रतापसिंह खापटे, सोमा श्रीवास्तव
रंजय कुमार सिंह एवं अनुराग सक्सेना



**भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान**

(आई.एस.ओ. 9001 : 2015)

जोधपुर 342 003 (भारत)


भाकृअनुप
ICAR

CGIAR
RESEARCH PROGRAM ON
Dryland Systems

केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर
CENTRAL ARID ZONE RESEARCH INSTITUTE, JODHPUR
1959

**संदर्भ:**

प्रदीप कुमार, प्रतापसिंह खापटे, सोमा श्रीवास्तव, रंजय कुमार सिंह एवं अनुराग सक्सेना 2017. शुष्क क्षेत्र में सब्जी उत्पादन की उन्नत तकनीक. भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर, राजस्थान, पृष्ठ संख्या 94.

**प्रकाशक**

निदेशक
भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान
जोधपुर 342 003, राजस्थान

**प्रकाशन वर्ष**

जनवरी, 2017

**मुद्रक:**

एवरग्रीन प्रिन्टर्स
14–सी, हैवी इण्डस्ट्रीयल एरिया, जोधपुर

# विषय-सूची


1. **सब्जियों का पोषण में महत्व एवं आर्थिक उपयोगिता** 1
   – सोमा श्रीवास्तव, प्रदीप कुमार एवं अनुराग सक्सेना

2. **सब्जी उत्पादन की उन्नत प्रौद्योगिकी** 3
   – प्रदीप कुमार, प्रतापसिंह खापटे एवं अनुराग सक्सेना

3. **सब्जियों की संरक्षित खेती** 10
   – अनुराग सक्सेना, प्रतापसिंह खापटे एवं प्रदीप कुमार

4. **लो-टनेल तकनीक द्वारा कद्दूवर्गीय सब्जियों की अगेती खेती** 15
   – प्रदीप कुमार, प्रतापसिंह खापटे एवं अनुराग सक्सेना

5. **टमाटर उत्पादन की उन्नत तकनीक** 18
   – प्रदीप कुमार

6. **बैंगन उत्पादन की उन्नत तकनीक** 23
   – प्रतापसिंह खापटे

7. **मिर्च उत्पादन की उन्नत तकनीक** 26
   – प्रदीप कुमार

8. **प्याज उत्पादन की उन्नत तकनीक** 29
   – प्रदीप कुमार एवं प्रतापसिंह खापटे

9. **गाजर उत्पादन की उन्नत तकनीक** 32
   – प्रदीप कुमार एवं प्रतापसिंह खापटे

10. **भिंडी उत्पादन की उन्नत तकनीक** 35
    – प्रतापसिंह खापटे, प्रदीप कुमार एवं अनुराग सक्सेना

11. **खीरे की उन्नत खेती** 38
    – अनुराग सक्सेना, प्रतापसिंह खापटे एवं प्रदीप कुमार

12. **लौकी की उन्नत खेती** 42
    – प्रतापसिंह खापटे एवं प्रदीप कुमार

13. **तोरी उत्पादन की उन्नत तकनीक** 45
— प्रतापसिंह खापटे एवं प्रदीप कुमार

14. **ग्वारफली उत्पादन की उन्नत तकनीक** 48
— प्रदीप कुमार, प्रतापसिंह खापटे, अनुराग सक्सेना एवं एम. पाटीदार

15. **हरी-पत्तीदार सब्जियों के उत्पादन की उन्नत तकनीक** 51
— प्रतापसिंह खापटे, प्रदीप कुमार एवं अनुराग सक्सेना

16. **सब्जी हेतु खेजड़ी एवं गूंदे का उत्पादन एवं प्रबंधन** 55
— अकथ सिंह एवं पी.आर. मेघवाल

17. **सब्जियों में रोग प्रबंधन** 60
— ऋतु मावर एवं कुलदीप सिंह जादोंन

18. **सब्जियों में कीट प्रबंधन** 64
— निशा पटेल

19. **सब्जियों में सूक्ष्म पोषक तत्व प्रबंधन** 69
— नवरतन पवार एवं प्रदीप कुमार

20. **सब्जी उत्पादनः उन्नत सिंचाई एवं जल प्रबंधन** 74
— रंजय कुमार सिंह

21. **गृह वाटिका में सब्जी बागवानी** 77
— सोमा श्रीवास्तव एवं प्रदीप कुमार

22. **तुड़ाई उपरान्त सब्जियों का प्रबंधन** 80
— पी.आर. मेघवाल एवं प्रदीप कुमार

23. **शुष्क क्षेत्र में सब्जी परिरक्षण एवं मूल्य संवर्धन हेतु तकनीक** 83
— सोमा श्रीवास्तव

24. **कम्पोस्ट बनाने की उत्तम वैज्ञानिक विधियाँ** 87
— महेश कुमार

25. **कृषि में शहरी एवं औद्योगिक अपशिष्ट पदार्थो का उपयोग** 89
— नवरतन पंवार

# प्राक्कथन

हमारा देश वर्षों से कृषि प्रधान देश रहा है और यहाँ की लगभग दो–तिहाई आबादी किसी न किसी रूप में कृषि से जुड़ी हुई गतिविधियों में सम्मिलित है। विगत कुछ वर्षों में भारत खाद्यान्न उत्पादन में जहाँ आत्मनिर्भर हुआ है, वहीं बागवानी फसलों के उत्पादन में भी आशातीत बढ़ोतरी हुई है। परिणामस्वरूप पिछले कई वर्षों से फल व सब्जी उत्पादन में हमारा देश विश्व में द्वितीय स्थान पर काबिज है। सब्जियों की बढ़ती माँग के कारण इनका उत्पादन किसानों के लिए अत्यंत लाभकारी व्यवसाय हो गया है। इनकी माँग बढ़ने का कारण जनसंख्या वृद्धि तथा लोगों में स्वास्थ्य के प्रति बढ़ती जागरूकता है। सब्जियों में विद्यमान महत्वपूर्ण पोषक तत्व व लोगों की बढ़ती क्रय–शक्ति भी इनकी माँग बढ़ने की वजह है।

राष्ट्रीय बागवानी बोर्ड (2014) के आंकड़ों के अनुसार वर्तमान में देश के कुल सकल बागवानी उत्पादन (27.74 करोड़ टन) का लगभग 60 प्रतिशत (16.3 करोड़ टन) हिस्सा सब्जी द्वारा प्राप्त होता है। आमतौर पर सब्जी फसल कम समय में तैयार होने के साथ–साथ अधिक उत्पादन देने में सक्षम हैं, अतः सिंचाई से साधन सम्पन्न किसानों की पहली पसंद है। भारत में सब्जियों की खेती पर्वतीय क्षेत्रों से लेकर समुद्र के तटवर्ती भागों तक सफलतापूर्वक की जाती है। हमारे देश की जलवायु में काफी भिन्नता होने के कारण देश की बढ़ती हुई जनसख्या को देखते हुए इसे और बढ़ाने की आवश्कता है।

वर्तमान में हमारे देश की औसत सब्जी उत्पादकता लगभग 17.5 टन प्रति हेक्टेयर है, जोकि कई देशों के साथ–साथ विश्व की औसत उत्पादकता (19.5 टन प्रति हेक्टेयर) से कम है। देश के अंदर भी विभिन्न राज्यों की उत्पादकता भिन्न है। उदाहरणस्वरूप राजस्थान की सब्जी उत्पादकता सिर्फ 9.3 टन प्रति हेक्टेयर है। देश के साथ–साथ राजस्थान जो क्षेत्रफल की दृष्टि से बहुत बड़ा राज्य है, में सब्जी की उत्पादकता कम होने के बहुत सारे कारण हैं। पश्चिमी राजस्थान जहां वर्षा के कम होने के साथ–साथ भू–जल की मात्रा व गुणवत्ता भी काफी कम है, इसके अलावा अन्य कई जैविक व अजैविक कारकों से भी खासकर खुले खेत में सब्जी उत्पादन लेने पर खासा नुकसान होता है। यही कारण है कि इन क्षेत्रों में सब्जियों के बाजार मूल्य भी अपेक्षाकृत काफी अधिक होते हैं। ऐसी दशा में सब्जी–उत्पादन की उन्नत तकनीकियों के बारे में सही जानकारी प्राप्त कर उनका सही तरीके से प्रयोग करके सब्जियों की खेती को लाभकारी बना सकते हैं। सब्जियों के अधिक उत्पादन से जहाँ हम एक ओर अपने भोजन में आवश्यक पोषक तत्वों की पूर्ति हेतु अधिक सब्जी का प्रयोग कर सकेगें वहीं अतिरिक्त पैदावार को बेचकर पहले से कहीं अधिक मुद्रा भी कमा सकेंगे।

इस पुस्तिका में विभिन्न सब्जियों के उत्पादन, प्रबंधन एवं प्रसंस्करण समेत अन्य विषयों को सरल भाषा में बताया गया है, जोकि कृषि से प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से जुड़े सभी लोगों के लिए लाभकारी साबित होगा।


**(ओम प्रकाश यादव)**
निदेशक
भाकृअनुप–काजरी, जोधपुर

# प्रस्तावना

कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ है। देश की 65 प्रतिशत आबादी खेती–बाड़ी में लगी है। पिछले छह दशकों में उत्पादन की अभूतपूर्व वृद्धि में नीति–नियोजन और वैज्ञानिक अनुसंधान तथा तकनीकी विकास की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। स्वतंत्रता के बाद देश की सब्जी का उत्पादन छह गुणा से अधिक बढ़ा है लेकिन देश की बढ़ती हुई जनसंख्या को देखते हुए इसे और बढ़ाने की आवश्यकता है। हमारे देश की जलवायु में काफी विभिन्नता होने के कारण देश के विभिन्न भागों में 60 से अधिक प्रकार की सब्जियां उगायी जाती हैं। वर्तमान में हमारे देश में लगभग 60 लाख हेक्टेयर क्षेत्र में सब्जियों की खेती की जाती है जिसका सकल उत्पादन लगभग 8.4 करोड़ टन है। इस प्रकार भारत, चीन के बाद विश्व का सर्वाधिक सब्जी उत्पादक देश है।

सब्जियों के भरपूर सेवन से कुपोषण की समस्या से भी निपटा जा सकता है। अनाज उत्पादन में शानदार कामयाबी के बावजूद अभी भी सब्जी उत्पादन जैसे अन्य क्षेत्रों में कृषि विकास की सम्भावनाओं का पूरा फायदा नहीं उठाया जा सका है। उत्पादन की सम्भावना तथा वास्तविक उत्पादन स्तर और प्रौद्योगिकी हस्तांतरण के मामले में अभी काफी अंतर है। इस कारण ज्यादातर कृषि उपजों के उत्पादन का राष्ट्रीय औसत कम है। गरीबी के बोझ तले दबी 20–30 प्रतिशत आबादी को अब भी पर्याप्त भोजन नहीं मिल पाता और लोग कुपोषण के शिकार हैं। खेती–बाड़ी का काम लगातार जटिल होता जा रहा है। इसे देखते हुए आधुनिक टेक्नोलॉजी के इस्तेमाल की जानकारी देना और सूचना व्यवस्था को कुशल बनाना आवश्यक हो गया है। उन्नत सब्जी उत्पादन के मुख्य घटक जैसे– उन्नत किस्म व बीज का चुनाव, उचित बीज दर, बीज व पौध उपचार, बुआई व रोपाई का सही समय व तरीका, गुणवत्तापूर्ण सब्जी–पौध तैयार करने की विधि, लो–टनेल, पॉलीहाउस अथवा नेट–हाउस में अगेती या असमय तथा मृदा–रहित माध्यम में सब्जी उत्पादन तकनीक, बूँद–बूँद व फव्वारा सिंचाई प्रणाली से उचित मात्रा में पानी का उपयोग, पलवार का प्रयोग, जैविक व रासायनिक खादों तथा सूक्ष्म पोषक तत्वों के समुचित प्रयोग, समन्वित रोग व कीट नियंत्रण आदि को अपनाकर प्रति इकाई क्षेत्र से एक निश्चित समय में बहुत अधिक लाभ कमाया जा सकता है। प्रसार–कार्यकर्ताओं और शोध कार्य में लगे वैज्ञानिकों के बीच ऊपर से नीचे और नीचे से ऊपर सूचनाओं का आदान–प्रदान बढ़ाए जाने की आवश्यकता है ताकि आर्थिक और पारिस्थितिकी की दृष्टि से उपयुक्त कृषि की पद्धतियाँ विकसित की जा सकें। कृषकों को प्रशिक्षण इस दिशा में एक सराहनीय कदम है तथा इस प्रशिक्षण पुस्तिका में दी गयी जानकारी किसान भाइयों के लिए अत्यंत लाभप्रद सिद्ध होगी ऐसा मेरा विश्वास है।

(विनय नांगिया)
वरिष्ठ वैज्ञानिक (कृषि जल प्रबन्धन)
एवं समन्वयक, इकार्डा–काजरी परियोजना
रबात, मोरक्को

# सब्जियों का पोषण में महत्व एवं आर्थिक उपयोगिता

**सोमा श्रीवास्तव, प्रदीप कुमार एवं अनुराग सक्सेना**

केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर

हमारा देश एक कृषि प्रधान देश है जिसे भौगोलिक दृष्टि से विभिन्न कृषि जलवायु क्षेत्रों में विभाजित किया गया है। सब्जियों का भारतीय कृषि उत्पादन में महत्वपूर्ण स्थान है। हमारे देश में विभिन्न कृषि जलवायु क्षेत्रों के लिए उपयुक्त सब्जियों का बहुतायत से उत्पादन होता है। पिछले कुछ दशकों में कृषि अनुसंधान के फलस्वरूप सब्जी उत्पादन में महत्वपूर्ण वृद्धि हुई है। भारत का चीन के पश्चात् सब्जी उत्पादन में विश्व में दूसरा स्थान है। सब्जियों के महत्व का अंदाजा इसी बात से लगाया जा सकता है कि, सब्जियाँ न केवल उत्पादन एवं आर्थिक दृष्टिकोण से उल्लेखनीय हैं बल्कि इनका मानव पोषण में भी अत्यधिक महत्व है। हमारे शरीर को कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन व वसा के द्वारा ऊर्जा मिलती है, उसके उत्पादन तथा नियमन के लिए जिन एनजाइम्स की आवश्यकता होती है उनकी उचित कार्यप्रणाली के लिए आवश्यक लवण अणुओं की प्राप्ति, शरीर के प्रतिरोधक तंत्र को मजबूत रखने के लिए विभिन्न विटामिन व लवणों के स्रोत के रूप में व घुलनशील तथा अघुलनशील रेशों के उत्कृष्ट स्रोत के रूप में सब्जियों की अत्यधिक आवश्यकता एवं महत्व है। इसके अतिरिक्त औषधि निर्माण एवं प्रसंस्करण के क्षेत्र में भी सब्जियों की अत्यधिक उपयोगिता है।

भारत को स्वस्थ एवं उत्पादक राष्ट्र बनाने के लिए खाद्य उत्पादन बढ़ाने के साथ–साथ जनता को सन्तुलित आहार प्रदान कराना भी आवश्यक है। यह कार्य सब्जियों के उत्पादन को बढ़ाने से आसानी से हल हो सकता है। सब्जियाँ भोजन का एक भाग ही नहीं, बल्कि ये मनुष्य को स्वस्थ रहने के लिए पोषक तत्व प्रदान करती हैं। भोजन विशेषज्ञों के अनुसार एक व्यक्ति को प्रतिदिन 280 ग्राम सब्जियों का उपभोग करना चाहिए, जिसमें 85 ग्राम जड़ वाली सब्जियाँ, 85 ग्राम अन्य सब्जियाँ तथा 110 ग्राम हरी पत्तेदार सब्जियाँ शामिल हैं। भारत जैसे देश में, जहाँ कि अधिकतर जनता शाकाहारी है, सब्जियों का महत्व और भी बढ़ जाता है। इतना होते हुए भी हमारे देश में विकसित देशों की तुलना में सब्जियों का उपयोग बहुत ही कम होता है। भारतीय भोजन में धान्य की अधिकता रहती है, जबकि विकसित देशों में धान्य की अपेक्षा सब्जियों और फलों की अधिकता रहती है। अतः भारतीय भोजन में सब्जियों एवं फलों की अधिक उपलब्धता के लिए इनके उत्पादन के ऊपर और अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है। सब्जियाँ महत्वपूर्ण खनिजों और विटामिनों का भंडार होती है और इसलिए इनका वर्गीकरण संरक्षी खाद्य के रूप में किया गया है। इनमें आयरन, कैल्शियम, विटामिन ए (जैसे कैरोटीन), विटामिन सी और बी कांप्लेक्स समूह के विटामिन विशेषतया राइवोफ्लोविन और फोलिक एसिड तथा विभिन्न एंटीओक्सीडेंट प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं जोकि कई प्रकार की बीमारियों से बचाने में मददगार हैं।

## सब्जियों का पौष्टिक रूप से महत्व

पत्तीदार हरी शाक–सब्जियाँ शरीर के उचित विकास एवं अच्छे स्वास्थ के लिए आवश्यक होती है,क्योंकि इसमें सभी जरूरी पोषक तत्व उपस्थित होते हैं। हरी पत्तीदार सब्जियाँ प्रतिदिन वयस्क महिलाओं के लिए 125 ग्राम, वयस्क पुरुषों के लिए 100 ग्राम, 4–6 वर्ष के बालकों के लिए 50 ग्राम और 10 वर्ष से अधिक उम्र वाले बालक–बालिकाओं के लिए 50 ग्राम प्रतिदिन आवश्यक है।

100 ग्राम हरी सब्जियों के सेवन से 60–140 मिलीग्राम विटामिन सी, 100 मिलीग्राम फॉलिक एसिड, 4–7 मिलीग्राम लौह तत्व और 200–400 मिलीग्राम केल्शियम तत्व की प्राप्ति होती है तथा यह शर्करा व वसा के पाचन के दौरान उत्पन्न होने वाले अम्ल की मात्रा को नियंत्रित करने में भी सहायक है। इसके अतिरिक्त सब्जियों के सेवन से रेशे की पूर्ति भी होती है जो कि छोटी व बड़ी आंत की समुचित कार्यप्रणाली के लिए परम आवश्यक है।

भारत में कई तरह की हरी सब्जियों को खाया जाता है, इनमे से कुछ हैं पालक, मेथी, चौलाई, सहजन की पत्तियाँ धनिया और पुदीना आदि। पत्तेवाली सब्जियां लौहयुक्त होती हैं। लौह की कमी से एनीमिया जैसी बीमारी हो सकती है, जो कि भारतीय जनसामान्य में बहुतायत से देखी गयी है तथा गर्भवती और स्तनपान करानेवाली महिलाओं में आम है। भोजन में हरी पत्तीदार सब्जियों का सेवन एनीमिया को रोकने में सहायक होता है।

हरी पत्तीदार सब्जियों में कैल्शियम, बीटा कैरोटिन एवं विटामिन सी भी काफी मात्रा में पाये जाते हैं। हरी पत्तीदार सब्जियों में उपस्थित कैरोटिन शरीर में विटामिन ए में परिवर्तित हो जाता है, जिससे रतौंधी तथा बच्चों में अन्धेपन की बीमारी को रोका जा सकता है ।

हरी सब्जियों में विटामिन बी कॉम्पलेक्स तथा विटामिन सी भी पाया जाता है। विटामिन सी को बचाये रखने के लिए उन्हें ज्यादा देर (5 मिनट से अधिक) तक पकाना अनुचित है, क्योंकि पोषक तत्व जैसे विटामिन सी अधिक पकाने से नष्ट हो जाते हैं।

हरी व पीले रंग कि सब्जियाँ जैसे कद्दूवर्गीय सब्जियाँ तथा गाजर, चुकंदर आदि में विटामिन ए कि अधिकता पायी जाती है तथा विभिन्न एंटीओक्सीडेंट प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं।

जड़ वाली सब्जियाँ जिनको प्रतिदिन 85 ग्राम खाने की सलाह आई.सी.एम.आर. द्वारा दी गयी है ऊर्जा, घुलनशील तथा अघुलनशील रेशे का बहुत अच्छा स्रोत हैं ।

सब्जियों का आर्थिक महत्व जैसा कि पहले ही अवगत कराया जा चुका है कि भारत का सब्जी उत्पादन में चीन के

बाद विश्व में दूसरा स्थान है जबकि अभी हमारे देश में कुल कृषीय क्षेत्र के मात्र 7.57 प्रतिशत भाग में ही सब्जी उत्पादन किया जाता है। वर्ष 2013–14 में 9.3 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र में सब्जी उत्पादन से 163 मिलियन टन सब्जी उत्पाद की प्राप्ति हुई तथा पिछले दस वर्षों में सब्जी उत्पादन क्षेत्रफल में 2.5 प्रतिशत तथा सकल सब्जी उत्पाद में 4.9 प्रतिशत की वृद्धि देखी गयी है पिछले दस वर्षों में सब्जियों की उत्पादकता में भी अपेक्षित सुधार हुआ है तथा उत्पादकता 2.3 प्रतिशत की दर से बढ़ी है। यदि 1961–62 की सब्जी उत्पादकता जो कि लगभग 6.2 प्रतिशत थी के हिसाब से देखा जाए तो हमारे देश में सब्जी की उत्पादकता में दुगुने से अधिक की वृद्धि दर्ज की गयी है।

पश्चिम बंगाल, उत्तर प्रदेश तथा बिहार भारत के तीन सबसे प्रमुख सब्जी उत्पादक राज्य हैं। इसके अतिरिक्त आंध्र प्रदेश, गुजरात, तमिलनाडु ओड़ीसा, महाराष्ट्र राज्यों में भी अच्छी मात्रा में सब्जी उत्पादन होता है। राजस्थान राज्य सब्जी उत्पादन की दृष्टि से बीसवें स्थान पर है जिसमें बैंगन (30,900 टन), पत्ता गोभी (8,500 टन), फूल गोभी (39,200 टन), भिंडी (12,400 टन) व टमाटर (67,500 टन) की फसलें प्रमुख हैं तथा मटर (4,100 टन) का भी कुछ मात्रा में उत्पादन राजस्थान राज्य में होता है। राजस्थान में वर्ष 2001 से 2012 मध्य कुल सब्जी उत्पादन क्षेत्र में 1,31,900 हेक्टेयर से 1,40,300 हेक्टेयर की वृद्धि व उत्पादन में 7,36,700 टन से 10,71,900 टन की वृद्धि हुई। वर्ष 2013–14 में राजस्थान में सब्जी उत्पादन का क्षेत्र बढ़कर 149,000 हेक्टेयर तथा कुल सब्जी उत्पादन लगभग 1114,000 टन हो गया है और इसकी उत्पादकता बढ़कर 7.5 टन प्रति हेक्टेयर हो गयी है।

सब्जी उत्पादन का सबसे बड़ा फायदा यह है कि अधिकतर सब्जियाँ न केवल कम अवधि में तैयार हो जाती हैं बल्कि एक ही खेत में कई बार सब्जियों की फसलें ले सकते हैं जिससे संतुलित आहार की प्राप्ति के साथ साथ आर्थिक लाभ भी बढ़ जाता है। सब्जियों की खेती मुख्यतः तीनों मौसमों में खरीफ, रबी तथा जायद में की जाती है। सब्जियों की खेती को विशेष रूप से बढ़ावा देना चाहिए ताकि वे सालभर उपलब्ध रहें। किचन गार्डन, छत और स्कूल के बगीचे हरी सब्जियों की खेती के लिए उचित स्थान हैं। घर के पिछवाड़े में भी गृह वाटिका में घरेलू स्तर पर सब्जी उत्पादन किया जा सकता है। शाक–सब्जियों को साल में तीन बार बोया जा सकता है जिसका उल्लेख निम्नलिखित है।

**खरीफ वाली सब्जियाँ–** इन्हें जून–जुलाई मे बोया जा सकता है। इस समय भिंडी, लौकी, करेला, टिंडा, तोरई, बैगन, टमाटर, ग्वार, लोबिया, मिर्च, अरबी आदि सब्जियों की खेती की जा सकती है।

**रबी वाली सब्जियाँ–** इनकी बुवाई सितंबर–अक्तूबर मे की जाती है। इस समय बैगन, सरसों, मटर, गाजर, प्याज, लहसुन, आलू, टमाटर, शलजम, फूलगोभी, बंदगोभी आदि सब्जियों की खेती की जा सकती है।

**जायद वाली सब्जियाँ–** इन्हें फरवरी–मार्च में उगाया जाता है। इस समय भिंडी, ककड़ी, खीरा, खरबूजा, तरबूज, लौकी, तोरई, टिंडा, ग्वार, अरबी, बैगन आदि सब्जियों की खेती की जा सकती है।

1. अधिक पैदावार व शुद्ध लाभ– अन्य फसलों की बजाय सब्जियों व फलों की उपज लगभग 100–150 क्विंटल प्रति हेक्टर होती है जबकि धान या गेहूं की 50–60 क्विंटल प्रति हेक्टेयर तक उपज होती है तथा इसे साल में कई बार लिया जा सकता है। सब्जियों में कटाई भी कई बार ली जाती है तथा हर कटाई के उपरांत सब्जी का उत्पाद प्राप्त होता है जोकि धान्य फसलों में संभव नहीं है। शुद्ध लाभ प्रति इकाई क्षेत्रफल भी अधिक होता है।
2. आय के साधन में बढ़ोतरी– सब्जियाँ अधिक उपज देने वाली होती है साथ ही इनकी उपज प्रति इकाई क्षेत्रफल अधिक होती है। सब्जियाँ शीघ्र बढ़ने वाली या पैदा होने वाली होती है। कुछ सब्जियाँ ऐसी भी हैं जो धान्य या अन्य अनाज वाली फसलों की अपेक्षा उच्च दर से बेची जाती है। यदि अधिक उत्पादन के समय सस्ती भी बेची जाएँ तो भी अधिक पैदावार के कारण लाभ प्रति इकाई क्षेत्रफल अधिक मिलता है।
3. सहायक उद्योगों को प्रोत्साहन– बागवानी से दूसरे सहायक उद्योगों को प्रोत्साहन मिलता है। सब्जी उत्पादन, फलोत्पादन के साथ ही फलों एवं सब्जियों से बने बहुत से पदार्थ जैसे–जैम, जेली, सॉस, चटनी मार्मलेड, शर्बत, इत्यादि के लिए चीनी मिट्टी, शीशे एवं टिन के जार. मसाले, रासायनिक पदार्थ, पैकिंग सामग्री इत्यादि की आवश्यकता होती है। अतः इन वस्तुओं के निर्माण हेतु भी प्रोत्साहन मिलता है।
4. रोजगार की संभावनायें– बेकारी की समस्या को हल करने में मदद मिल सकती है। धान्य फसलों की अपेक्षा इसमें अधिक श्रमिकों की आवश्यकता होती है जिससे मजदूरों को अधिक समय तक कार्य मिल सकता है। फल एवं सब्जी परिरक्षण फैक्ट्री या उद्योग की स्थापना से बेकारी की समस्या को हल करने में मदद मिलती है। बागवानी पर आधारित उद्योगों जैसे जैम, जेली, सॉस, चटनी, केचप, एवं आचार उत्पादन इत्यादि को बढ़ावा मिलता है और स्वरोजगार की संभावनायें बढ़ती हैं।
5. विदेशी धन की प्राप्ति– बहुत सी सब्जियों, फलों को अन्य देशों में बेचकर या निर्यात कर विदेशी मुद्रा अर्जित की जा सकती है। भारत में वर्ष 2000–2001 में सब्जी निर्यात से 300.79 करोड़ रुपयों की आय हुई।
6. उपयोगी वस्तुओं की प्राप्ति– फल व सब्जी वाले पौधों से इंधन, लकड़ी, व तेल इत्यादि प्राप्त होते हैं। जैसे– आंवला नारियल से तेल तथा अन्य पौधों से गोंद एवं अंजीर, बेल व नींबू प्रजाति से दवा बनायी जाती है।
7. भूमि की उर्वरक शक्ति में वृद्धि में सहायक– बागवानी से मृदा (मिट्टी) की उर्वरक शक्ति बढ़ती है। सब्जियों व फलों की पत्तियाँ खेत में सड़कर मिट्टी की उर्वरा शक्ति बढ़ाती हैं। जड़ों के अधिक गहराई में जाने से भूमि का विन्यास अच्छा हो जाता है।

# सब्जी उत्पादन की उन्नत प्रौद्योगिकी

**प्रदीप कुमार, प्रतापसिंह खापटे एवं अनुराग सक्सेना**
केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर

सब्जियाँ हमारे दैनिक आहार का प्रमुख हिस्सा है। सब्जियों में महत्वपूर्ण पोषक तत्व जैसे विटामिन्स, खनिज लवण, खाद्य रेशा, एंटीओक्सीडेंट्स, फोलिक अम्ल आदि प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं जिनका हमारे शरीर में विभिन्न बीमारियों के प्रति प्रतिरक्षा प्रदान करने में अहम योगदान है। इसी वजह से सब्जियों को संरक्षी खाद्य के रूप में जाना जाता है। खाद्यान्न फसलों में प्रायः इन तत्वों की उपलब्धता बहुत कम या फिर न के बराबर होती है। वर्तमान समय में बढ़ती आबादी के साथ–साथ लोगों में स्वास्थ्य के प्रति बढ़ती जागरुकता के कारण सब्जियों की माँग भी बढ़ रही है, जिसके कारण सब्जियों के बाजार भाव अन्य फसलों की अपेक्षा अधिक होते हैं। इसके अलावा प्रति इकाई क्षेत्र व समय के हिसाब से भी किसानों के लिए सब्जी उत्पादन एक लाभकारी व्यवसाय है।

वर्तमान में कुल 16.3 करोड़ टन सब्जी उत्पादन के साथ हमारा देश चीन के बाद विश्व का दूसरा सबसे बड़ा सब्जी उत्पादक देश है, परंतु प्रति हेक्टेयर उत्पादन की दृष्टि से हमारा देश (17.5 टन/हेक्टेयर) और खासकर राजस्थान राज्य (7.5 टन/हेक्टेयर) कई देशों की तुलना में, यहाँ तक विश्व औसत (19.5 टन/हेक्टेयर) से काफी पीछे है अर्थात यहाँ सब्जी फसलों की उत्पादकता काफी कम है। इसके विपरीत विभिन्न कारणों से सब्जियों की माँग बढ़ रही है। इसलिए वर्तमान परिदृश्य में सिमटती भूमि पर अधिक सब्जी उत्पादन लेने हेतु प्रति इकाई उत्पादन बढ़ाना अत्यंत आवश्यक है, जिसके लिए यथासंभव उन्नत और नवीनतम तकनीकियों का इस्तेमाल करना जरूरी है।

इस अध्याय में व्यावसायिक सब्जियों के उत्पादन बढ़ाने के लिये नवीनतम तकनीक विषयों का वर्णन किया गया है जिसे किसान भाई अमल में लाकर व यथासंभव अपनाकर अपनी सब्जी फसल की उत्पादकता बढ़ा सकते हैं। इसका विवरण निम्नवत दिया गया है।

## उन्नत किस्मों व बीजों का चुनाव

आज भी हमारे देश के विभिन्न भागों में काफी किसान देशी अथवा क्षेत्रीय किस्मों का इस्तेमाल करते हैं जिसका उत्पादन काफी कम होता है। दूसरा, वर्ष दर वर्ष अपने या पड़ोसी किसान द्वारा तैयार किए हुए बीज का इस्तेमाल भी कम उत्पादन का कारण है। इसलिए मुक्त–परागित किस्मों के बीज 2–3 वर्षों के अंतराल पर जबकि संकर किस्मों के बीज हर बार नया उपयोग में लेना चाहिए। कृषि अनुसंधान केन्द्रों अथवा कृषि विश्वविद्यालयों द्वारा उस क्षेत्र के लिए संस्तुत किस्मों का ही चुनाव करना चाहिए।

टमाटर की उन्नत किस्म पर लगे फल

चूंकि बीज किसी भी फसल के सफल उत्पादन का आधारभूत हिस्सा है, अतः बुआई के लिए उपयोग में लाये जाने वाले बीज की किस्म के साथ उसकी गुणवत्ता सुनिश्चित करना अत्यंत आवश्यक है। यदि किसान भाई मुक्तपरागित अर्थात सामान्य किस्मों के बीज स्वयं तैयार कर रहे हों तो इसके गुणवत्तापूर्ण उत्पादन हेतु फसल विशेष के लिए संस्तुत उन्नत विधियाँ अपनाएँ। सही समय व तरीके से बीज की बुआई, किस्मों के बीच न्यूनतम पृथक्करण दूरी, उचित खरपतवार, रोग व कीट नियंत्रण, सही समय पर बीज फसल की कटाई व बीज अलग कर सुखाने तथा बीज की पैकिंग व भंडारण आदि को निर्देशित तरीके से अपनाना चाहिए। संकर बीज का उत्पादन आमतौर पर करना आसान नहीं होने के कारण इनके बीज विश्वसनीय स्रोत से ही खरीदें।

## उन्नत सब्जी पौध उत्पादन

बीज की भाँति प्रतिरोपित अथवा रोपण (रोपनी) द्वारा उगाई जाने वाली फसलों की उन्नत तरीके से तैयार की गयी पौध भी अच्छे उत्पादन का मुख्य आधार है। खासकर सब्जी फसलों के उत्पादन में उत्तम गुणवत्ता वाली पौध का होना अत्यंत आवश्यक है। सब्जी फसलें जिनकी पौध पहले

पौधशाला में तैयार की जाती है और बाद में तैयार पौध की रोपाई मुख्य खेत में की जाती है उनमें टमाटर, मिर्च, बैगन, फूल गोभी, पत्ता गोभी व गांठ गोभी, ब्रोकोली, सलाद, प्याज, आदि प्रमुख हैं।

इनके अलावा आमतौर पर सीधे खेत में बीज से बुआई की जाने वाली कद्दूवर्गीय कुल की सब्जियों (जैसे–खीरा, खरबूजा, तरबूज, लौकी, तोरी आदि) की गर्मी की अगेती फसल लेने हेतु या फिर ग्रीनहाउस में (जैसे खीरा, खरबूजा) उत्पादन हेतु इनकी पौध पहले मिट्टी आधारित पॉलिथीन की थैलियों में या फिर मिट्टी रहित माध्यम में प्लास्टिक की 'प्रो–ट्रे' या 'सीडलिंग–ट्रे' में तैयार की जाती है।

गुणवत्तापूर्ण उन्नत सब्जी की नर्सरी

## मिट्टी आधारित क्यारी में पौध उत्पादन

आमतौर पर किसान भाई परंपरागत तरीके से भूमि या मिट्टी आधारित क्यारी में सब्जियों की पौध तैयार करते हैं। मिट्टी में उन्नत पौध तैयार करने के लिए पौधशाला के स्थान के चुनाव से लेकर उपयुक्त मिट्टी, खाद, उर्वरक, आवश्यक यंत्र, उन्नत प्रजाति के बीज, सिंचाई के उचित साधन, बीज बुआई, बीमारी व कीड़ों से बचाव के लिए उचित प्रबन्धन व पौधो को ढकने के लिए विभिन्न प्रकार की जाली इत्यादि की आवश्यकता पड़ती है जिनका विवरण इस प्रकार है।

सब्जियों की स्वस्थ पौध तैयार करने के लिए क्यारी में बढ़वार का उचित माध्यम का होना आवश्यक है ताकि नवविकसित पौधो की जड़े भूमि में अच्छी तरह पकड़े रहें व उचित विकास के लिए आवश्यक पोषण प्राप्त कर सकें। मिट्टी की भौतिक व रासायनिक संचरना अच्छी होनी चाहिए ताकि वे पौधों को सुगमतापूर्वक स्थिर रख सकें। मिट्टी का पीएच मान 6.5–7.5 के बीच सर्वोत्तम होता है। यदि मिट्टी का पीएच मान अधिक हो तो मिट्टी जाँच के आधार पर उसमें जिप्सम व कार्बनिक खाद मिलाएं। मिट्टी में उचित जलधारण करने की क्षमता व वायुसंचार अच्छा होना चाहिए। पौधशाला का स्थान खरपतवार, हानिकारक रोग, कीटाणुओं, सूत्रकृर्मी, इत्यादि से मुक्त होना चाहिए। इस हेतु प्रयुक्त सामग्री स्थानीय स्तर पर सस्ते दरों पर उपलब्ध होनी चाहिए।

उठी हुई क्यारी में सब्जी पौध उत्पादन

## पौधशाला की तैयारी

पौध उगाने के लिए कार्बनिक खाद जैसे कम्पोस्ट खाद, गोबर की सड़ी खाद व केंचुए की खाद उपयुक्त होती हैं। इनमें पौधों के लिए आवश्यक लगभग सभी तत्व पाये जाते हैं तथा पौधों के उचित विकास में सहायक होते हैं। इनके प्रयोग से मृदा के भौतिक संरचना सुधरती है और जलधारण करने की क्षमता बढ़ती है। यह ध्यान रखना चाहिए कि ये सभी खादें अच्छी प्रकार से सड़ी हुई होनी चाहिए। पौधशाला में प्रयोग की जा रही खाद को महीन करके जाली की सहायता से छान लें तथा छनी हुई खाद पौध उगाने के लिये प्रयोग करें।

पौधशाला की क्यारी (बीजशैया) की तैयारी हेतु प्रति वर्ग मीटर की दर से 2 कि.ग्रा. सड़ी हुई गोबर की खाद या 500 ग्राम केंचुए की खाद डाल कर मिट्टी में अच्छी प्रकार मिला दें। इससे बीज के जमाव में सुगमता होती है। मिट्टी में मौजूद हानिकारक रोगाणुओं व कीटाणुओं आदि को नष्ट करने हेतु भूमि शोधन अत्यन्त आवश्यक है, अन्यथा मिट्टी में पहले से उपस्थित ये हानिकारक जीव पौधों को क्षति पहुँचाते हैं जो न केवल नर्सरी पौध तक ही सीमित रहते हैं बल्कि खेत में रोपण के पश्चात् भी पौधों को हानि कर सकते हैं। भूमि शोधन मृदा सौर्यीकरण विधि, जैविक विधि या फिर रासायानिक विधि से किया जा सकता हैं। मृदा सौर्यीकरण अत्यंत सरल प्रक्रिया है। गर्मियों में गहरी जुताई कर तेज धूप से हानिकारक जीवों को नष्ट किया जा सकता है अथवा पानी से तर किए हुये खेत को 30 माइक्रोन की पारदर्शी पॉलिथीन से 3–4 सप्ताह तक

ढँककर या फिर फोर्मलीन के 2 प्रतिशत घोल से तर करने के पश्चात पॉलिथीन से 2–3 सप्ताह तक ढँक करके, कर सकते हैं। चाहे भूमि शोधन किया गया हो या नहीं, बुआई से पूर्व पौधशाला की क्यारी की मिट्टी को फफूँदनाशी जैसे ट्राइकोडर्मा की 1 कि.ग्रा. मात्रा 25 कि.ग्रा. गोबर की खाद के साथ 4–5 दिन गीले जूट की बोरी से ढकने के बाद मिट्टी में छिड़क कर मिलाना चाहिए अथवा कैप्टान या थाइराम (5 ग्राम/वर्ग मी.) रसायन से उपचारित करना चाहिए। नर्सरी में कीटों के प्रकोप से बचाव हेतु कार्बोफ्यूरान या क्लोरपाइरीफॉस (5 ग्राम/वर्ग मी.) को क्यारी की तैयारी करते समय मिट्टी में अच्छी प्रकार से मिला देना चाहिए।

मृदा सौर्यीकरण द्वारा नर्सरी भूमि का उपचार

## बीज उपचार एवं बुआई

पौधशाला में बीजों की बुआई करने के लिए क्यारियाँ मौसम के अनुसार अलग–अलग प्रकार से बनाई जाती हैं। वर्षा ऋतु में हमेशा क्यारियाँ जमीन की सतह से 12–15 से.मी. ऊँची बनानी चाहिए जबकि रबी तथा गर्मी के मौसम में पौध समतल क्यारियों में भी उगा सकते हैं। ऊँची क्यारियों में पौध का विकास अच्छी प्रकार होता है। क्यारियों की चौड़ाई 2–3 फीट और लम्बाई आवश्यकतानुसार 3 से 4 मीटर रखते हैं। गर्मियों में तेज धूप व अधिक गर्मी से बचाने के लिए छायादार जाली से क्यारियों को ढ़ंकना चाहिए। इसके अलावा सर्दी में पॉलीहाउस के अन्दर क्यारियों में पौध तैयार करनी चाहिए।

बीज यदि पहले से उपचारित न हों तो उन्हें फफूँदनाशी से उपचारित करने के बाद ही बोना चाहिए जिसे कैप्टान या थायराम नामक फफूंद जनित पाउडर से 2–3 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करना चाहिए। मिर्च तथा बैंगन के बीज का शोधन कार्बेण्डाजिम (बाविस्टीन 2.5 ग्राम/कि.ग्रा. बीज) से करना बहुत लाभकारक होता है। इसके लिए दवा व बीज बर्तन में डालकर ढक्कन बंद कर दे और अच्छी प्रकार से हिलाएं ताकि दवा बीज के चारों तरफ अच्छी प्रकार चिपक जाय। कुछ सब्जियाँ जैसे टिंडा, करेला, तरबूज इत्यादि में छिलके कठोर होते हैं जिनकी बुआई 12–24 घंटे तक पानी में भिगोकर सुखाने के पश्चात् ही बोना चाहिए।

कतारों में सब्जी बीज की रोपाई

बीज की बुआई कतारों में करनी चाहिए इससे सभी पौधे लगभग एक समान दूरी पर रहने से स्वस्थ व मजबूत होते हैं। इसके लिए सर्वप्रथम क्यारी की चौड़ाई के समान्तर 5 से.मी. की दूरी पर 0.5 से.मी. गहरी पंक्तियाँ बना लेते हैं तथा इन्हीं पंक्तियों में बीज 1 से.मी. की दूरी पर डालते हैं। क्यारियों में बीज बुआई करने के बाद उनको ढकना अत्यन्त आवश्यक है। बीज बोने के बाद उन्हें सड़ी हुई गोबर या कम्पोस्ट की खाद व बालू तीनों को बराबर अनुपात में मिलाकर (1:1:1) क्यारी में इस प्रकार डालें ताकि सभी बीज ढँक जाए और बीज खुला न दिखाई पड़े। क्यारी में बीजों को मिश्रण से ढँकने के बाद स्थानीय स्तर पर उपलब्ध घास–फूस की पतली तह से ढँकते हैं ताकि नमी बनी रहे और सिंचाई करने पर पानी सीधे ढँके हुए बीजों पर न पड़े अन्यथा बीज का जमाव प्रभावित होगा। शुरू के 5–6 दिनों तक हजारे की सहायता से हल्की सिंचाई करें ताकि मिट्टी ज्यादा पानी पाकर बैठ ना जाए। बीज बुआई के बाद घास–फूस की परत ढँकी क्यारियों को अंकुरण के बाद समय से हटा लेना चाहिए। यह सावधानी पूर्वक देखना चाहिए कि जैसे ही 50 प्रतिशत बीजों से सफेद धागेनुमा आकार निकलता दिखे घास–फूस जिससे भी क्यारी ढँकी हों हटा लें अन्यथा मूलांकुर बड़ा होने पर पौधा कमजोर होकर जड़ के पास से ही गल कर गिर जाता है। कीटों के प्रकोप व इनके द्वारा प्रसारित विषाणुजनित रोगों से बचाव हेतु पौधों की क्यारी 40 मेस वाली नायलान जाली की बनी संरचना के अंदर करनी चाहिए। इससे पौध स्वस्थ व बीमारी रहित तैयार होगी।

सब्जियों की पौध काफी नाजुक होती है, अतः संभव हो तो सिंचाई हेतु अच्छी गुणवत्ता वाले पानी का ही इस्तेमाल

करना चाहिए। बीज जमने के बाद आवश्यकतानुसार क्यारिओं के बीच नालियों से सिंचाई करते रहते हैं। बीजशैया तैयार करते समय खरपतवारनाशी जैसे स्टाम्प की 3 मिली मात्रा/लीटर पानी की दर से घोलकर बीज बुआई के 48 घंटे के अन्दर अच्छी तरह भूमि पर समान रुप से छिड़क देते हैं। इससे खरपतवार की समस्या का नियंत्रण हो जाता है और यदि बाद में कोई खरपतवार उगते हैं तो उन्हें निकाल देते हैं। इसके अलावा क्यारियों में यदि खरपतवार उग आयें तो उन्हें बराबर निकलते रहना चाहिए।

यदि बढ़वार की अवस्थाओं में पौधों में पोषक तत्वों की कमी का आभास हो तो घुलनशील उर्वरक जैसे एन.पी.के. (19:19:19) की 2 ग्राम मात्रा प्रति लीटर पानी में घोल कर एक सप्ताह के अन्तराल पर पौधों पर पर्णीय छिड़काव करें। यदि खेत की मिट्टी में उपजाऊपन अधिक हो और पौधा बहुत तेजी से विकास कर रहा हो तो सिंचाई कम करनी चाहिए।

## प्रो–ट्रे (मिट्टी रहित माध्यम) में पौध उत्पादन

अपेक्षाकृत अधिक सफल–स्वस्थ व समान वृद्धि वाली सब्जियों की पौध प्लास्टिक की बनी प्रो–ट्रेज में तैयार की जाती है। इसे 40–60 मेस की कीट–अवरोधी नायलान जाली युक्त ग्रीन/पॉलीहाउस के अंदर या फिर खुले में भी कर सकते हैं। बाजार में प्रो–ट्रेज विभिन्न आकार के प्लग या छिद्रों व इनकी संख्या के आधार पर बेंची जाती है। इसमें आमतौर पर 98 छिद्र वाली ट्रे (आकार 30X20X35 मिमी.) टमाटर, बैंगन, मिर्च के लिए, और 50 छिद्र वाली (40X30X45 मिमी. आकार) खीरा, खरबूजा, तरबूज, लौकी, कद्दू इत्यादि के लिए उपयुक्त होती हैं।

प्रो-ट्रेज में सब्जी पौध उत्पादन

प्रो–ट्रेज के लिए प्रयुक्त माध्यम में कोकोपिट (नारियल का बुरादा) प्रमुख है, जिसे वर्मीकुलाइट व परलाइट के साथ 3:1:1 के अनुपात के मिश्रण में प्रयोग करते हैं। इसके अलावा कोकोपिट को केचुएँ की खाद के साथ 4:1 के अनुपात में भी प्रयुक्त किया जा सकता है। प्रो–ट्रेज में सब्जियों के बीज की बुआई एक बीज प्रति छिद्र करते हैं। बुआई के पश्चात ट्रेज को 2–3 दिनों (अंकुरण होने से पूर्व) तक पॉलिथीन से ढंक देते हैं, इससे जमाव उत्तम व जल्दी होता है। एहतियात के तौर पर बीज जमाव के लगभग एक सप्ताह बाद कार्बेण्डाजिम् + मेंकोजेब के मिश्रित रसायन की 2–2.5 ग्राम/लीटर के दर से पौधो की जड़ों को तर करने से नर्सरी के फफूंद जनित रोग जैसे आर्द्रपतन (डैम्पिगं ऑफ) के प्रकोप से बचा जा सकता है। एक छिडकाव कीटनाशी इमिडाक्लोप्रिड या थायमेथोक्साम (0.3–0.5 ग्राम/ली.) का कर सकते हैं। पोषण हेतु पौधों को एन.पी.के. (19:19:19) की 2 ग्राम/लीटर पानी के घोल की दर से एक सप्ताह के अन्तराल पर पौधों पर पर्णीय छिड़काव करना चाहिए। मिट्टी की अपेक्षा प्रो–ट्रेज में पौधो की जड़ व तने का विकास तेजी से व समान होता है जिससे पौध लगभग एक सप्ताह पूर्व तथा एक साथ तैयार तैयार हो जाती हैं।

प्रो-ट्रेज हेतु मिट्टी रहित माध्यम-
परलाइट, वर्मीकुलाइट एवं कोकोपीट

बदलते परिवेश में देखा जा रहा है कि किसानों को उन्हीं सब्जियों की अच्छी कीमत मिल पाती है जो सब्जियाँ सबसे पहले बाजार में आ जाती हैं। जैसे–जैसे सब्जियों की अधिक मात्रा बाजार में आने लगती है उनकी कीमत कम होने लगती है। ऐसी परिस्थिति में यदि समय से पूर्व सब्जियों की पौध तैयार करके कद्दूवर्गीय सब्जियों की अगेती खेती की जाय तो काफी लाभदायक सिद्ध हो सकता है। इसके लिए दिसम्बर–जनवरी माह में तैयार की गयी पौध का ही इस्तेमाल किया जाता है। जिसे फरवरी माह में तापमान अनुकूल होते ही रोपण हेतु प्रदान किया जा सकता है। इससे अगेती खेती करने वाले किसान को अन्य की तुलना में एक से डेढ़ माह पूर्व फलत लेकर अच्छी आमदनी प्राप्त कर सकते हैं। इसके लिए प्रो –ट्रेज (50 छिद्र वाली) या फिर पॉलिथीन की थैलियों (6X4 इंच आकार) में किसी पॉलीहाउस या प्लास्टिक संरचना के अंदर तैयार की गयी पौध का इस्तेमाल कर सकते हैं जो नर्सरी में आसानी से संभव है।

पॉलीथिन की थैलियों में सब्जी पौध उत्पादन

## रोपाई से पूर्व सब्जी–पौध का उपचार (स्टार्टर ट्रीटमेन्ट)

रोपाई से पूर्व कुछ समय तक पौधों की जड़ों को मुख्य पोषक तत्वों (एन.पी.के.) के घोल से तर करने से पौधों की बढ़वार और उत्पादन बेहतर होता है। इसके अलावा ट्राइकोडर्मा, एजोटोबेक्टर, माइकोराइजा जैसे जैव कारक आदि से भी उपचारित करने के बाद रोपाई करने से फसल उत्पादन में बढ़ोत्तरी होती है साथ ही उत्पाद की गुणवत्ता में भी वृद्धि होती है। पौधों की जड़ों को रोपाई से पूर्व इमिडाक्लोप्रिड (1 मिली/ली) के घोल में डुबोकर उपचारित करने से पौधो में कीट अवरोधिता बढ़ जाती है। कभी–कभी कुछ विशिष्ट परिस्थितियों में कुछ विशेष प्रकार के वृद्धि नियामकों का इस्तेमाल भी सब्जी–फसल उत्पादन में लाभकारी पाया गया है।

## ड्रिप या टपक/बूंद–बूंद सिंचाई

लगभग सभी प्रकार की सब्जी फसलें पंक्तियों में उगाई जाती हैं और इनमें टपक सिंचाई पद्धति का इस्तेमाल आसानी से किया जा सकता है।

सब्जी फसल में ड्रिप सिंचाई प्रणाली

इस विधि में पानी पौधों की जड़ों के पास दिया जाता है, इसलिए परंपरागत सतही सिंचाई विधि की अपेक्षा टपक पद्धति से सिंचाई करने से लगभग 40 से 60 प्रतिशत तक पानी की बचत की जा सकती है। पौधों को उपयुक्त मात्रा में व लगातार पानी मिलते रहने से उनकी वृद्धि व विकास भी उत्तम होता है जिससे उत्पादन व उसकी गुणवत्ता भी बेहतर होती है। इस विधि द्वारा पानी के साथ पानी में घुलनशील उर्वरकों तथा अन्य रसायनों का भी प्रयोग आसानी से किया जा सकता है, जिससे उनकी उपयोग दक्षता काफी अच्छी होती है। इसके अलावा पंक्तियों के बीच के स्थान में पानी न मिलने के कारण खरपतवार की समस्या भी काफी कम होती है और कीड़े व बीमारियाँ भी अपेक्षाकृत कम लगती हैं। इस पद्धति से सिंचाई करने से सिंचाई के लिए अतिरिक्त मजदूर की आवश्यकता नहीं पड़ती है।

## मल्च /पलवार

मल्च यानि पलवार का इस्तेमाल पौधों की जड़ों के पास के वातावरण को अनुकूल बनाने के लिए करते हैं। यह खरपतवार को नियंत्रित करने तथा जल संरक्षण में भी मदद करता है। सब्जी फसलों में व्यावसायिक स्तर पर पलवार के रूप में विभिन्न रंगों वाली सामान्यतः 25–30 माइक्रोन की प्लास्टिक फिल्म का इस्तेमाल किया जाता है। किसान भाई स्थानीय स्तर पर उपलब्ध फसलों के अवशेष, घास–फूस, पौधों की सूखी पत्तियाँ, आदि का प्रयोग कर सकते हैं। ड्रिप सिंचाई प्रणाली के साथ पलवार के प्रयोग से अपेक्षाकृत अधिक जल बचत, पौधों के उत्तम विकास व उत्पादन के साथ–साथ साफ तथा गुणवत्तापूर्ण उत्पाद प्राप्त किया जा सकता है, जिससे अपेक्षाकृत किसानों को उनके उत्पाद का बाजार भाव भी अधिक मिलता है।

सब्जी उत्पादन में मल्च का प्रयोग

## नियंत्रित वातावरण में सब्जी उत्पादन

खुले खेत में बाह्य कारको के प्रतिकूल प्रभाव से बचाव करते हुए प्रति इकाई क्षेत्र व समय अधिकतम सब्जी उत्पादन प्राप्त करने के लिए संरक्षित खेती एक अति लाभकारी विकल्प है। विभिन्न प्रकार की संरचनाएं पौधों की आवश्यकता के अनुरूप उसके आस–पास का वातावरण सुनिश्चित कराती हैं जिससे इनका उत्पादन बाहर की अपेक्षा काफी अधिक होता है। इनमें कई तो स्थाई (पॉलीहाउस, वॉक–इन टनेल, नेटहाउस) जिनकी शुरूआती लागत काफी अधिक होती हैं। वहीं कुछ अस्थाई (लो–टनेल/रो–कवर) संरचनाएं हैं जो काफी सस्ती होती हैं जिन्हें छोटे किसान भी आवश्यकतानुसार प्रयोग में लाकर अच्छा उत्पादन लेकर लाभ कमा सकते हैं। इसके बारे में विस्तृत विवरण अगले अध्याय में किया गया है।

## ग्राफ्टेड पौध से सब्जी उत्पादन

बहुवर्षीय फल–वृक्षों के विपरीत, सब्जियों में ग्राफ्टिंग का उपयोग एक नवाचार है। चूंकि आमतौर पर उत्तम उत्पादन व गुणवत्ता की क्षमता वाली व्यावसायिक किस्में सामान्य दशा में तो अच्छी चलती हैं परंतु किसी विशेष प्रतिकूल परिस्थिति (जैविक व अजैविक कारकों) होने पर इनकी उत्पादन क्षमता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है अर्थात इनका उत्पादन कम होता है। इस दशा में इन किस्मों के तने (शांकुर–ऊपरी भाग) को प्रतिकूल परिस्थिति के प्रति उपयुक्त कठोर या असहिष्णु चयनित किस्म (मूलवृंत– देशी/जंगली या विशेष परिस्थिति के प्रति तैयार किस्म) के तने के ऊपर ग्राफ्टिंग प्रक्रिया द्वारा पौधों की शुरूआती अवस्था में जोड़ा जाता है। इस तरह तैयार पौधें में दोनों पौधों के विशिष्टतम गुण आ जाते हैं और इसमें प्रतिकूल परिस्थितियों से लड़ने की क्षमता बढ़ जाती है तथा इनके कारण उन परिस्थितियों में भी उत्पादन व गुणवत्ता में अपेक्षाकृत कमी कम होती है।

ग्राफ्टिंग द्वारा सब्जी पौध उत्पादन

ग्राफ्टिंग पद्धति टमाटर कुल की सब्जियों जैसे टमाटर, बैंगन, मिर्ची तथा कद्दू वर्गीय सब्जियों जैसे खीरा, खरबूजा, तरबूज व करेला में काफी उपयुक्त पायी गयी है। खासकर पॉलीहाउस में जहां मृदा जनित व्याधाएँ जैसे फफूँद, सूत्रकृमि आदि की समस्या काफी अधिक होती है, के लिए ग्राफ्टिंग एक कारगर तकनीक के रूप में उभर के आई है। ग्राफ्टिंग एकीकृत फसल प्रबंधन का एक प्रमुख अंग कहलाती है क्योंकि विशिष्ट मूलवृंत पर तैयार ग्राफ्टेड पौधों के इस्तेमाल से काफी हद तक रसायनों के इस्तेमाल में भी कमी की जा सकती है। ग्राफ्टेड पौधें तैयार करना मुश्किल काम नहीं है बस इसमें कुछ विशेष सावधानी रखने की जरूरत पड़ती है, जैसे सही शांकुर किस्म व मूलवृंत का चुनाव, उचित बीज बुआई समय तथा समय पर ग्राफ्टिंग प्रक्रिया, ग्राफ्ट जोड़ सफल होने के लिए उचित तापक्रम व नमी बनाए रखना, कठोरीकरण व्यवस्था, आदि।

ग्राफ्टेड खीरे का पौधा

इस दिशा में काजरी में हुए शोध में खीरे को कद्दू, लौकी, फिग–लीफ गार्ड के मूलवृंत पर सफलतापूर्वक (90–95 प्रतिशत) ग्राफ्ट किया गया है, और इसमें फिग–लीफ गार्ड के मूलवृंत पर ग्राफ्ट करने से सामान्य दशा में खीरे की अगेती उपज में लगभग 30 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गयी है। इसके अलावा टमाटर में गर्मी (>40 डिग्री सेन्टीग्रेड तापक्रम) के प्रति कठोरता पाई गयी है। इसी प्रकार भारतीय बागवानी एवं भारतीय सब्जी अनुसंधान केन्द्र (बेगंलुरू व वाराणसी) में हुए शोधों में बैंगन पर ग्राफ्ट करने से टमाटर के पौधों में जलमग्नता के प्रति सहनशीलता अधिक पायी गयी।

## मृदा–रहित सब्जी उत्पादन (हाइड्रोपोनिक्स)

हाइड्रोपोनिक या मृदा–रहित उत्पादन पद्धति एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें पौधें अपने वृद्धि व विकास के लिए आवश्यक पोषक तत्वों के लिए मिट्टी पर नहीं बल्कि पोषक तत्व घोल पर निर्भर रहते हैं। पौधों को सहारा देने के लिए विभिन्न पदार्थों

जैसे बालू–रेत, कंकड़, नारियल का बुरादा (कोको–पीट), परलाइट, आदि को किसी गमले, बैग, ट्रफ, नलिका, टंकी, आदि, जिसमें पोषण–घोल का बहाव आसानी से बना रह सके, में भरकर उनमें पौधें लगाए जाते हैं। इस पद्धति में पौधे मृदा संबन्धित व्याधाओं के प्रकोप से बचे रहते हैं और उत्पाद भी उच्च कोटि का प्राप्त होता है।

**मृदा–रहित माध्यम में सब्जी उत्पादन**

ऐसे स्थान जहाँ की मिट्टी की गुणवत्ता किसी कारण से फसल उत्पादन हेतु उपयुक्त न हो जैसे– मृदा क्षारीयता या अम्लीयता, सूत्रकृमि व फंफूद जनित रोगों के प्रकोप, इस पद्धति के उपयोग से खेती सम्भव है।

इसके अलावा इस पद्धति की जल उपयोग दक्षता भी सर्वाधिक होती है। यह पद्धति कुछ मूलभूत सावधानियों जैसे पौधों की किस्म व अवस्था के अनुसार पोषक तत्वों की उचित मात्रा का प्रवाह, घोल का पी एच मान (5.8 से 6.5 के मध्य व ई.सी. 2 के आस–पास), पोषण घोल में उचित वायु संचार, आदि को ध्यान में रखकर इसे आसानी से प्रयोग किया जा सकता है। हाइड्रोपोनिक पद्धति से तैयार सब्जियाँ अपेक्षाकृत अधिक स्वच्छ, आकर्षक व गुणवत्ता वाली होती हैं जिसके कारण इनका बाजार मूल्य भी अपेक्षाकृत अधिक मिलता है। इसका उपयोग पश्चिमी देशों में सब्जी व फूल उत्पादन में काफी हो रहा है।

# सब्जियों की संरक्षित खेती

**अनुराग सक्सेना, प्रतापसिंह खापटे एवं प्रदीप कुमार**
केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर

संरक्षित खेती वर्तमान संदर्भ में कृषि की सबसे आशाजनक क्षेत्रों में से एक है। यह मुख्य रूप से भोजन, पोषण और आर्थिक सुरक्षा के लिए बागवानी और सजावटी फसलों के स्थानीय और निर्यात दोनों मांग के लिए उच्च तकनीक और गहन प्रथाओं को शामिल, आगामी एक और वैकल्पिक उत्पादन प्रणाली है। आमतौर पर शुष्क व अर्द्ध–शुष्क क्षेत्रों में खुले खेत में फसल उत्पादन में बाह्य कारकों जैसे तेज धूप, अत्यधिक गर्मी, अत्यधिक गर्म व सर्द हवा, पाला व ओला तथा पक्षियों व जंगली जीव–जन्तुओं आदि से खासकर सब्जी फसलों को काफी नुकसान पहुँचता है। इस दशा में सब्जी फसल उत्पादन के लिए संरक्षित खेती एक उपयोगी पद्धति है।

संरक्षित खेती के अन्तर्गत विभिन्न प्रकार की संरचना जैसे पॉलीहाउस (प्लास्टिक के हरित गृह), नेटहाउस, लो–टनेल आदि आती हैं जो बाह्य वातावरण के प्रति प्रतिकूल होने के बावजूद इनके भीतर उगाये गये पौधों का संरक्षण करती हैं। यहाँ तक की भीतर के वातावरण को पौधो की वृद्धि व विकास के प्रति अनुकूल रखने में मदद करते हैं, जिससे इनमें ली जाने वाली फसल का उत्पादन अच्छा होता है। इनका उपयोग बेमौसमी नर्सरी तथा बेमौसमी या वर्षभर फसलोत्पादन के लिए किया जाता है। इनमें उत्पादित फसल अच्छी गुणवत्ता वाली होती है। इनमें पॉलीहाउस उत्पादन प्रौद्योगिकी काफी प्रचलित है जिसे पहले ही देश के कई हिस्सों में अपनाया जा चुका है।

संरक्षित खेती से प्रति इकाई क्षेत्र सालाना आमदनी खुले खेत में खेती की तुलना में कई गुना होती है। संरक्षित खेती पानी और भूमि के कम उपयोग को सुनिश्चित करती है और यह जलवायु परिवर्तन के मौजूदा परिदृश्य के तहत अत्यंत महत्वपूर्ण होती जा रही है। संरक्षित खेती के अंतर्गत सब्जियों को वर्ष भर उगाया जा सकता है। यह खेती पद्धति आवश्यकताओं के अनुरूप ताजा उपज मांग को पूरा करने, बेरोजगार युवकों के लिए, पर्यावरण के लिए, सीमांत से लेकर बड़े किसानों के लिए काफी उपयुक्त है।

वैसे संरक्षित खेती के अंतर्गत कई सारी संरचनाएँ आती हैं, जिनमें पॉलीहाउस अति महत्वपूर्ण है।

## ग्रीनहाउस/पॉलीहाउस

ग्रीनहाउस/पॉलीहाउस का इस्तेमाल आमतौर पर ठंडे इलाकों में सर्दियों के मौसम में जब बाहर फसल लेना संभव नहीं होता था तब किया जाता था, परन्तु आजकल पश्चिमी राजस्थान में जहां गर्मियों में तापक्रम 45 डिग्री सेन्टीग्रेड से भी अधिक चला जाता है वहाँ भी इसका सफलतम उपयोग होता देख सकते हैं। इसकी वजह इसकी संरचना व बनावट में आए बदलाव है। आज पॉलीहाउस के अंदर के तापमान को कम करने के लिए शेड नेट व फौगर, जबकि कहीं–कहीं तो बाहर की हवा को ठंडा कर अंदर तथा अंदर की गर्म हवा बाहर फेंकने वाले पंखे का भी इस्तेमाल किया जा रहा है। इसकी

काजरी में सौर ऊर्जा आधारित फैन–पैड पॉलीहाउस

वजह से पूरे वर्षभर सब्जी की फसलें खासकर खीरा, टमाटर व शिमला मिर्च की खेती कर पाना संभव हो गया है। पॉलीहाउस के अंदर आमतौर पर सीधी बढ़वार (एकल तना) वाली या लता वाली फसलों व किस्मों का चयन किया जाता है जो जमीन की सतह पर फैलने के विपरीत सीधी ऊंचाई में बढ़वार कर सके और जिससे अधिक उत्पादन प्राप्त किया जा सके। खीरे में ऐसी किस्में हैं जिनमें केवल मादा फूल ही आते हैं और उनमें परागण की आवश्यकता भी नहीं होती। जबकि टमाटर व मिर्च में सीधी बढ़ने वाली किस्में उपलब्ध हैं परन्तु उनमें परागण की आवश्यकता होती है। परागण की प्रक्रिया खासकर टमाटर में मधुमक्खियों या बंबल मक्खी द्वारा अथवा हाथ से फूलों के गुच्छों को हिलाकर या फिर बाइब्रेटर के इस्तेमाल से किया जाता है।

आजकल विभिन्न सरकारी स्कीमों जैसे राष्ट्रीय बागवानी मिशन (एन.एच.एम./एम.आई.डी.एच.), राष्ट्रीय बागवानी बोर्ड, नाबार्ड आदि के अंतर्गत अच्छी मात्रा में किसानों को पॉलीहाउस लगाने के लिए प्रेरित किया जा रहा है। इसके लिए 50 से लेकर 75 प्रतिशत तक का अनुदान (सब्सिडी) दिया जा रहा है। आमतौर पर एक एकड़ में स्व–वातानुकूलित पॉलीहाउस लगाने का प्रति वर्ग मीटर का खर्च लगभग 850 रूपये आता है, जबकि हाई–टेक पॉलीहाउस का खर्च 2000–2500 रूपये व शेड–नेट का खर्च 700 से 750 रूपये प्रति वर्ग मीटर के बीच आता है।

## पॉलीहाउस की संरचना

ढाँचे की बनावट के आधार पर पॉलीहाउस कई प्रकार के होते हैं जैसे गुम्बदाकार, गुफानुमा, रूपान्तरित गुफानुमा, झोपड़ीनुमा, आदि। ढाँचे के लिए आमतौर पर जी.आई. पाइप या एंगिल आयरन का प्रयोग करते हैं जो मजबूत एवं टिकाऊ होते हैं। अस्थाई तौर पर बाँस के ढाँचे पर भी पॉलीहाउस निर्मित किए जा सकते हैं जो सस्ते पड़ते हैं। आवरण के लिए 600–800 गेज (150–200 माइक्रोन) की मोटी पराबैगनी प्रकाश प्रतिरोधी प्लास्टिक शीट का प्रयोग किया जाता है। इनका आकार आवश्यकतानुसार रखा जा सकता है।

निर्माण लागत तथा वातावरण पर नियंत्रण की सुविधा के आधार पर पॉलीहाउस तीन प्रकार के होते हैं।

**लो कास्ट पॉलीहाउस या साधारण पॉलीहाउस:** इसमें यन्त्रों द्वारा वातावरण पर किसी प्रकार का कृत्रिम नियंत्रण नहीं किया जाता।

**मीडियम कास्ट पॉलीहाउस:** इसमें वातावरण (ठण्डा या गर्म करने के लिए) साधारण उपकरणों का ही प्रयोग करते हैं।

**हाई कास्ट पॉलीहाउस:** इसमें आवश्यकता के अनुसार तापक्रम, आर्द्रता, प्रकाश, वायु संचार आदि को घटा–बढ़ा सकते हैं और मनचाही फसल किसी भी मौसम में ले सकते हैं।

फसल उत्पादन और उपज की गुणवत्ता बढ़ाने के लिए निम्न संरचनाओं का उपयोग किया जाता है

## प्लास्टिक लो–टनेल या रो–कवर

प्लास्टिक लो–टनेल या रो–कवर पारदर्शी पॉलीथिन (30 माइक्रोन) की एक ऐसी संरचना होती हैं जो सर्दी के दिनों में नाली/पंक्ति या बेड में बोये या रोपित पौधों को लोहे या लकड़ी के अर्ध–चंद्राकार खांचे या हुक्स पर ढंके होती हैं। बाहर की अपेक्षा लो–टनेल के अंदर का वातावरण अधिक गर्म रहता है जिसके कारण पौंधे आसानी से विकास करते रहते हैं।

लो-टनेल में सब्जी उत्पादन

इस संरचना के उपयोग से पौधों को कम तापक्रम के साथ तेज ठण्डी हवाओं, पाला तथा ओले जैसी प्रतिकूल परिस्थितियों से बचाया जा सकता है और इनकी आशंका समाप्त होने व बाहर के तापमान में वृद्धि होने पर पॉलिथीन आवरण को हटा देते हैं। आमतौर पर उत्तर भारत के साथ पश्चिमी राजस्थान में खुले खेत में जहाँ ठण्ड के महीनों (जनवरी–फरवरी) में फसल लेना संभव नहीं है, इसके प्रयोग से गर्मियों में ली जाने वाली खासकर बेलवाली सब्जी–फसलों (खीरा, ककड़ी, खरबूजा, तरबूज, लौकी, टिंडा, आदि ) की इन दिनों लो–टनेल के अंदर सीधे बुआई या पॉलीथिन की थैलियों या प्रो–ट्रेज में तैयार पौध की रोपाई करके लगभग एक–माह पूर्व फसल की तुड़ाई अर्थात इनकी अगेती खेती कर पाना संभव है। इस तरह थोड़ी तकनीकी गतिविधियाँ अपनाकर किसानों को उनके उत्पाद का मूल्य लगभग दो–गुना मिल सकता है।

## छायादार जाली गृह (शेड–नेट हाउस)

पॉलीहाउस की भांति छायादार जाली घर किसी ढांचे पर खड़ी संरचना है। ढांचा लोहे, बांस, लकड़ी आदि का बनाया जा सकता है। इसका आकार इसकी उपयोगिता पर निर्भर करता है। जाली की सघनता इसके इस्तेमाल पर निर्भर करती है। आमतौर पर 50 प्रतिशत तक प्रकाश को रोकने वाली जाली सब्जी उत्पादन के लिए उपयुक्त होती है। यह सूर्य की किरणों की तेजी (प्रकाश) को रोककर अंदर गर्मी को कम करने में सहायक होती है जिससे बाहर की अपेक्षा 4–6 डिग्री सेन्टीग्रेड तापक्रम कम हो जाता है। इसके अंदर फौगर तथा ड्रिप सिंचाई व्यवस्था कर गर्मियों में नर्सरी पौध व सब्जी उत्पादन आसानी से किया जा सकता है। यह वायु तथा ओले के प्रकोप को भी कम करती है।

सब्जी उत्पादन हेतु शेडनेट हाउस

## कीट–नियंत्रक जाली

कीट नियंत्रक जाली का इस्तेमाल मुख्यतया नर्सरी में पौध तैयार करते समय किया जाता है। यह वायरस का प्रसार करने वाले कीटों जैसे सफेद मक्खी, चेपा, जैसिड, थ्रिप्स को पौधों के पहुँच से दूर रखने के लिए प्रयोग की जाती है। यह प्लास्टिक की बनी होती है जिसमें 40 से 60 छिद्र प्रति इंच होते हैं। इस जाली को नर्सरी के चारों तरफ किसी ढांचे पर फिट करते हैं। इसका इस्तेमाल स्व–वातानुकूलित पॉलीहाउस के किनारों पर कीटों के अंदर प्रवेश को रोकने के लिए भी होता है। इसके अलावा कभी–कभी इस प्रकार की संरचना के अन्दर व्यावसायिक स्तर पर शिमला मिर्च आदि फसलों का उत्पादन भी किया जाता है।

कीट नियंत्रक नेट हाउस

## खाई में ग्रीन–हाउस संरचना

भूमि तल से नीचे अर्थात खाई में ग्रीन–हाउस संरचना शुष्क–शीतोष्ण जलवायु में असमय यानि अधिक ठंड वाली स्थिति में सब्जी उत्पादन के लिए उपयुक्त होती हैं। इस संरचना का आकार आमतौर पर पाँच फुट चौड़ा तथा तीन फुट गहरा तथा लंबाई आवश्यकतानुसार रखते हैं। इस संरचना को ढकने के लिए अल्ट्रा–वायलेट किरण–रोधी पारदर्शी पॉलीथिन का इस्तेमाल करते हैं और यही हरित–गृह सिद्धान्त के आधार पर इसके अंदर बाहर की अपेक्षा अधिक गर्मी बनाए रखने में सहायक होती है। इन संरचनाओं का इस्तेमाल आमतौर पर गर्मियों में ली जाने वाली सब्जी कि अगेती फसल लेने हेतु नर्सरी के लिए करते हैं।

## पॉलीहाउस/नेटहाउस में सब्जी उत्पादन

पॉलीहाउस/नेटहाउस में बेमौसमी उत्पादन के लिए वही सब्जियाँ उपयुक्त होती हैं जिनकी बाजार में माँग अधिक हो और वे अच्छी कीमत पर बिक सकें। वैसे इनमें विशेष गुणों वाली सब्जियाँ जैसे अपरिमित (इनडिटरमिनेट) टमाटर, गायनोशियस–पार्थिनोकार्पिक खीरा, रंगीन शिमला मिर्च, खरबूजा व फलीदार सब्जी की खेती मुख्यरूप से की जाती हैं जोकि प्रति इकाई क्षेत्र काफी अधिक उत्पादन देने में सक्षम हैं। फसलों का चुनाव क्षेत्र की मांग के आधार पर कुछ भिन्न हो सकता है। अगेती फूलगोभी, टमाटर, मिर्च आदि की पौध भी पॉलीहाउस में डाली जा सकती है। इसी प्रकार ग्रीष्म में शीघ्र फलन लेने के लिए लौकीवर्गीय सब्जियों की पौध दिसंबर–जनवरी में पॉलीहाउस के अन्दर आसानी से तैयार की जा सकती है।

## पॉलीहाउस के लिए उपयुक्त किस्में

| सब्जी फसल | विशेष गुण | किस्म |
|---|---|---|
| टमाटर | सीधी बढ़वार वाली | हिमशिखर, नवीन 2000, रक्षिता, टी.आर. 4266, टी.आर. 4293, एस.वी. 566 टी.एच., मायला, अवतार, आदि |
| खीरा | प्रति नोड एकल फल देने वाली | कियान, इकरान, इसैतिस, सेवेन स्टार |
| | प्रति नोड कई फल देने वाली | रीका, टर्मिनेटर, वाई 225, मल्टीस्टार, पेपिनो, इनफिनिटी |
| शिमला मिर्च | हरे फल वाली | भारत, इन्द्रा, कैलिफोर्निया वन्डर |
| | पीले फल वाली | यलो वन्डर, ओरोबेले, स्वर्णा |
| | लाल फल वाली | बॉम्बे, लक्ष्मी |

पॉलीहाउस में खीरे की फसल

पॉलीहाउस में खीरे की उन्नत फसल

## पॉलीहाउस में सस्य क्रियाएँ एंव देखभाल

पॉलीहाउस/नेटहाउस के भीतर उगाई जाने वाली सब्जियों में वे सभी सस्य क्रियाएँ करनी पड़ती हैं जिन्हें खुले खेत में अपनाते हैं। गोबर की खाद का भरपूर उपयोग करना चाहिए। बीच–बीच में मिट्टी का निर्जमीकरण आवश्यक होता है, जिसके लिए फार्मेलडिहाइड (1.5–2.0 प्रतिशत का घोल) तथा अन्य रसायन या प्लास्टिक शीट बिछाकर सौर ऊर्जा का उपयोग करके किया जा सकता है। प्रति इकाई क्षेत्र में पौधों की संख्या बढ़ाकर पौधों की उचित छटाई व ट्रेनिंग द्वारा सीधी बढ़वार या बेलवाली फसलों से अधिक उत्पादन लिया जा सकता है। साधारण पॉलीहाउस में दिन में उचित वायु संचार का प्रबन्ध अत्यावश्यक है। पॉलीहाउस/नेटहाउस के भीतर सिंचाई ड्रिप प्रणाली से करते हैं जिसके द्वारा पानी में घुलनशील उर्वरकों तथा रसायनों का इस्तेमाल अधिक दक्षता से होता है।

टमाटर को पॉलीहाउस के अंदर भूमि में 15 से.मी. उठे बेड में लगाना चाहिए। बेड की चौड़ाई 3 फुट और लंबाई आवश्यकतानुसार रखते हैं। पौधो की रोपाई उठी हुई बेड में दोहरी पंक्तियों में करनी चाहिए और सिंचाई हेतु ड्रिप लाइन बिछानी चाहिए जिसपर 30 से.मी. के अंतराल पर ड्रिविपर लगे हों। टमाटर की फसल के लिए 40–50 टन गोबर की सड़ी खाद प्रति हेक्टेयर तथा 150:100:80 कि.ग्रा. एनःपीःके बेड तैयार करते समय डालें। रासायनिक उर्वरकों को पूरे फसल चक्र में तीन भाग बनाकर डालें। उपरोक्त मिश्रण का लगभग 15 ग्राम प्रति पौधे के हिसाब से रोपाई के पहले प्रत्येक कूंड़ में दें। रोपाई के 20 दिन बाद 20 ग्राम प्रति पौधा व 50–50 दिन बाद पुनः 10 ग्राम प्रति पौधा देकर फसल की अच्छी तरह से गुड़ाई करनी चाहिए।

## खाद एवं उर्वरक

प्रत्येक वर्ष प्रतिवर्ग मीटर 3 कि.ग्रा./वर्ग मीटर गोबर की सड़ी खाद मिट्टी में मिलाएँ। इसके अतिरिक्त उपरोक्त फसलों में 12–15 ग्राम नत्रजन, 6–9 ग्राम फास्फोरस तथा 6–9 ग्राम पोटाश/वर्ग मीटर क्षेत्र में देना चाहिए।

## बुआई एवं रोपण

| फसल | रोपण दूरी (से.मी.) | विवरण |
|---|---|---|
| टमाटर व खीरा | 50 x 30 | दोहरी पंक्तियों में लगाए गये प्रत्येक पौधे के केवल मुख्य तनों को रखकर रस्सी के सहारे साधने (ट्रेन करने) पर |
| शिमला मिर्च | 50 x 50 | |

## पौधों की काँट–छांट व सहारा देना

टमाटर की अल्प परिमित तथा अपरिमित किस्मों के सघन रोपण में केवल मुख्य तने को पतली रस्सी या डोरी के सहारे बढ़ने दिया जाता है। बगल से निकलने वाली अन्य शाखाओं को समय–समय पर हटाते रहना चाहिए।

## तापक्रम पर नियंत्रण

साधारण (प्राकृतिक वायु प्रवाही) पॉलीहाउस में ठंड के मौसम में रात को खिड़की दरवाजे बंद रखते हैं जबकि गर्मियों में तापक्रम न बढ़ने देने के लिए इन्हें दिन रात खुला रखने की आवश्यकता पड़ती है।

पॉलीहाउस में खीरे के फलन की शुरूआती अवस्था

## उपज तथा आय की सम्भावनाएँ

काजरी में 500 वर्ग मीटर में किये गये परीक्षणों में खीरे से प्रतिवर्ग मीटर 12–15 कि.ग्रा. की पैदावार मिली है। नवम्बर के प्रारम्भ में लगाये गये टमाटर से 15–20 कि.ग्रा. की पैदावार मिली है। एक एंगिल आयरन का 100 वर्गमीटर का साधारण पॉलीहाउस बनाने में लगभग 30,000 रुपए का खर्च आता है। विवेकपूर्ण फसलों के उत्पादन से प्रथम दो वर्ष के भीतर ही लागत वसूल हो सकती है। उसके बाद के वर्षों में केवल उत्पादन लागत तथा 3–4 वर्षों में प्लास्टिक शीट बदलने का खर्चा शेष रहने से काफी मुनाफा कमाने की सम्भावना रहती है। पॉलीहाउस के अन्दर फसल उगाना काफी लाभप्रद होता है तथा इससे कृषक अधिक लाभ अर्जित कर सकते हैं।

**ग्रीन हाउस बनाने के लिए आवश्यक सामाग्री–** खेती की जमीन यदि स्थानीय बाजार के नजदीक हो तो लागत काफी कम हो जाती है।

1. ग्रीन हाउस का ढांचा के लिये आवश्यक सामग्री,
2. सिंचाई में काम आने वाला सामान,
3. फर्टिलाइजर से जुड़ा सामान,
4. ग्रेडिंग और पैकिंग के लिए जगह,
5. ऑफिस में लगने वाले इलैक्ट्रॉनिक सामान,
6. ग्रीन हाउस में इस्तेमाल होने वाली नयी तकनीक वाली मशीनें,
7. मजदूर, कीटनाशकों, उर्वरकों और प्रेजरवेटिव्स पर होने वाली लागत आदि।

**लागत:** ग्रीन हाउस बनाने में दो तरह की लागत आती है। पहली शुरू में लगने वाली स्थायी लागत और दूसरी साल दर साल होने वाली लागत।

**स्थाई लागत:** स्थाई लागत का मतलब है ऐसी लागत जो एक बार लगती है। जैसे कि खेती की जमीन खरीदना या फिर ग्रीन हाउस का ढांचा तैयार करना। एक एकड में ग्रीन हाउस को बनाने की कुल लागत लगभग 30–35 लाख आता है।

**बार–बार होने वाली लागत:** इसका मतलब है ऐसी लागत जो हर साल हर सीजन में बार बार होती है जैसे कि बुआई की लागत या मजदूरों पर होने वाला खर्च इत्यादि।

**आर्थिक मदद व अनुदान:** केंद्र सरकार, राज्य सरकारें और अन्य प्राइवेट कंपनियां भी ग्रीनहाउस की खेती में रूचि रखने वाले किसानों को ना केवल तकनीकी बल्कि आर्थिक मदद भी कर रहे हैं। कई सरकारी एंजेंसियां और विभाग ग्रीन हाउस बनाने के लिए कम ब्याज दरों पर लोन देते हैं। सरकार की ओर से किसानों को अनुदान देय है। लघु व सीमांत किसानों को लागत की 75 प्रतिशत राशि अनुदान के रूप में जबकि अन्य को 50 प्रतिशत से ग्रीनहाउस स्थापित कर सकते हैं।

# लो-टनेल तकनीक द्वारा कद्दूवर्गीय सब्जियों की अगेती खेती

**प्रदीप कुमार, प्रतापसिंह खापटे एवं अनुराग सक्सेना**
केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर

कद्दूवर्गीय कुल के अंतर्गत लता वाली सब्जी फसलें आती हैं जिनमें लौकी, खीरा, कद्दू, तोरी, करेला आदि प्रमुख व्यावसायिक फसलें हैं। ये सब गर्म जलवायु की सब्जी फसलें हैं जिनके सफल उत्पादन के लिए गर्म वातावरण की आवश्यकता होती है और खुले क्षेत्र में इनकी खेती मुख्यतया गर्मी तथा वर्षा ऋतु में जाती है। गर्मी की फसल हेतु इनके बीजों की बुआई फरवरी–मार्च तथा वर्षा ऋतु की फसल की बुआई जून–जुलाई में करते हैं। चूंकि उत्तर भारत के अधिकतर मैदानी भागों में दिसंबर से फरवरी के अंत तक बाहर का तापक्रम काफी कम होता है जिसके कारण अधिकतर किसान परंपरागत तौर पर इसकी बुआई ठंड समाप्त होने के बाद अर्थात फरवरी के अंत या फिर मार्च महीने में जब तापक्रम सामान्य (25 डिग्री सेन्टीग्रेड के आस–पास) हो जाता है तब करते है। इस तरह इनके फल मई तक बाजार में आते हैं। सामान्य फसल से सभी किसानों के उत्पाद बाजार में लगभग एक साथ आने से इनका बाजार मूल्य काफी कम हो जाता है।

परंतु किसान भाई यदि यहाँ बतलाई जा रही कुछ उन्नत शस्य क्रियाओं को अपनाकर इन सब्जियों की अगेती खेती करें तो सामान्य समय से पूर्व अपने उत्पाद बाजार में लाकर अधिक आमदनी प्राप्त कर सकते हैं।

वैसे तो उत्तर भारत, खासकर उत्तर प्रदेश, बिहार, दिल्ली, आदि मैदानी क्षेत्रों में नदियों के कछार में इन सब्जियों की अगेती खेती जिसे 'दियारा खेती' कहते हैं, कई दशकों से प्रचलित है। इसमें सब्जियों के पूर्व अंकुरित बीजों को नदियों की कछार की रेत में खाईं बनाकर उसमें बुआई की जाती है। पौधों को ठंड से बचाने हेतु ठंडी वायु के बहने की दिशा की तरफ 3–4 फुट ऊंचाई की घास–फूस की बाड़ लगा देते हैं। इस तरह पौधे सर्दी से बच जाते हैं और अनुकूल तापक्रम मिलते ही फलन शुरू कर अगेती उत्पाद देने लगते हैं।

अन्य मैदानी भागों, खासकर पश्चिमी राजस्थान में जहां अपेक्षाकृत सब्जियों के दाम अधिक होते हैं, इन फसलों की अगेती खेती काफी लाभकर सिद्ध हो सकती है। ऐसे स्थानों में कद्दूवर्गीय अगेती खेती पॉली लो–टनेल या पॉली रो–कवर अर्थात प्लास्टिक की सुरंग जैसी संरचना में की जाती है। यह संरचना लघु स्तर पर पौधों को ग्रीनहाउस का प्रभाव मुहय्या कराती है जिसके कारण बाहर की अपेक्षा टनेल के अंदर पौधों के आस–पास का तापक्रम अधिक रहता है और पौधो की वृद्धि व विकास होता रहता है जिससे फसल उत्पाद सामान्य फसल की अपेक्षा 30–45 दिन पूर्व प्राप्त हो जाते हैं।

लो-टनेल के अन्दर सब्जी उत्पादन

## पॉली–टनेल सब्जी उत्पादन पद्धति

यह पद्धति वैसे तो कई तरह की फसलों के लिए प्रयुक्त होती है परंतु खीरा, लौकी, खरबूजा, तरबूज, टिंडा, करेला, तोरी व चप्पन–कद्दू के लिए काफी उपयुक्त है। इसके लिए सर्वप्रथम इन सब्जियों की पौध तैयार की जाती है, तत्पश्चात इन्हे सीधे खेत में पॉली–टनेल में लगा दिया जाता है जहां इनकी उचित देखरेख की जाती है।

अगेती फसल हेतु प्रो-ट्रे में पौध उत्पादन

## पौध तैयार करना

पौध तैयार करने हेतु 15X10 से.मी. आकार वाली पॉलीथीन की थैलियाँ जिनमें मिट्टी:खाद:रेत का 1:1:1 अनुपात का मिश्रण भरकर या फिर 1.5–2.0 इंच आकार वाली प्रो–ट्रेज में बीज की बुआई करके इन्हें पॉलीहाउस या प्लास्टिक लो–टनेल में रख देते हैं। प्रो–ट्रेज में बीजों की बुआई 3:1:1 के अनुपात में कोकोपिट: परलाइट: वर्मीकुलाइट के मिश्रण को भर कर पानी से तर करने के बाद करते हैं। बीज को रात भर पानी में भिगोकर रखते हैं। सुबह निकालकर छाया में सुखाने के बाद बीज की बुआई कर देते हैं। बुआई के बाद थैलियों अथवा प्रो–ट्रेज को दो–तीन दिन तक पारदर्शी प्लास्टिक की चादर से ढँक देते हैं। बीज अंकुरण के बाद प्लास्टिक को हटा देते हैं। आवश्यकतानुसार फुहारे से सिंचाई करते रहते हैं। पौध तैयार करने हेतु बीज की बुआई दिसंबर के मध्य से अंतिम सप्ताह तक कर सकते हैं। पौधों के उगने के एक सप्ताह बाद खासकर प्रो–ट्रेज में एन:पी:के के 19:19:19 मिश्रण का एक सप्ताह के अंतराल पर दो छिड़काव करना चाहिए। इस तरह पौध जनवरी के मध्य से अंत तक 3–4 पत्ती की हो जाती है जो रोपाई हेतु उपयुक्त होती है।

पौध रोपाई से पूर्व खेत की अच्छी प्रकार से जुताई कर बेड अथवा कतारों, जिनमें पौध रोपण करना है बनाकर उनमें खाद व उर्वरक मिलकर तैयार कर लें। अत्यधिक ठंड वाले क्षेत्रों में रोपाई 6 इंच गहराई पर खाईं में कर सकते हैं। इससे पौधो के जड़ क्षेत्र में खासकर रात में अपेक्षाकृत तापमान अधिक रहता है और पौधे बढ़वार जारी रखते हैं।

## पौध रोपाई तथा लो–टनेल हुप्स व पॉलीथिन बिछाना

पौधों को पहले से तैयार की हुई नाली या बेड/कतारों में शाम के समय रोपाई कर पानी लगा देते हैं। इसके तुरंत बाद लोहे के बने अर्द्ध–चंद्राकार छड़ या तार वाली संरचना (हुप्स) पर पॉलिथिन की चादर से कतारों में रोपे गए पौधों को ढँक देते हैं। लो–टनेल संरचना इस्तेमाल किए जा रहे हुप्स की कुल लम्बाई 2.0 मीटर रखते हैं जिसके दोनों सिरे 30–30 से.मी. जमीन के भीतर जाते हैं और इस तरह 1.6 मीटर घूमी हुयी संरचना पर 1.6 मीटर चौड़ाई वाली 30 माइक्रोन की पॉलीथिन पूरी तरह से पंक्ति या बेड को ढँक लेती है। इसमें टनेल की चौड़ाई 1.0 मीटर और ऊंचाई लगभग 0.6 मीटर मिलती है। हुप्स को 2 मीटर के अंतराल पर पक्तियों में लगाते हैं। पौधों की रोपाई की दूरी फसल के अनुसार रखते हैं। एक टनेल से दूसरे टनेल की दूरी अर्थात पंक्ति से पंक्ति की दूरी फसल पर निर्भर करती है। खीरा, खरबूजा, टिंडा में 1.0–1.5 मीटर तथा लौकी, तोरी व तरबूज के लिए 3.0–4.0 मीटर रखते हैं। संरचना को हवा आदि से उखड़ने से बचाने के लिए पॉलीथिन से ढकने के बाद एक पतली नायलॉन रस्सी की सहायता से एक हुप्स के बाद दूसरे हुप्स के बीच में पॉलीथिन के ऊपर से क्रॉस बनाते हुये रस्सी को जमीन से छूते हुये हुप्स में ले जाकर बांधना चाहिए। साथ ही पॉलीथिन के लम्बाई वाले दोनों शिरों को मिट्टी से दबा देना चाहिए।

पौधों की बढ़वार के समय पॉलीथिन के अन्दर की अधिक एकत्रित नमी को भगाने व इनके अन्दर वायु संचार के लिए दिन के समय लम्बाई वाले दोनों सिरों को कुछ समय के लिए खोल देना चाहिए। जब टनेल के अंदर का तापमान अधिक होने लगे तो पॉलीथिन में हवा बहने की विपरीत दिशा में 2–3 मीटर की दूरी पर 3.0 से.मी. आकार का चीरा लगा देना चाहिए। यह चीरा या छिद्र एक तो बाद की अवस्था में अधिक गर्मी से पौधो को बचाता है, दूसरे इन्हीं छिद्रों से मधुमक्खियाँ अंदर प्रवेश कर परागण की क्रिया में भी सहायता करती हैं। वैसे भी फूल आने की अवस्था में पॉलीथिन हटाने

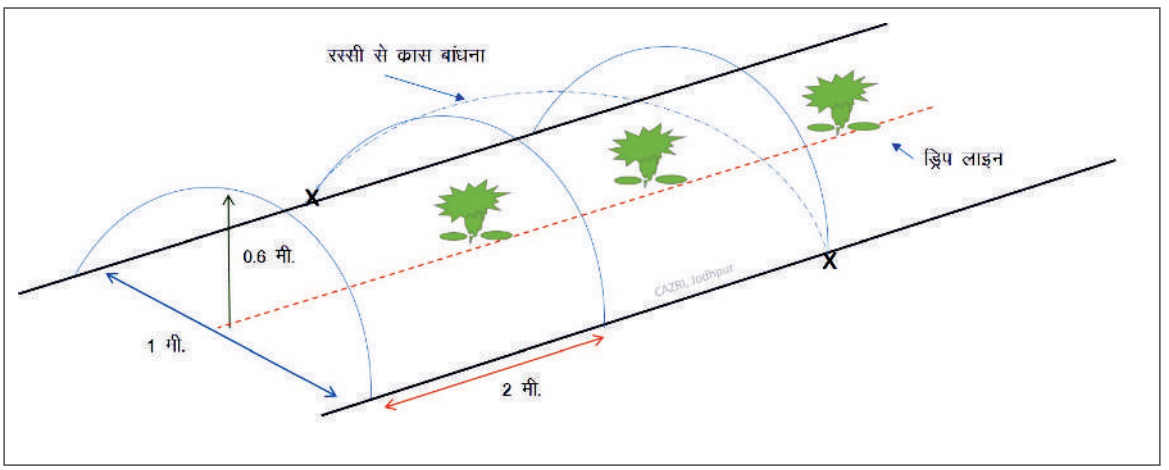


लो–टनेल सब्जी उत्पादन का प्रारूप

की स्थिति में आ जाती है। फरवरी–मार्च में जब तापमान सामान्य होने लगे पॉलीथिन को एकाएक न हटाकर थोड़ा–थोड़ा करके 2–3 दिन में हटाना चाहिए इससे पौधे धीरे–धीरे बाहरी मौसम के प्रति अपनी सहनशीलता स्थापित कर लेते हैं।

आमतौर पर इस पद्धति को ड्रिप सिंचाई प्रणाली के साथ स्थापित किया जाता है जिससे सिंचाई के साथ लो–टनेल के अंदर ड्रिप द्वारा उर्वरकों को सुचारु रूप से दिया जा सके। एक आंकड़े के अनुसार शुरुआती महीने में 4 लीटर प्रति वर्ग मीटर की दर से 6–7 दिन के अंतराल पर व बाद में फूल आने तक 4 दिन के अंतराल पर पानी देना चाहिए। इसके साथ पहले 50 पी.पी.एम. का एनःपीःके का 5:3:5 का मिश्रण घोल जिसे क्रमशः फसल अवस्था के अनुसार बढ़ाते हुए फल उत्पादन की उच्चतम सीमा तक 300 पी.पी.एम. तक ले जाते हैं। पौध या जड़ गलन की समस्या से बचने हेतु किसी सिस्टमेटिक फफूंदनाशक जैसे कार्बेण्डाजिम (0.1 प्रतिशत) व कीटों से बचाव हेतु इमिडाक्लोपप्रिड (0.05 प्रतिशत) लो–टनेल के अंदर छिड़काव न कर पाने की वजह से ड्रिप द्वारा देना चाहिए।

समान्यतयः जनवरी के अंत में रोपाई की गयी कद्दूवर्गीय फसल मार्च अंत से तुड़ाई के लिए तैयार हो जानी चाहिए जोकि सामान्य दशा में की गयी खेती से लगभग 30–40 दिन पहले तैयार हो जाती है। इस समय बाजार में इन सब्जियों के दाम दोगुना हो सकते हैं जिससे किसानों को अधिक लाभ प्राप्त होगा। इस प्रकार से कद्दूवर्गीय सब्जी की अगेती खेती कर किसान भाई सामान्य दशा में खेती करने वाले किसानों से अधिक आय प्राप्त कर सकते है और सब्जी उत्पादन व्यवसाय को अधिक सफल बना सकते हैं।

# टमाटर उत्पादन की उन्नत तकनीक

**प्रदीप कुमार**
केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर

आय तथा पोषण दोनों ही दृष्टि से टमाटर एक अति महत्वपूर्ण सब्जी की फसल है। टमाटर मुख्यतया गर्मी की फसल है, परंतु पाला न पड़ने वाले क्षेत्रों में इसकी खेती पूरे वर्ष की जा सकती है। इसके फल में कुछ खनिज तत्व व विटामिन जैसे 'ए' व 'सी' प्रचुर मात्रा में पाया जाते हैं। इसके अलावा इसमें लाइकोपीन नामक पदार्थ पाया जाता है जो एक प्रमुख एन्टिऑक्सीडेन्ट है। इसके फल में निहित विशिष्ट गुणों के कारण टमाटर की माँग वर्षभर लगभग एक समान बनी रहती है। टमाटर का उपयोग ताजा फल के रूप में तथा उन्हें पकाकर डिब्बाबंदी करके, अचार, चटनी, सूप, केचप, सॉस आदि बनाने में भी किया जाता है।

## जलवायु एवं भूमि

टमाटर की अच्छी पैदावार में तापक्रम का बहुत बड़ा योगदान होता है। टमाटर की फसल के लिए 20–25 डिग्री सेन्टीग्रेड तापमान आदर्श माना जाता है तथा 21–24 डिग्री सेन्टीग्रेड तापक्रम पर टमाटर में लाल रंग अच्छा बनता है। तीव्र गर्मी (43 डिग्री सेन्टीग्रेड से अधिक तापमान) से पौधे झुलस जाते हैं तथा फूल व छोटे फल भी झड़ जाते हैं, जबकि 13 डिग्री सेन्टीग्रेड से कम व 35 डिग्री सेन्टीग्रेड से अधिक होने पर फल कम आते है और इनमें लाल रंग का निर्माण प्रभावित होता है।

टमाटर की खेती 6–7 पी.एच. मान वाली उत्तम जल निकास युक्त लगभग हर प्रकार की भूमिओं में की जा सकती है, परंतु इसकी खेती के लिए दोमट भूमि सर्वोत्तम मानी जाती है।

## नर्सरी पौध तैयार करना

नर्सरी तैयार करने से पूर्व भूमि को अच्छी तरह से शोधित कर इसमें उपस्थित हानिकारक जीवाणुओं व फफूंद तथा कीटों के लार्वा आदि को नष्ट कर देना चाहिए। इसके लिए गर्मी में खेत की गहरी जुताई, पौधशाला की पूर्णरूप से नम क्यारियों को अप्रैल–मई माह मे पारदर्शी पॉलीथिन से ढँक कर भू–तपन प्रक्रिया, क्यारियॉ को भूमि धरातल से ऊंची (10–15 से.मी.) बनाकर बुआई से पूर्व (12–15 दिन) फोर्मलीन घोल (1–2% सांद्रता) द्वारा उसे तर करने के पश्चात लगभग एक सप्ताह तक पॉलीथिन से भली–भांति ढँक कर रखना, आदि द्वारा पौधशाला की भूमि को शोधित कर सकते हैं। इसके अलावा बीज बुआई से पूर्व गोबर की खाद में ट्राइकोडर्मा मिलाकर क्यारी की मिट्टी में अच्छी तरह से मिला सकते हैं।

टमाटर की तैयार उन्नत पौध

तत्पश्चात नर्सरी के लिए 3X1 मीटर आकार की व 10 से 15 से.मी. ऊँची क्यारियाँ बनानी चाहिए। यदि बीज पहले से

## उन्नत किस्में

| विशेषता | उन्नत किस्में |
|---|---|
| मुक्त परागित किस्में | पूसा रूबी, पूसा–120, पूसा शीतल, पूसा गौरव, अर्का सौरभ, अर्का विकास, सोनाली, पंत बहार, अर्का विकास, हिसार अरूणा (सलेक्शन–7), एम.टी.एच. 621–24, एच.एस.–101, सी.ओ.–3, सलेक्शन–152, पंजाब केसरी, पंत टी–1, पंत बहार, अर्का सौरभ, एस–32, डी.टी.–10 |
| संकर किस्में | पूसा हाइब्रिड–1, पूसा हाइब्रिड–2, पूसा हाइब्रिड–4, अर्का रक्षक, अविनाश–2, अभिलाष, देव, कर्नाटक हाइब्रिड, रश्मि, सोनाली, ए.आर.टी.एच. 1, 2 व 3, एच.ओ.ई.–606, एन.ए.–601, बी.एस.एस.–20, एम.टी.एच.–6 |

उपचरित न हो तो उसे बुआई से पूर्व 2 ग्राम केप्टान या कार्बेण्डाजिम प्रति किलो बीज दर से उपचारित कर लेना चाहिए। गर्मी की फसल की नर्सरी में बुआई जनवरी में, वर्षा की जून में तथा सर्दी की फसल की अगस्त–सितम्बर माह में करनी चाहिए। एक हेक्टेयर में पौध रोपण हेतु देसी किस्मों के लिए 400 से 500 ग्राम बीज तथा संकर किस्मों के लिए 150 से 200 ग्राम बीज प्रति हेक्टेयर उपयुक्त रहता है।

पौधशाला की मिट्टी को बुआई के 2–3 सप्ताह बाद को कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (3 ग्राम) या मेन्कोजेब (2 ग्राम) प्रति लीटर के घोल से तर कर देना चाहिए। नर्सरी में पौधों को कीड़ों के प्रकोप से बचाने के लिए इमिडाक्लोप्रिड 0.3 मिली प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

## खाद एवं उर्वरक

सामान्य किस्मों हेतु पौधों की रोपाई के 3–4 सप्ताह पूर्व 20–25 टन गोबर की पूर्णतया सड़ी हुई खाद खेत में डाल कर भली–भाँति मिट्टी में मिला देना चाहिए। इसके अतिरिक्त पौध रोपाई से पूर्व 60 कि.ग्रा. नत्रजन, 80 कि.ग्रा. फॉस्फोरस एवं 60 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर के हिसाब से खेत की अंतिम तैयारी से समय देना चाहिए। पौधे रोपण के 30 व 45 दिन बाद 30–30 कि.ग्रा. नत्रजन की मात्रा खड़ी फसल में देकर सिंचाई कर देना चाहिए।

खेत में लगी हुई टमाटर की फसल

संकर किस्मों में 30–35 टन सड़ी हुई गोबर की खाद, 180 किलो नत्रजन, 120 कि.ग्रा. फॉस्फोरस एवं 80 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से देना चाहिए। सूक्ष्म पोषक तत्व खासकर बोरान, आयरन, आदि मृदा में इनकी कमी पाये जाने पर देना चाहिए।

## पौधों की रोपाई

जब नर्सरी में पौधे 10 से 15 से.मी. लम्बे अर्थात 4–5 पत्तियों के हो जाएँ, इनकी रोपाई पहले से तैयार खेत में शाम के समय कर देनी चाहिए। रोपाई से पूर्व 2.5 कि.ग्रा ट्रइकोडर्मा को 50 किलो अच्छी सडी हुई गोबर की खाद के साथ मिला कर खेत में डालने से फ्यूजेरियम विल्ट से बचाव किया जा सकता है। पौधों की जड़ों को 10–15 मिनट तक कार्बेन्डाजिम या ट्राईकोडर्मा के घोल में उपचारित करने के पश्चात रोपाई करने से भी फफूंदजनित रोग से भी बचाव होता है। पौधों की रोपाई वर्षा ऋतु की फसल में 75 x 75 से.मी. दूरी पर, गर्मी की 60 x 30–45 से.मी. की दूरी पर करते हैं। संकर किस्मों को 90 x 45 से.मी. की दूरी पर रोपाई करना चाहिए। पौध रोपण के 15–20 दिन के अंतराल पर चेपा, सफेद मक्खी एवं थ्रिप्स के लिए 2 से 3 छिड़काव इमीडाक्लोप्रिड या एसीफेट का करना चाहिए।

## पौधों को सहारा देना (स्टेकिंग)

टमाटर की लम्बी बढ़ने वाली किस्मों को विशेष रूप से सहारा देने की आवश्यकता होती है। पौध बढ़वार के समय लाईन के ऊपर लोहे के तार पर सूतली की सहायता से पौधों को सहारा (स्टेकिंग) देना चाहिए। पौधों को सहारा देने से फल मिट्टी एवं पानी के सम्पर्क मे नही आ पाते जिससे फल सड़ने की समस्या नहीं होती, अतः अधिक उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है।

## सिंचाई

टमाटर की फसल से अच्छा उत्पादन लेने के लिए सिंचाई की उत्तम व्यवस्था होनी चाहिए। गर्मी के दिनों में 6–7 दिन के अन्तराल पर, जबकि सर्दी में 10–15 दिनों के अन्तराल पर हल्का पानी देते रहना चाहिए। अगर संभव हो सके तो सिंचाई बूँद–बूँद (ड्रिप) पद्धति द्वारा करनी चाहिए। बूँद–बूँद सिंचाई से लगभग 60–70 प्रतिशत पानी की बचत के साथ–साथ 20–25 प्रतिशत अधिक उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है।

सहारा (स्टेंकिंग) दिए हुए टमाटर के पौधे

## निराई–गुड़ाई व खरपतवार प्रबंधन

पौध रोपाई के 20 से 25 दिन बाद प्रथम निराई–गुड़ाई करें। संभव हो तो प्रत्येंक सिंचाई के बाद में हल्की निराई–गुड़ाई करनी चाहिए। खरपतवार पोषक तत्वों के लिए टमाटर के पौधों से प्रतिस्पर्धा करते हैं, इसके अलावा कीट व बिमारियों को शरण भी देते हैं। रासायनिक खरपतवार नियंत्रण हेतु खेत तैयार करते समय फ्लूक्लोरेलिन (बासालिन) अथवा रोपाई पश्चात 2–3 दिन के अंदर (खरपतवारों के अंकुरण से पहले) पेन्डीमिथेलीन 1 लीटर प्रति हेक्टेयर मात्रा को 500 लीटर पानी में घोल बनाकर प्रयोग करना चाहिए। बूँद–बूँद सिंचाई अपनाने से खरपतवार की समस्या काफी कम रहती है।

## वृद्धि नियामकों का प्रयोग

टमाटर में अधिक फूल गिरने की समस्या होने पर तथा उपज बढाने के लिए प्लेनोफिक्स (NAA) की 4–5 मिली प्रति टंकी या 50 मिली प्रति एकड की दर से का छिड़काव से अधिक फल बनते है। इसके अलावा सूक्ष्म पोषक तत्व बोरॉन की कमी के लक्षण प्रकट होने पर बोरेक्स 0.6 प्रतिशत की दर से खडी फसल में छिड़काव करना चाहिए।

पौधो पर लगे टमाटर के गुच्छे

## फलों की तुड़ाई एवं उपज

पास के बाजार में बेचने के लिए टमाटर के फलों की तुड़ाई फल पकने के बाद करनी चाहिए और यदि दूर के बाजार में भेजना हो तो जैसे ही फल के निचले हिस्से का रंग लाल होने लगे या हो जाए तो तुड़ाई आरम्भ कर सकते हैं। सर्दी की फसल में फल दिसम्बर में तुड़ाई हेतु तैयार हो जाते हैं जोकि फरवरी तक चलते रहते हैं। खरीफ की फसल के फल सितम्बर से नवम्बर तक तथा गर्मी की फसल के फल अप्रैल से जून तक उपलब्ध होते हैं।

टमाटर की औसत उपज 20 से 50 टन प्रति हेक्टेयर तक होती हैं। संकर किस्मों से 50 से 70 टन प्रति हेक्टेयर या इससे भी अधिक उपज प्राप्त की जा सकती हैं।

## फल भण्डारण

परिपक्व हरे टमाटर को 12–15 डिग्री सेन्टीग्रेड, जबकि पके टमाटर को 4–5 डिग्री सेन्टीग्रेड तापमान व 85–90 प्रतिशत सापेक्षिक आर्द्रता पर क्रमशः 30 दिन व 10 दिन तक संरक्षित किया जा सकता है।

## फसल सुरक्षा

### प्रमुख रोग एवं नियंत्रण

**आर्द्र गलनः** यह रोग फफूंद के द्वारा होता है तथा अक्सर पौधशाला में होता है। इस रोग के प्रकोप से पौधे का जमीन की सतह पर स्थित तने का भाग काला पड़ जाता है और छोटे–छोटे पौधे गिरकर मरने लगते हैं। यह रोग भूमि एवं बीज के माध्यम से फैलता है।

**नियंत्रणः** बीज को थाइराम या केप्टान की 3 ग्राम प्रति किलो बीज दर से उपचारित कर बोना चाहिए। बुआई से पूर्व नर्सरी–क्यारी को भी भली–भांति शोधित कर लेना चाहिए।

**झुलसा/अंगमारी (अल्टरनेरिया):** इस रोग से टमाटर के पौधों की पत्तियों पर गहरे भूरे रंग के धब्बे पड़ जाते हैं। यह रोग दो प्रकार का होता हैं। अगेती झुलसा– इस रोग में धब्बों पर गोल छल्लेनुमा धारियां दिखाई देती हैं। पछेती झुलसा– इस रोग से पत्तियों पर जलीय, भूरे रंग के गोल से अनियमित आकार के धब्बे बनते हैं। जिसके कारण अन्त में पत्तियाँ पूर्ण रूप से झुलस जाती हैं।

झुलसा रोग से ग्रसित टमाटर के फल व पत्ती

**नियंत्रणः** मैन्कोजेब 2 ग्राम या कॉपरऑक्सीक्लोराइड 3 ग्राम या रिडोमिल एम.जैड. 3 ग्राम प्रति लीटर पानी के घोल का छिड़काव करना चाहिए।

**उकठा (विल्ट):** इस रोग से रोगग्रस्त पौधों की पत्तियां पीले रंग की होकर सूखने लगती हैं एवं कुछ समय पश्चात् पौधा भी सूख जाता है।

उकठा रोग से ग्रसित टमाटर का पौधा

**नियंत्रण :** नियंत्रण के लिए फसल चक्र अपनाना चाहिए। 7.5 ग्राम थायोफनेट मिथाइल + 7.5 ग्राम रीडोमिल प्रति 15 लीटर पानी के साथ मिलाकर छिड़काव करना चाहिए।

**पर्णकुंचन (माथाबंदी):** इस रोग में पौधों के पत्ते सिकुड़कर मुड़ जाते हैं तथा छोटे व झुर्रीयुक्त हो जाते हैं। मोजेक रोग के कारण पत्तियों पर गहरे व हल्का पीलापन लिये हुए धब्बे बन जाते हैं। इस रोग को फैलाने में कीट सहायक होते हैं।

पर्ण कुंचन ( माथा बन्दी ) से ग्रसित टमाटर का पौधा

**नियंत्रण:** बुआई से पूर्व कार्बोफ्यूरान 3 जी का 8 से 10 ग्राम प्रति वर्ग मीटर के हिसाब से भूमि में मिलावें। पौध रोपण के 15 से 20 दिन बाद डाइमिथोएट 30 ईसी एक मिलीलीटर प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें। छिड़काव 15 से 20 दिन के अन्तर पर आवश्यकतानुसार दोहरावें। फूल आने के बाद उपरोक्त कीटनाशी दवाओं के स्थान पर मैलाथियान 50 ईसी एक मिलीलीटर प्रति लीटर के हिसाब से छिड़काव करना चाहिए।

## प्रमुख कीट एवं नियंत्रण

**सफेद मक्खी, पर्णजीवी (थ्रिप्स) हरा तेला व मोयला (एफिड):** ये कीट पौधों की पत्तियों व कोमल शाखाओं का रस चूसकर उन्हें कमजोर कर देते हैं। सफेद मक्खी टमाटर में विषाणु रोग फैलाती है। इस कीट के निम्फ (परी) व वयस्क दोनों पौधों का रस चूसते है तथा पत्तियों पर इनके द्वारा विसर्जित मल द्वारा काले कज्जली मोल्ड्स विकसित हो जाते हैं जिससे पौधों में प्रकाश संश्लेषण बाधित होता है। इनके प्रकोप से उपज पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

**नियंत्रण:** इनके नियंत्रण हेतु डाइमिथोएट 30 ई.सी. 1.0 मिली प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करना चाहिए। आवश्यकता पड़ने पर यह छिड़काव 15 से 20 दिन बाद दोहरावें। पौध रोपण के 15–20 दिन के अंतराल पर चेपा, सफेद मक्खी एवं थ्रिप्स के लिए 2 से 3 छिड़काव इमीडाक्लोप्रिड या एसीफेट के करने चाहिए। माइट की उपस्थिति होने पर ओमाइट का छिड़काव करें। टमाटर के मेड़ों के बीच में लोबिया (चंवला) लगाने से कीटो की संख्या में कमी आती है, जिससे 1–2 कीटनाशी के छिड़काव को कम किया जा सकता है।

**कटवा लट (कटवर्म):** इस कीट की लटें रात्रि में भूमि से बाहर निकल कर छोटे–छोटे पौधों को सतह के बराबर से काटकर गिरा देती हैं। दिन में यह मिट्टी के ढेलों के नीचे छिपी रहती हैं।

**नियंत्रण:** पौध रोपाई से पूर्व क्यूनॉलफॉस 1.5 प्रतिशत चूर्ण 20 से 25 किलो प्रति हेक्टेयर के हिसाब से भूमि में मिलावें।

**सफेद लट:** यह कीट टमाटर की फसल को काफी नुकसान पहुँचाता है। इसका आक्रमण जड़ों पर होता है। इसके प्रकोप से पौधे मर जाते हैं।

**नियंत्रण:** पौध रोपाई से पूर्व फोरेट 10 जी या कार्बोफ्यूरान 3 जी 20–25 किलो प्रति हेक्टेयर की दर से कतारों में पौधों के पास डालें।

**फल छेदक:** इस कीट की इल्ली फल में छेद करके अंदर से खाती हैं। कभी–कभी इनके प्रकोप से फल सड़ जाता है इससे उत्पादन में कमी के साथ–साथ फलों की गुणवत्ता भी कम हो जाती है।

**नियंत्रण:** संक्रमित फलों को नष्ट कर देना चाहिए। फेरोमोन ट्रेप का उपयोग करना चाहिए। क्यूनालफास 1.0 मि.ली. प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव या इंडोक्साकार्ब 5 एस.सी. 500 मि.ली. प्रति हेक्टेयर का छिड़काव करना चाहिए। प्रोफेनोफॉस का छिड़काव भी फल भेदक इल्ली एवं तम्बाकू की इल्ली के लिए कर सकते हैं।

**फल छेदक कीट के प्रकोप का लक्षण**

- टमाटर की फसल के मेड़ों पर चारों तरफ गेंदा की रोपाई करें। फूल खिलने की अवस्था में फल छेदक कीट टमाटर की फसल में कम जबकि गेदें की फलियों/फूलों में अधिक अंडा देते हैं।
- जबकि बाड़ के रूप में अरण्डी को खेत के चारों तरफ लगाने से भी पत्ती छेदक लट से बचाव होता है। पत्ती छेदक कीट पहले अरण्डी पर आक्रमण करता है अतः इसका आसानी से नियंत्रण किया जा सकता है।

**मूलग्रंथि सूत्रक्रमि (निमेटोड):** भूमि में सूत्रकृमि की उपस्थिति के कारण पौधे की जड़ों पर गांठें बन जाती हैं जिससे पौधों की बढवार रूक जाती है और उपज पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

**नियंत्रण:** गर्मियों में गहरी जुताई से सूत्रकृमि को नियंत्रण में रखा जा सकता है। इसके अलावा रोपाई से पूर्व 25 किलो कार्बोफ्युरान 3 जी प्रति हेक्टेयर की दर से भूमि में मिलाना चाहिए।

- सिंचाई की नालियों के समीप गेंदे के पौधे लगाने से भी टमाटर के पौधों पर निमेटोड का प्रभाव काफी कम हो जाता है, क्योंकि गेंदे के पौधों की जड़ों का रस स्राव निमेटोड के लिए हानिकारक होता है। सिंचाई के दौरान गेंदे की जड़ों से निकला स्राव पानी के साथ मिलकर टमाटर के पौधों तक पहुंचता है जिससे नेमेटोड की क्रियाशीलता समाप्त हो जाती है।

# बैंगन उत्पादन की उन्नत तकनीक

**प्रतापसिंह खापटे**
केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर

बैंगन एक महत्वपूर्ण सब्जी की फसल है तथा इसकी खेती देश के अधिकतर हिस्सों में की जाती है। टमाटर एवं मिर्च की अपेक्षा बैंगन कम नमी व अधिक गर्मी के प्रति सहिष्णु फसल है। व्यावसायिक स्तर पर बैंगन की खेती बैंगनी रंग के छोटे–लंबे से लेकर बड़े–गोल आकार के फलों के लिए की जाती है, इसके अलावा विभिन्न आकार के हरे फल वाली किस्में भी उपलब्ध हैं। बैंगन के फलों में कैल्शियम, लौहतत्व तथा विटामिन्स प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं। बैंगन की सब्जी मधुमेह से पीड़ित मरीजों के लिए उत्तम आहार है।

## जलवायु एवं भूमि

बैंगन एक गर्म जलवायु की फसल है। इसकी खेती मुख्यतया गर्मी या वर्षा ऋतु में की जाती है। किन्तु पाला न पड़ने वाले क्षेत्रों में इसकी खेती वर्षभर की जा सकती है। बैंगन की अच्छी पैदावार के लिए अनुकूल तापमान 20–30 डिग्री सेन्टीग्रेड होता है। इसके लिए उचित जल निकास वाली ह्यूमस युक्त दोमट मिट्टी सर्वोत्तम रहती है।

## पौध तैयार करना

टमाटर व मिर्च की तरह बैंगन की पौध या रोप उठी हुई क्यारिओं में या फिर प्रो–ट्रेज में तैयार करना चाहिए। प्रो–ट्रेज में पौध अपेक्षाकृत स्वस्थ तथा जल्दी तैयार होते हैं। इसकी पौध 98 छिद्र वाली प्रो–ट्रेज में कोकोपिट भरकर आसानी से तैयार की जाती है। खेत में उठी हुई क्यारियों में तैयार करने हेतु एक मीटर चौड़ी व 3 मीटर लम्बी, 10 से 15 सेमी ऊँची क्यारियाँ बनानी चाहिए। बीजों को बुआई से पूर्व केप्टान (2 ग्राम/किलो बीज) से उपचारित करना चाहिए। गर्मी की फसल के लिए दिसम्बर–जनवरी में तथा सर्दी की फसल के लिए सितम्बर में बुआई करनी चाहिए। एक हेक्टेयर खेत में पौध रोपाई करने हेतु 350 से 500 ग्राम बीज तथा संकर किस्मों के लिए 150 से 200 ग्राम बीज पर्याप्त रहता है।

बैंगन की उन्नत तैयार पौध

फलों से लदा बैंगन का पौधा

## उन्नत किस्में

फलों के आकार के अनुसार बैंगन की प्रमुख किस्में निम्न हैं :

| फल विशेषता | उन्नत किस्म |
|---|---|
| बड़े–गोल फल | आजाद बी–1, बी–आर–112, हिसार श्यामल, जामुनी गोल, के–2029, पंजाब बहार |
| लंबे फल | पूसा पर्पल लॉन्ग |
| छोटे–गोल फल | पूसा पर्पल क्लस्टर, पूसा भैरव, पूसा अनुपम, पूसा उत्तम, पूसा उपकार, पूसा बिन्दु, पूसा अंकुर |
| संकर किस्में | पूसा हाइब्रिड–5, पूसा हाइब्रिड–5, पूसा हाइब्रिड–9 |

## खाद एवं उर्वरक

पौधों की रोपाई करने के 3–4 सप्ताह पूर्व 30–35 टन अच्छी तरह से सड़ी हुई गोबर की खाद या कम्पोस्ट खेत में भली–भाँति मिला देनी चाहिए। पौध रोपाई से पूर्व प्रति हेक्टेयर 50 किलो नत्रजन, 50 किलो फॉस्फोरस एवं 50 किलो पोटाश खेत की अंतिम तैयारी के समय देना चाहिए। इसके अलावा पौध रोपाई के लगभग 30 दिन बाद पुनः 50 किलो नत्रजन की मात्रा खड़ी फसल में देकर सिंचाई करनी चाहिए। यदि संकर किस्मों का उत्पादन ले रहे हों तो 30–35 टन गोबर की खाद या कम्पोस्ट, 180 किलो नत्रजन, 120 किलो फॉस्फोरस एवं 80 किलो पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से देनी चाहिए।

## पौधों की रोपाई

नर्सरी में जब पौधे 4 सप्ताह (प्रो–ट्रेज में) से 5 सप्ताह (मिट्टी में) के हो जाएं तो, इनकी रोपाई शाम के समय खेत में कर देना चाहिए। ज्यादा फैलने वाली किस्मों को 75 x 60 से. मी. दूरी पर तथा कम फैलने वाली किस्मों को 60 x 60 से.मी. दूरी पर रोपाई करनी चाहिए। ड्रिप सिंचाई विधि से अगर सिंचाई करनी हो तो पौध की रोपाई एक मीटर चौड़ी तथा 10–15 से.मी. ऊँची उठी हुई क्यारिओं पर दोहरी पंक्ति पद्धति में करनी चाहिए।

## सिंचाई

सर्दियों में 8–10 दिन जबकि गर्मी में 5–6 दिन के अंतराल से आवश्यकतानुसार सिंचाई करते रहना चाहिए।

## निराई–गुड़ाई

पौध रोपाई के 20–25 दिन बाद पहली निराई–गुड़ाई एवं आवश्यकतानुसार दूसरी निराई–गुड़ाई कर खेत को खरपतवार रहित रखना चाहिए।

## फलों की तुड़ाई एवं उपज

बैंगन के फलों की तुड़ाई अच्छे व आकर्षक रंग, उत्तम आकार एवं अपरिपक्व फल की अवस्था में करनी चाहिए। खरीफ की फसल के फल सितम्बर से नवम्बर तक व गर्मी की फसल के फल अप्रैल से जून तक उपलब्ध होते हैं। बैंगन की औसत उपज 30 से 60 टन प्रति हेक्टेयर तक होती है।

## फसल सुरक्षा

### प्रमुख रोग एवं नियंत्रण

**आर्द्र गलन:** यह रोग अक्सर पौधशाला में लगता है। इस रोग के प्रकोप से पौधे का जमीन की सतह पर स्थित तने का भाग काला पड़ जाता है और छोटे–छोटे पौधे गिरकर मरने लगते हैं।

**नियंत्रण:** बुआई से पूर्व नर्सरी– क्यारी को भली–भांति शोधित कर लेना चाहिए। इसके अलावा बीज को थाइराम या केप्टान की 3 ग्राम प्रति किलो बीज दर से उपचारित कर बोना चाहिए।

**उकठा या म्लानि रोग:** यह रोग वर्टीसीलियम डहेली नामक कवक द्वरा उत्पन्न होता है। इस रोग का प्रकोप मुख्य रूप से जड़ों एवं तनों पर होता है। इससे संक्रमित पौधा बौना रह जाता है और सामान्यतः फलोत्पादन नहीं करता, पुष्प तथा फल विकृत होकर गिर जाते हैं। यदि तने को अनुप्रस्थ तथा लंबवत काटें तो सवहंनी उतक घूसर काले रंग का दिखाई देता है। पत्तियाँ पीली पड़ कर गिर जाती हैं।

**नियंत्रण:** यह एक मृदा जनित रोग है इसलिये मृदा उपचार ट्राइकोडर्मा तथा सूडोमोनास फलोरिसेंस द्वारा किया जाता है। रोग प्रतिरोधी किस्मों का चयन करना चाहिए। रोग के लक्षण दिखने पर बेनटेल (0.1 प्रतिशत) का छिड़काव करना चाहिए।

**लिटल लीफ:** यह माइकोप्लाजमा जनित रोग है। इस रोग से ग्रसित पौधों की पत्तियाँ छोटी व पीली पड़ जाती हैं और पौधों में फल भी नहीं लगता। इस तरह का पौधा दिखाई देते ही उखाड़कर नष्ट कर देना चाहिए।

'लिटिल लीफ' रोग से ग्रसित बैंगन का पौधा

**फोमोप्सिस झुलसा:** इस रोग से ग्रसित पौधों की पत्तियों व फलों पर गहरे भूरे रंग का धब्बा दिखाई देता है।

**नियंत्रण:** थाइराम (3 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज) से उपचार करके बीज बोने से इस रोग की समस्या से बचा जा सकता है। खड़ी फसल में डाइथेन जेड 78 को 2 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से 7 से 10 दिन के अंतराल पर छिड़काव करने से इस रोग को नियंत्रित किया जा सकता है।

बैंगन के पौधे पर तना व फल छेदक कीट का प्रकोप

**सफेदमक्खी, थ्रिप्स हरा तेला व मोयला:** ये कीट पौधों की पत्तियों व कोमल शाखाओं का रस चूसकर उन्हें कमजोर कर देते हैं जिससे उपज पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

**नियंत्रण:** डाइमिथोएट 30 ई.सी. 1.0 मिली या इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. की 0.3 मिली प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करना चाहिए। आवश्यकता पड़ने पर यह छिड़काव 15 से 20 दिन बाद दोहराना चाहिए।

**फलछेदक कीट:** इस कीट की लटें फल में छेद कर के अंदर से गूदे को खाती हैं। कभी–कभी इनके प्रकोप से फल सड़ जाता है। इससे उत्पादन में कमी के साथ–साथ फलों की गुणवत्ता भी कम हो जाती है।

**नियंत्रण:** इसके नियंत्रण हेतु क्यूनालफास 1.0 मिली प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें।

**मूलग्रंथि सूत्रक्रमि :** भूमि में इस कीट की उपस्थिति के कारण बैंगन की जड़ों पर गांठें बन जाती हैं तथा पौधों की बढ़वार रुक जाती है एवं उपज पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

**नियंत्रण:** इसके नियंत्रण हेतु रोपाई से पूर्व 25 कि.ग्रा. कार्बोफ्युरान 3 जी चूर्ण प्रति हेक्टेयर की दर से भूमि में मिला देना चाहिए।

# मिर्च उत्पादन की उन्नत तकनीक

**प्रदीप कुमार**
केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर

मिर्च सब्जी की एक मुख्य नकदी फसल है। भारतीय व्यंजन में हरी मिर्च सब्जी बनाने में तथा लाल मिर्च को मसाले के रूप में प्रयुक्त किया जाता है। मिर्च में विटामिन्स ('ए' और 'सी') तथा खनिज लवण (फॉस्फोरस और कैल्शियम) प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं। मिर्च की खेती राजस्थान, खासकर पश्चिमी राजस्थान में वर्षों से होती आ रही है। जोधपुर जिले का मथानिया क्षेत्र मिर्च की खेती के लिए राष्ट्रीय स्तर पर अपनी अलग पहचान रखता है।

## जलवायु एवं भूमि

मिर्च की फसल के लिए गर्म एवं आद्र जलवायु लाभकारी है। इसके पौधे के लिये अत्यधिक ठंड व गर्मी दोनों ही हानिकारक है। अंकुरण से बढ़वार के लिए 15–35 डिग्री सेन्टीग्रेड तापमान मिर्च का अच्छा उत्पादन प्राप्त करने के लिए अनुकूल रहता है। पश्चिमी राजस्थान में इसकी खेती मुख्यरूप से खरीफ के मौसम में की जाती है। मिर्च की फसल पाले को सहन नहीं कर पाती, अगेती फसल लेने से इसे पाले से बचाया जा सकता है। वर्षा आधारित फसल के लिए 100 से.मी. वर्षा वाले क्षेत्रों में इसे आसानी से उगाया जा सकता है।

इसकी खेती लगभग सभी प्रकार की मिट्टी में की जा सकती हैं परंतु दोमट अथवा चिकनी बलुई मिट्टी, जिसमें कार्बनिक पदार्थ की मात्रा अधिक हो, सबसे उपयुक्त होती है। लवणीय तथा क्षारीय भूमि इसके लिए उपयुक्त नहीं है। लवणीय भूमि इसके अंकुरण और प्रारंभिक विकास को प्रभावित करती है।

## उन्नत किस्में

हरीपुर–रायपुर, आर.सी.–1, मथानिया लोकल, कृष्णा हाइब्रिड एफ–1, आदि इस क्षेत्र में काफी लोकप्रिय किस्में हैं। इनके अलावा पूसा ज्वाला, पूसा सदाबहार, पंजाब लाल, सिंधुरी, पंत सी–1, अर्का स्वेता, अर्का हरिता, अर्का मेघना इत्यादि किस्में भी उगाई जा सकती हैं।

## नर्सरी–पौध तैयार करना

मिर्च की नर्सरी के लिए 1 मीटर चौड़ाई की 3 मीटर लम्बी, 10–15 से.मी. ऊंची क्यारियाँ बनाई जानी चाहिए। बीजों को बुआई से पूर्व 2 ग्राम केप्टान या थाइराम प्रति किलो बीज की दर से उपचारित करना चाहिए। एक हेक्टेयर में पौध रोपण के लिए लगभग 1.5 कि.ग्रा. बीज, जबकि संकर किस्मों के लिए 400–500 ग्राम बीज प्रति हेक्टेयर पर्याप्त होता है। नर्सरी में पौधों को कीड़ों के प्रकोप से बचाने के लिए इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. की 3 मिली प्रति 10 लीटर पानी के हिसाब से घोल बनाकर छिड़काव करें।

खेत में खड़ी मिर्च की फसल

## खाद एवं उर्वरक

पौध रोपाई के 3–4 सप्ताह पूर्व प्रति हेक्टेयर 20–25 टन सड़ी हुई गोबर या कम्पोस्ट की खाद भली–भाँति मिट्टी में मिला देनी चाहिए। उर्वरकों का उपयोग मृदा जाँच के अनुसार करना चाहिये। अच्छे उत्पादन हेतु प्रति हेक्टेयर 150 कि.ग्रा. नत्रजन, 100 कि.ग्रा. फास्फोरस तथा 80 कि.ग्रा. पोटाश देना चाहिए। नत्रजन की आधी मात्रा और फास्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा रोपाई से पूर्व देनी चाहिए। नत्रजन की शेष आधी मात्रा रोपाई के 30 एवं 45 दिन बाद दो बराबर हिस्सों में खेत में छिड़कर सिंचाई के साथ देना चाहिए। ड्रिप से सिंचाई करने पर पानी की बचत तो होती ही है, साथ ही इसके द्वारा घुलनशील उर्वरकों का प्रयोग किये जाने से इनकी मात्रा भी कम लगती है। साथ ही पैदावार भी अधिक प्राप्त होती है।

## पौधों की रोपाई

नर्सरी में बीज की बुआई के 4–5 सप्ताह बाद पौध रोपने योग्य हो जाती हैं। इस समय इसके पौधों की रोपाई खेत में कर देना चाहिए। पौध की रोपाई खेत में शाम के समय 45 x 30 से.मी. साधारण किस्मों के लिए तथा 60 x 45 से.मी. संकर किस्मों को कतारों में करना चाहिए।

## सिंचाई एवं निराई–गुड़ाई

बारिश नहीं होने पर आवश्यकतानुसार हल्की सिंचाई करते रहना चाहिए। गर्मियों में 5–6 दिन के अन्तराल पर जबकि सर्दियों में 10–15 दिन के अन्तराल पर सिंचाई करनी चाहिए। अच्छा उत्पादन प्राप्त करने के लिए पहली निराई–गुड़ाई पौध रोपाई के 20 दिन बाद तथा दूसरी 15 दिन के अन्तराल पर करके खेत को खरपतवार रहित रखना चाहिए। फसल की सिंचाई ड्रिप विधि से भी की जा सकती है। खरपतवार नियंत्रण हेतु 300 ग्राम ऑक्सीफ्ल्यूओरफेन का पौध रोपण से ठीक पहले 600–700 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

मिर्च की फसल में निराई-गुड़ाई

## फलों की तुड़ाई एवं उपज

हरी मिर्च रोपण के लगभग 85–90 दिन बाद तोड़ने योग्य हो जाती है। इस तरह 1–2 सप्ताह के अन्तर पर पके फलों को तोड़ा जाता है। हरी चरपरी मिर्च की उपज लगभग 100–150 क्विंटल प्रति हेक्टेयर तथा इसी उपज से 15–25 क्विंटल सूखी लाल मिर्च प्राप्त की जा सकती है।

हरी मिर्च के फलों से लदे पौधे

लाल मिर्च के फलों से लदे पौधे

## फसल सुरक्षा

### प्रमुख कीट एवं नियंत्रण

**सफेद लट:** इस कीट के नियंत्रण हेतु फोरेट 10 जी या कार्बोफ्यूरान 3 जी का 25 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से रोपाई से पूर्व जमीन में मिला देनी चाहिए।

**सफेद मक्खी, पर्णजीव (थ्रिप्स), हरा तेला व मोयला:** ये कीट पत्तियों एवं पौधों के कोमल भाग से रस चूसकर काफी नुकसान पहुँचाते हैं। साथ ही पर्णकुंचन एवं मोजेक रोग के विषाणुओं के फैलने में सहायक होते हैं।

**नियंत्रण:** इनकी रोकथाम के लिए इमिडाक्लोप्रिड 3 मिली प्रति 10 लीटर पानी या डाइमेथोएट 1 मिली प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें। आवश्यकतानुसार 15–20 दिन बाद फिर से छिड़काव कर सकते हैं।

**सूत्रक्रमि:** इसके प्रकोप से पौधों की जड़ों में गांठें बन जाती हैं तथा पौधे पीले पड़ जाते हैं और पैदावार में कमी हो जाती है।

**नियंत्रण:** इसके नियंत्रण हेतु 25 कि.ग्रा. कार्बोफ्यूरान 3 जी. प्रति हेक्टेयर की दर से रोपाई के समय पौधों की रोपाई के स्थान पर भूमि में मिला लेना चाहिए।

**दीमक:** दीमक के नियंत्रण हेतु बुआई के समय 2 लीटर क्लोरोपाइरीफास दवा को 4 किलो रेत में मिलाकर प्रति हेक्टेयर खेत में डालना चाहिए। खड़ी फसल में दीमक को नियन्त्रित करने के लिए फिप्रोनिल 5 एस.सी. की 2.5 लीटर मात्रा अथवा क्लोरोपायरीफोस 20 ई.सी. की 4 लीटर मात्रा प्रति हेक्टेयर की दर से सिंचाई के पानी के साथ प्रयोग करना चाहिए।

दीमक के प्रकोप से ग्रसित मिर्च का पौधा

## प्रमुख रोग एवं नियंत्रण

**आद्रगलन (डेम्पिंगऑफ):** यह एक बीज जनित बीमारी है, जिससे जमीन की सतह पर स्थित तने का भाग काला पड़कर कमजोर हो जाता है तथा नन्हें पौधे गिरकर मर जाते हैं।

**नियंत्रण:** बीज को बुआई से पूर्व थाइराम या केप्टान 3 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित कर जमीन से 15 सेमी ऊंची क्यारियों में बोना चाहिए।

**तना गलन:** ग्रीष्म कालीन मिर्च में तना गलन के नियंत्रण हेतु टोपसिन एम 0.2 प्रतिशत से बीजोपचार करके बुआई करें एवं पौध को रोपाई से पहले आधे से एक घंटे तक 0.2 प्रतिशत टोपसिन एम घोल में डुबोकर लगाना चाहिए।

**छाछ्या (पाउडरी मिल्डयू):** इस रोग के प्रकोप से पत्तियों पर सफेद चुर्णी धब्बे दिखाई देते हैं तथा अधिक रोग ग्रस्त पत्तियाँ पीली पड़कर झड़ जाती हैं।

**नियंत्रण:** केराथेन अथवा केलेक्सिन 1 मिली प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें, आवश्यकतानुसार 15–20 दिन बाद फिर से छिड़काव कर सकते हैं।

**श्याम वर्ण (एन्थ्रेक्नोज):** पत्तियों पर छोटे–छोटे काले धब्बे बन जाते है तथा पत्तियाँ झड़ने लगती हैं। उग्र अवस्था में शाखायें ऊपर शीर्ष से नीचे की तरफ सूखने लगती हैं।

**नियंत्रण:** मैन्कोजेब 2 ग्राम या क्युमान एल 1.0 मिली प्रति लीटर पानी के घोल का 15 दिन के अन्तराल पर 2–3 छिड़काव करें।

मिर्च में श्याम वर्ण ( एन्थ्रेक्नोज )
रोग के प्रकोप का लक्षण

**पर्णकुंचन मोजेक (विषाणु रोग):** पर्णकुंचन में पत्ते सिकुड़कर मुड़ जाते हैं तथा छोटे रह जाते हैं। मोजेक के कारण पत्तियों पर गहरे व हल्का पीलापन लिये हुए धब्बे बन जाते हैं।

**नियंत्रण:** रोगग्रस्त पौधों को शीघ्र उखाड़कर नष्ट करें तथा रोग को आगे फैलने से रोकने के लिए रस चूसने वाले कीड़ों की रोकथाम पहले करें। फूल आने के बाद अन्य कीटनाशकों के स्थान पर इमिडाक्लोप्रिड 3 मिली प्रति 10 लीटर पानी या डाइमेथोएट 1.0 मिली प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करें।

पर्णकुंचन मोजेक रोग के लक्षण

# प्याज उत्पादन की उन्नत तकनीक

**प्रदीप कुमार एवं प्रतापसिंह खापटे**
केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर

प्याज राजस्थान में उगायी जाने वाली एक महत्वपूर्ण व्यावसायिक नकदी सब्जी की फसल है। प्याज का उपयोग लगभग हर घर में प्रतिदिन किसी न किसी रूप में होता है। इसका इस्तेमाल सलाद, सब्जी, अचार एवं मसाले के रूप में किया जाता है। गर्मी में लू लग जाने तथा गुर्दे की बीमारी में भी प्याज लाभदायक रहता है।

उन्नत प्याज उत्पादन

## जलवायु एवं भूमि

प्याज की खेती के लिए अधिक गर्म और अधिक ठण्डी जलवायु अनुकूल नहीं होती है। कन्द बनने के समय कुछ अधिक तापमान व लम्बी अवधि के दिन अच्छे प्याज कन्द उत्पादन के लिए उत्तम होता है।

प्याज की खेती के लिए जीवांश युक्त उपजाऊ दोमट मिट्टी, जिसमें जल निकास की उत्तम व्यवस्था हो, सर्वोत्तम रहती है। अत्यधिक क्षारीय या अम्लीय भूमि में कन्दों की वृद्धि अच्छी नहीं होती है। गंधक की कमीवाली भूमि में 400 किलो जिप्सम प्रति हेक्टेयर की दर से खेत की अन्तिम तैयारी के कम से कम 15 दिन पूर्व मिलायें।

## उन्नत किस्में

राजस्थान में प्याज की खेती मुख्य रूप से रबी में की जाती है, परंतु पिछले कुछ वर्षों से खरीफ में भी इसकी खेती की जा रही है।

## बीज और बुआई

रबी की फसल के लिए नर्सरी में बीज की बुआई नवम्बर में करनी चाहिए। खरीफ फसल दो प्रकार से ली जाती है – एक तो बीज द्वारा पौधा बनाकर तथा दूसरी, बीज द्वारा पहले छोटे–छोटे कन्द व कन्दों की पुनः बुआई करके। बीज द्वारा पौधा बनाकर फसल लेनी हो तो, प्याज की बुआई मई के अन्तिम सप्ताह से लेकर जून के मध्य तक करते हैं। यदि गन्ठियों द्वारा खरीफ में अगेती फसल लेनी हो तो बीज की बुआई जनवरी के अन्तिम सप्ताह में या फरवरी के प्रथम सप्ताह में करते हैं। कन्दों की बुआई पुनः अगस्त माह में करते हैं।

खेत में खड़ी प्याज की फसल

एक हेक्टेयर क्षेत्र में फसल लगाने के लिए 8–10 कि.ग्रा. बीज पर्याप्त होता है। पौधे एवं गन्ठियां तैयार करने के लिए बीज को 3 x 1 मीटर आकार की क्यारियों में बोना चाहिए।

## उन्नत किस्में

| मौसम | उन्नत किस्में |
|---|---|
| रबी | आर.ओ.–59, आर.ओ.–252, पूसारेड, पूसा रतनार, एग्रीफाउंड लाइट रेड, एग्रीफाउंड रोज, पूसा व्हाइट राउंड, पूसा व्हाइट फ्लैट |
| खरीफ | आर.ओ.–1, एन. (निफाद)–53, एग्रीफाउंड डार्करेड (ए.डी.आर.) |

वर्षा काल में उचित जल निकासवाली क्यारियों की ऊँचाई 10–15 से.मी. रखनी चाहिए। नर्सरी में अच्छी तरह खरपतवार निकालने तथा दवा डालने के लिए बीजों को 5–7 से.मी. की दूरी पर कतारों में 2–3 से.मी. गहराई पर बोना अच्छा रहता है। क्यारियों की मिट्टी को बुआई से पहले अच्छी तरह भुरभुरी कर लेनी चाहिए।

पौधों को आर्द्रगलन बीमारी से बचाने के लिए बीज को ट्राइकोडर्मा विरिडी (4 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज) या थाइराम (2 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज) से उपचारित करके बोना चाहिए। बोने के बाद बीजों को बारीक खाद एवं भुरभुरी मिट्टी व घास से ढँक देना चाहिए। उसके बाद झारे से पानी देते रहते हैं और फिर अंकुरण के बाद घास को हटा देना चाहिए।

## खाद एवं उवर्रक

प्याज की अच्छी पैदावार के लिए पूर्णतया सड़ी हुई गोबर की खाद या कम्पोस्ट खाद 30–40 टन प्रति हेक्टेयर की दर से पौध रोपाई के 15 दिन पूर्व खेत में भली–भाँति मिला देना चाहिए। इसके अलावा 60 कि.ग्रा. नत्रजन, 60 कि.ग्रा. फास्फोरस एवं 100 कि.ग्रा. पोटाश की दर से रोपाई से पूर्व खेत की अंतिम तैयारी के समय देनी चाहिए। रोपाई के एक से डेढ़ माह बाद खड़ी फसल में पुनः प्रति हेक्टेयर 60 कि.ग्रा. नत्रजन देनी चाहिए।

## पौधों की रोपाई

पौध लगभग 7–8 सप्ताह में रोपाई योग्य हो जाती है। खरीफ फसल के लिए रोपाई का उपयुक्त समय जुलाई के अन्तिम सप्ताह से लेकर अगस्त तक है। रोपाई करते समय कतारों के बीच की दूरी 15 से.मी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 10 से.मी. रखते हैं।

खेत में तैयार प्याज की फसल

## गन्ठियों से बुआई

गन्ठियों की बुआई 45 से.मी. की दूरी पर बनी मेडों पर 10 से.मी. की दूरी पर दोनों तरफ करते हैं। 1 से 2 से.मी. व्यास वाले आकार की गन्ठियों को ही चुनना चाहिए। एक हेक्टेयर बुआई के लिए लगभग 10 क्विंटल गन्ठियां पर्याप्त होती हैं।

## सिंचाई

बुआई या रोपाई के साथ एवं उसके तीन–चार दिन बाद हल्की सिंचाई अवश्य करनी चाहिए ताकि मिट्टी में उचित मात्रा में नमी बनी रहे। इसके बाद हर 8–12 दिन में सिंचाई अवश्य करते रहना चाहिए। फसल तैयार होने पर पौधे के शीर्ष पीले पड़कर गिरने लगते हैं तो सिंचाई बन्द कर देनी चाहिए।

## निराई–गुड़ाई

बुआई से पूर्व 1.5–2.0 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर फ्लूक्लोरेलिन नामक खरपतवारनाशी को छिड़ककर भूमि में मिलायें अथवा बुआई के पश्चात् व बीज अंकुरण से पूर्व 1.5–2.0 कि.ग्रा एलाक्लोर का छिडकाव करें। इसके अलावा 45 दिन की फसल होने पर एक गुड़ाई कर देनी चाहिए।

## कन्दों की खुदाई एवं उपज

गन्ठियों से लगाई प्याज की फसल 60 से 100 दिन में तथा बीजों से तैयार की गई फसल 140 से 150 दिन में तैयार होती है। रबी फसल की खुदाई पत्तियों के पीली होकर जमीन पर गिरने पर शुरू करनी चाहिए। खरीफ मौसम में पत्तियाँ नहीं गिरती हैं अतः दिसम्बर–जनवरी में जब कंदों का आकार 6 से 8 से.मी. व्यास का हो जाये तो पत्तियों को पैरों से जमीन पर गिरा देना चाहिए, जिससे पौधों की वृद्धि रूक जाये एवं गाठें ठोस हो जायें। इसके लगभग 15 दिन बाद कंदों की खुदाई करनी चाहिए।

इस प्रकार उन्नत तकनीक से तैयार की प्याज की फसल से प्रति हेक्टेयर लगभग 30 से 35 टन प्याज कंद प्राप्त किया जा सकता है।

## कन्दों को सुखाना

खुदाई के तुरंत बाद पत्तियों सहित कंदों को एक सप्ताह तक खेत में ही सुखाना चाहिए, ध्यान रहे कि कंदों पर सीधे धूप ना पड़े। यदि धूप तेज हो तो कंदों को छाया में रखें तथा एक सप्ताह बाद पत्तों को कंद के 2.0 से 2.5 से.मी. ऊपर से काटें तथा एक सप्ताह तक कंदो को पुनः छाया में ही सुखायें।

## फसल सुरक्षा

### प्रमुख कीट एवं नियंत्रण

**पर्णजीवी (थ्रिप्स):** ये सूक्ष्म आकार के कीट होते हैं तथा इनका आक्रमण तापमान में वृद्धि के साथ तेजी से बढ़ता है और मार्च के महीने में अधिक स्पष्ट दिखाई देता है। इन कीटों द्वारा रस चूसने स पत्तियाँ कमजोर हो जाती हैं तथा आक्रमण के स्थान पर सफेद चकत्ते पड़ जाते हैं।

**नियंत्रण:** इसके नियंत्रण के लिए इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. (0.3–0.5 मिली प्रति लीटर पानी) का छिड़काव करें। आवश्यकतानुसार पुनः 15 दिन अंतराल पर छिड़काव दोहरा देवें।

### प्रमुख रोग एवं नियंत्रण

**तुलासिता:** पत्तियों की निचली सतह पर सफेद रूई जैसी फफूंद की वृद्धि दिखाई देती है।

**नियंत्रण:** इसके नियंत्रण के लिए मेन्कोजेब या जीनेब का 2 ग्राम प्रति लीटर पानी की दर से छिड़काव करना चाहिए।

**अंगमारी:** इस रोग के प्रकोप से पत्तियों की सतह पर सफेद धब्बे बन जाते हैं जो बाद में बीच से बैंगनी रंग के हो जाते हैं।

**नियंत्रण:** मेन्कोजेब या जीनेब का 2 ग्राम प्रति लीटर पानी के हिसाब से छिड़काव करना चाहिए। इसके साथ तरल (स्प्रेडर) साबुन का घोल अवश्य मिलाएँ।

**गुलाबी जड़ सडन:** इस रोग में जडें हल्की गुलाबी होकर गलने लगती हैं।

**नियंत्रण:** बुआई से पूर्व बीज को कार्बेण्डाजिम (1 ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज) से उपचार करना चाहिए। पौध रोपण के समय पौधों को कार्बेण्डाजिम के 1 ग्राम प्रति लीटर पानी के घोल में डुबोकर रोपाई करने से इस बीमारी के प्रकोप से बचा जा सकता है।

# गाजर उत्पादन की उन्नत तकनीक

**प्रदीप कुमार एवं प्रतापसिंह खापटे**
केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर

गाजर सर्दियों में उगाई जाने वाली एक प्रमुख सब्जी फसल है। इसकी ताजी जड़ों का उपयोग सलाद, जूस, हलवा तथा सब्जी बनाने के अलावा प्रसंस्कृत उत्पादों जैसे अचार, मुरब्बा, जैम, सूप, कैन्डी आदि में किया जाता है। इसकी जड़ों का संतरी–लाल रंग इसमें उपस्थित बीटा कैरोटीन की वजह से होता है, जो एक उत्तम प्रकार का एण्टीऑक्सीडेण्ट है। गाजर आँखों की अच्छी दृष्टि तथा शरीर की प्रतिरोधक क्षमता बनाए रखने में मदद करता है।

मैदानी भागों में गाजर की खेती रबी अर्थात सर्दियों के मौसम में की जाती है। पश्चिमी राजस्थान के शुष्क भागों, खासकर जोधपुर व इसके आस–पास के सिंचित क्षेत्रों में इसकी खेती व्यापक स्तर पर की जाती है। इस क्षेत्र की रेतीली भूमि इसकी जड़ों के अच्छे विकास के साथ–साथ उत्तम आकार के लिए उत्तरदायी है। इस क्षेत्र में पैदा होने वाली गाजर अपेक्षाकृत अधिक लम्बी व सीधी होती है। पोषक तत्वों से भरपूर पौधों के ऊपरी हिस्से (पत्तियाँ), जिनमें प्रोटीन, खनिज लवण तथा विटामिन्स अच्छी मात्रा में पाये जाते हैं, का उपयोग पशुओं के लिए हरे चारे के रूप में किया जाता है।

यूरोपीय गाजर की अपेक्षा अधिक तापमान सहन करने में सक्षम होने के कारण इन क्षेत्रों में मुख्यतया एशियाई गाजर की खेती की जाती है। गाजर की बुआई यहाँ कई बार की जाती है जिससे बाजार में इनकी उपलब्धता नवम्बर से लेकर लगभग फरवरी अन्त तक लगातार बनी रहती है।

## जलवायु एवं भूमि

गाजर के बीज के अच्छे जमाव हेतु 18 से 24 डिग्री सेन्टीग्रेड तापमान अच्छा माना जाता है। अच्छे जड़ विकास एवं रंग हेतु 16–21 डिग्री सेन्टीग्रेड तापक्रम उत्तम पाया गया है। इसकी खेती विभिन्न प्रकार की मिट्टी में की जा सकती है, परन्तु उचित जल निकास वाली जीवांश युक्त रेतीली अथवा रेतीली दोमट मिट्टी इसकी सफल खेती के लिए उत्तम होती है। भारी मिट्टी में इसकी जड़ो का आकार व रंग अच्छा नहीं बन पाता। 6.5–7.0 पी.एच. मान वाली भूमि इसकी खेती के लिए उपयुक्त मानी जाती है, परन्तु इसे लगभग 8 पी.एच. मान तक सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है।

## उन्नत किस्में

अच्छे उत्पादन हेतु गाजर की उन्नतशील किस्मों का चयन महत्वपूर्ण है। पूसा केसर, पूसा मेघाली, पूसा रुधिरा, स्लैक्शन 21, स्लैक्शन 233, सुपर रेड आदि एशियाई गाजर की प्रमुख किस्में हैं।

## बीज एवं बुआई

बीज की मात्रा बुआई के समय, भूमि के प्रकार, बीज की गुणवत्ता आदि पर निर्भर करती है, जो प्रति हेक्टेयर 5 से 8 कि.ग्रा. तक हो सकती है। अगेती फसल की बुआई हेतु अपेक्षाकृत अधिक बीज की आवश्यकता पड़ती है। हल्की क्षारीय भूमि में तथा बुआई पश्चात् पपड़ी बनने की दशा में सघन बुआई करने की वजह से बीज की मात्रा बढ़ जाती है। गाजर की बुआई जुलाई से लेकर नवम्बर तक की जा सकती है, परन्तु अक्टूबर में बोई जाने वाली फसल उत्पादन तथा गुणवत्ता दोनों दृष्टि से सर्वोत्तम मानी जाती है। भारी मिट्टी में बुआई मेड़ों पर जबकि रेतीली मिट्टी में समतल क्यारियों में करनी चाहिए।

गाजर की शुरूआती पौध बढवार की अवस्था

बुआई क्यारियों में 1–2 से.मी. गहराई पर 30–40 से.मी. की दूरी पर बनी पंक्तियों में करनी चाहिए। बीजों को बारीक छनी हुई रेत में मिलाकर बुआई करने से बीजों का वितरण समान होता है तथा बीज भी कम लगता है। बीज को 12–24 घंटे तक पानी में भिगोने के पश्चात् छाए में सुखाकर बुआई करने से बीज आसानी से व जल्दी उगते हैं। बुआई से पूर्व

बीजों को राख के साथ रगड़ना भी जमाव के लिए अच्छा माना जाता है। बीज उगने के 2–3 सप्ताह के भीतर प्रत्येक पंक्ति में लगभग 5–7 से.मी. की दूरी छोड़कर फालतू पौधों को निकाल देना चाहिए, इससे पौधों की बढ़वार के लिए पर्याप्त स्थान मिलता है तथा जड़ों का विकास भी अच्छा होता है।

खेत में खड़ी गाजर की फसल

## खेत की तैयारी

गाजर की अच्छी फसल के लिए भूमि की लगभग 1 फुट की गहराई तक अच्छी तरह से जुताई करनी चाहिए, जिसके लिए एक बार डिस्क हल से गहरी जुताई तथा तीन–चार बार हैरो चलाकर पाटा लगा देना चाहिए ताकि मिट्टी एकदम भुरभुरी हो जाये।

## खाद एवं उर्वरक

गाजर की अच्छी पैदावार हेतु बुआई से लगभग 2–3 सप्ताह पूर्व 20–25 टन प्रति हेक्टेयर पूर्णतया सड़ी हुई गोबर की खाद को खेत में भली–भाँति मिला देनी चाहिए। उर्वरकों को अन्तिम जुताई के समय भूमि में मिलाकर आवश्यकतानुसार मेड़ें तथा क्यारियां बना लेनी चाहिए। उर्वरकों का प्रयोग मिट्टी की जाँच के आधार पर करना चाहिए। सामान्य भूमि की दशा में 100 कि.ग्रा. नत्रजन, 60 कि.ग्रा. फास्फोरस तथा 60 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर प्रयोग करना चाहिये। नत्रजन की आधी तथा फास्फोरस एवं पोटाश की पूरी–पूरी मात्रा अंतिम जुताई के समय तथा नत्रजन की शेष बची आधी मात्रा बुआई के लगभग एक माह पश्चात् निराई–गुड़ाई के समय देना चाहिए। नत्रजन को अधिक मात्रा में तथा देरी से देने से बचना चाहिए क्योंकि इसकी वजह से गाजर पर सफेद सूक्ष्म रोम तो अधिक बनते ही हैं साथ–ही–साथ गाजर की भण्डारण क्षमता पर भी प्रतिकूल असर पड़ता है, जिससे दूरस्थ बाजारों में भेजी जाने वाली गाजर का परिवहन के दौरान जल्द खराब हो जाने से इनका बाजार मूल्य कम मिलता है।

## सिंचाई

गाजर के बीज का जमाव धीरे तथा कुछ देरी से होता है, जिसके लिए बुआई के पश्चात् शीघ्र एक हल्की सिंचाई कर देनी चाहिए। भूमि में पर्याप्त नमी बनाये रखने के लिए आवश्यकतानुसार 5–7 दिन के अंतराल पर सिंचाई करते रहना चाहिए। कम सिंचाई की दशा में जड़ें सख्त हो जाती हैं और इनमें कसैलापन भी आ सकता है, जबकि आवश्यकता से अधिक सिंचाई करने से गाजर की जड़ों में मिठास की कमी हो जाती है।

## निराई–गुड़ाई

फसल को बुआई से लगभग 4–6 सप्ताह तक खरपतवारों से मुक्त रखना चाहिए। इसके लिए बुआई के तीसरे तथा पाँचवे सप्ताह में खरपतवार निकालने के साथ–साथ खुरपी भी लगा देनी चाहिये। यदि फसल मेड़ पर बोई गई है तो गुड़ाई के साथ–साथ मेड़ों पर मिट्टी भी चढ़ा देनी चाहिये। खरपतवारनाशी रसायनों जैसे पेन्डीमिथेलिन अथवा नाइट्रोफेन की 1 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से बुआई से 2 दिन के अन्दर छिड़काव करने से खरपतवारों से निजात मिल जाता है।

तैयार गाजर की खुदाई

## गाजर की खुदाई एवं सफाई

गाजर बुआई के पश्चात् 95 से लेकर 110 दिन के भीतर खुदाई के लिए तैयार हो जाती है, परन्तु यह प्रायः इसकी किस्म, बुआई के समय, भूमि के प्रकार आदि पर निर्भर करती है। जड़ों के तैयार हो जाने पर एक हल्की सिंचाई देकर अगले दिन खुदाई करनी चाहिए। खुदाई हमेशा ठंडे मौसम में अर्थात् सुबह के समय करना अच्छा रहता है। खुदाई के पश्चात् जड़ों पर लगी मिट्टी हटाने के लिए इन्हें पानी से साफ करतें हैं। गाजर की जड़ों की सफाई हेतु एक विशेष प्रकार की मशीन का प्रयोग किया जाता है, जिससे इन पर लगी हुई मिट्टी की सफाई के साथ–साथ जड़ों पर लगे सूक्ष्म रोम तथा उपरी हल्की सफेद झिल्ली भी साफ हो जाती है जिससे गाजर साफ और आकर्षक दिखने लगती है और बाजार भाव अच्छा मिलता है।

मशीन द्वारा गाजर की धुलाई

## उपज

गाजर की अगेती फसल (अगस्त बुआई) से औसतन लगभग 20–25, मध्यम फसल (सितम्बर–अक्टूबर बुआई) से 30–40 तथा देर वाली फसल (नवम्बर बुआई) से 28–32 टन प्रति हेक्टेयर तक उत्पादन प्राप्त होता है।

## फसल सुरक्षा

इस क्षेत्र में आमतौर पर गाजर की फसल में कीट व बीमारियों का प्रकोप कम होता है। कभी–कभी देर वाली फसल में फफूँद जनित सफेद चूंर्णिल आसिता नामक बीमारी का प्रकोप होता है। इस बीमारी के लगने से पत्तों एंव डंठल पर सफेद धब्बे नजर आने लगते हैं जो आगे चलकर बादामी रंग के हो जाते हैं। इसकी रोकथाम के लिए 0.1 प्रतिशत बेनलेट अथवा बाविस्टीन के घोल का छिड़काव 8–10 दिन के अन्तराल पर करना चाहिए। इसके अलावा काला जड़ गलन रोग गाजर के तैयार होने की अवस्था में लगने से काफी नुकसान पहुँचाता है। यह रोग एक कवक के कारण लगता है। इस रोग से बचाव हेतु उचित फसल चक्र अपनायें तथा गर्मी में भूमि की गहरी जुताई करनी चाहिए। रासायनिक उपचार हेतु क्लोरोथैलोनिल नामक रसायन का प्रयोग करना अच्छा पाया गया है।

# भिंडी उत्पादन की उन्नत तकनीक

**प्रतापसिंह खापटे, प्रदीप कुमार एवं अनुराग सक्सेना**
केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर

भिंडी गर्म जलवायु की फसल है। उत्तर भारत में इसकी खेती गर्मी व वर्षा दोनों मौसम में की जाती है। भिंडी की कच्ची फलियों की सब्जी बनायी जाती है। भिंडी की फली में प्रोटीन, कैल्शियम तथा अन्य खनिज लवण प्रचुर मात्रा में मिलते हैं। भिंडी के निर्यात द्वारा विदेशी मुद्रा भी प्राप्त की जा सकती है।

## खेत की तैयारी

खेत को अच्छी तरह से तैयार कर छोटी–छोटी क्यारियों में बाँट लेना चाहिए। अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद 25 टन प्रति हेक्टेयर की दर से अंतिम जुताई से पहले मिटटी में अच्छी तरह से मिला देना चाहिए। सिंचाई की सुविधा होने पर इस फसल को वर्षा ऋतु से 20–25 दिन पहले ही बुआई कर देनी चाहिए ताकि बाजार भाव अच्छा मिल सके।

## बीज एवं बुआई

गर्मी के मौसम के लिए 20–22 कि.ग्रा. व खरीफ (वर्षा) के मौसम में 10–12 कि.ग्रा./हेक्टेयर की आवश्यकता होती है। संकर किस्मों के लिए 5 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की बीज दर पर्याप्त होती है।

गर्मी के मौसम में मध्य फरवरी से मार्च के प्रथम सप्ताह तक तथा खरीफ में 25 जून से मध्य जुलाई तक का समय बुआई के लिए उपयुक्त होता है। बीज की बुआई हल की सहायता से या सीडड्रिल के द्वारा गर्मियों में 45 से.मी. पर बनी कतार में 30 से.मी. के अन्तराल पर करते हैं। इसी प्रकार से वर्षा के मौसम में 60X30 से.मी. की दूरी पर करना चाहिए। बीज की गहराई लगभग 3.5 से.मी. रखनी चाहिए।

## उन्नत किस्में

| किस्म नाम | किस्म के गुण | रोग व कीटरोधिता | फूल व फल आने की अवस्था | औसत उपज (प्रति हेक्टेयर) |
|---|---|---|---|---|
| परभनी क्रांति | फल गहरे हरे रंग के 15 सेमी. लम्बे | पीतशीरा (मोजेक) विषाणु रोग रोकने में सक्षम | प्रथम तुड़ाई 55–60 दिन पश्चात् | 8–10 टन |
| अर्का अनामिका | फल मध्यम हरे पाँच किनारों वाले | विषाणु रोग से प्रतिरोधी | बुआई के 50 दिनों बाद फूल | 12.5–15.0 टन |
| वर्षा उपहार | फल किनारों वाले 18–20 से.मी लम्बे | मोजेक विषाणु रोग प्रतिरोधी | 45 दिन बाद प्रथम तुड़ाई | 9 से 10 टन |
| पूसा मखमली | 12–15 सेमी. हल्के हरे पाँच किनारों वाले | मोजेक विषाणु रोग के प्रति अति संवेदनशील | | 8–10 टन |
| अर्का अभय | फल हरे कोमल तथा आकर्षक | मोजेक विषाणु रोग प्रतिरोधी व फलभेदक कीट को सहन करने की क्षमता | पेड़ी फसल के लिए भी उपयुक्त | 15–18 टन |
| पूसा ए–4 | फल 12–15 सेमी. लंबे तथा आकर्षक | एफिड तथा जैसिड के प्रति सहनशील एवं मोजेक व यैलोवेन मोजैक विषाणुरोधी | पहली तुड़ाई 45 दिनों बाद | ग्रीष्म में 10 टन व खरीफ में 15 टन |
| पंजाब–7 | फल हरे एवं मध्यम आकार | पीतरोगरोधी | लगभग 55 दिन बाद फल | 8–12 टन |
| अन्य वाइरस प्रतिरोधी किस्में : पंजाब–8, आजाद क्रांति, हिसार उन्नत | | | | |

खेत में खड़ी भिण्डी की फसल

पौधे पर लगी भिण्डी के फूल व फलियाँ

## खाद एवं उर्वरक

बुआई से 3–4 सप्ताह पूर्व गोबर की अच्छी तरह सड़ी खाद या कम्पोस्ट 20 से 25 टन प्रति हेक्टेयर मिट्टी में अच्छी तरह मिला देना चाहिए। नत्रजन 40 कि.ग्रा. की आधी मात्रा, 50 कि.ग्रा. फास्फोरस व 60 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से अंतिम जुताई के समय प्रयोग करें तथा बची हुई आधी नत्रजन की मात्रा फसल में फूल आने की अवस्था में डालें।

## सिंचाई एवं निराई–गुड़ाई

सिंचाई मार्च में 10–12 दिन, अप्रैल में 7–8 दिन और मई–जून में 4–5 दिन के अन्तर पर करें। बरसात की फसल में यदि बराबर वर्षा होती है तो सिंचाई की आवश्यकता नहीं पड़ती है। फसल की सिंचाई ड्रिप विधि से भी की जा सकती है। नियमित निराई–गुड़ाई कर खेत को खरपतवार मुक्त रखना चाहिए। बोने के 15–20 दिन बाद प्रथम निराई–गुड़ाई करना जरुरी रहता है। खरपतवार नियंत्रण हेतु रासायनिक कीटनाशकों का भी प्रयोग किया जा सकता है। खरपतवारनाशी फ्ल्यूक्लोरेलिन की 1.0 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व मात्रा को प्रति हेक्टेयर की दर से पर्याप्त नम खेत में बीज बोने के पूर्व मिलाने से प्रभावी खरपतवार नियंत्रण किया जा सकता है।

## तुड़ाई व उपज

भिंडी की फलियों को उनकी अपरिपक्व अवस्था में फूल खिलने से 3–4 दिन बाद 3 दिन के अंतराल पर लगातार तोड़ते रहें। भिंडी की फली की उपज गर्मी की फसल में 9–10 टन प्रति हेक्टेयर तथा वर्षा के मौसम में 15 से 17 टन प्रति हेक्टेयर की दर से मिलती है।

## तुड़ाई उपरांत प्रबंधन

भिंडी की फलियों की तुड़ाई उनकी नर्म अवस्था, उनके कड़े होने या बीज बनने से पहले की स्थिति में करके छाया में रखें। फलियों की तुड़ाई नियमित अंतराल पर करते रहें। स्थानीय बाजार के लिए सुबह तुड़ाई करके बाजार में भेज सकते हैं लेकिन दूरस्थ बाजार के लिए शाम के समय तुड़ाई करके भिंडी की फलियों को जूट के बोरों या टोकरी में भरकर सुबह बाजार में भेजते हैं जिससे फलियों को कोई हानि न हो। फलियों को 4 से 10 डिग्री सेन्टीग्रेड तापमान पर 4–5 दिन तक भंडारित किया जा सकता है।

भिण्डी की तुड़ाई की हुई फलियाँ

## फसल सुरक्षा

### प्रमुख रोग एवं नियंत्रण

**पीतशिरा मोजेक वायरस रोग:** यह भिंडी को सर्वाधिक नुकसान पहुँचाने वाला विषाणु जनित रोग है। यह रोग सफेद मक्खी द्वारा फैलता है। इस रोग से ग्रसित पौधों की पत्तियों की शिराएं पीली पड़ने लगती है और पत्तियों में एक जाल जैसी संरचना बन जाती है और आगे चलकर सभी पत्तियाँ और फल पीले पड़ जाते है। अंततः पौधों की वृद्धि रूक जाती है।

मोजैक रोग से ग्रसित भिण्डी की पत्ती

पत्ती छेदक लट

**नियंत्रण:** इमिडाक्लोप्रिड या एसीटामीप्रिड (0.3–0.5 मि.ली./लीटर पानी) रोपाई के 20 दिन बाद तथा आवश्यकतानुसार 15 दिन के अंतराल पर प्रयोग करें।

## प्रमुख कीट नियंत्रण

**सफेद मक्खी:** पत्तियों का रस चूसने से पत्तियाँ सिकुड़ जाती हैं।

**नियंत्रण:** इमिडाक्लोप्रिड या एसीटामीप्रिड को 0.3 मिली दवा प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

**फली तथा तना छेदक:** कीड़ा फलियों में छेदकर अंदर बीज को हानि पहुंचाता है तथा फली खाने योग्य नहीं होती है। पौधों की अंतिम शिरा में छेद कर पौधों का ऊपरी हिस्सा मुरझा जाता है।

**नियंत्रण:** क्यूनॉलफॉस 25 ई.सी. अथवा प्रोपिनोफॉस 50 ई.सी. की 0.5–1.0 मिली./लीटर पानी की दर से छिड़काव करना चाहिए।

**जैसिड:** यह कीट पत्तियों का रस चूस लेता है जिससे पत्तियाँ किनारों पर ऊपर की तरफ मुड़ जाती हैं तथा पत्तियों का रंग पीला हो जाता है जो बाद में सूख जाती हैं।

**नियंत्रण:** इमिडाक्लोप्रिड या एसीटामीप्रिड की 0.3 मिली दवा प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

# खीरे की उन्नत खेती

**अनुराग सक्सेना, प्रतापसिंह खापटे एवं प्रदीप कुमार**
केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर

लता वाली सब्जियों में खीरे का महत्वपूर्ण स्थान है। खीरा गर्म जलवायु की फसल है जिसकी उत्पत्ति मूलतः भारत से ही हुई है। इसकी खेती लगभग पूरे भारतवर्ष में की जाती है। खीरे के फल को सलाद के रूप में उपयोग किया जाता है। इसके फलों की तासीर ठंडी होती है और इसे खाने से पाचन शक्ति अच्छी रहती है। खीरे के 100 ग्राम ताजे फल में औसतन 0.4 प्रतिशत प्रोटीन, 2.5 प्रतिशत कार्बोहाईड्रेट, 1.5 मिलीग्राम आयरन, 2.0 ग्राम विटामिन 'सी' पाया जाता है।

खीरे के ताजे तोड़े गये फल

## खीरे की किस्में

**उन्नत किस्में:** पूसा उदय, पूसा बरखा, स्वर्ण अगेती, स्वर्ण शीतल, पंत संकर खीरा–1 हिमांगी, जापानी लॉन्ग ग्रीन, पोइन्सेट, पूना खीरा, पूसा संयोग, स्टेट 8, खीरा 90, खीरा 75, कल्यानपुर हरा खीरा, इत्यादि।

**संकर किस्में:** रोहिणी, मालिनी, नेफेर, हाईब्रिड खीरा 1 व हाईब्रिड खीरा 2, इत्यादि।

## जलवायु एवं भूमि

खीरा मुख्यतया एक गर्म जलवायु की फसल है, परंतु इसकी खेती शीतोष्ण तथा समशीतोष्ण दोनों ही जलवायु में सफलतापूर्वक की जाती है। खीरे के पौधों के विकास एवं अच्छी पैदावार के लिए 18 से 24 डिग्री सेंटीग्रेड तापमान आदर्श माना जाता है, परंतु अधिकतम 35 डिग्री सेंटीग्रेड तक इसकी खेती सफलतापूर्वक की जा सकती है। खीरे का पौधा पाला सहन नहीं कर सकता है और विशेष ठंडक में पौधों का विकास अवरुद्ध हो जाता है। अधिक आर्द्रता और बादल रहने से कीट एवं रोग की समस्या काफी बढ़ जाती है। पश्चिमी राजस्थान में इसकी खेती गर्मी तथा वर्षा दोनों मौसम में की जाती है। वर्षाकालीन फसल में पौधों की वृद्धि के साथ फलन अधिक होता है।

खीरे की बेल पर लगे फल

खीरे को लगभग सभी प्रकार की भूमि में उगाया जा सकता है, परंतु अच्छे जल निकास वाली दोमट व बलुई दोमट भूमि उत्तम मानी जाती है। इसकी खेती 5.5 से 7.5 पी.एच. मान वाली भूमि में अच्छी होती है। वैसे तो इसे साधारण अम्लीय से साधारण क्षारीय भूमिओं में भी उगाया जा सकता है, जबकी अत्यधिक अम्लीय एवं क्षारीय भूमि में इसके पौधे ठीक से नहीं बढ़ पाते हैं और फलन अच्छा नहीं होता है।

## खेत की तैयारी

पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से तथा 3–4 जुताईयाँ हैरो चलाकर खेत को भुरभुरा बनाने के बाद समतल कर लेना चाहिए। बुआई से दो सप्ताह पूर्व 20 से 25 टन अच्छी तरह सड़ी गोबर की खाद या कंपोस्ट खाद जुताई के साथ मिट्टी में भली–भाँति मिलाकर नालियाँ बना लेनी चाहिए। इसके अलावा सामान्य दशा में खीरे की अच्छी पैदावार के लिए 100 कि.ग्रा. नत्रजन, 60 कि.ग्रा. फास्फोरस तथा 80 कि.ग्रा. पोटाश देना चाहिए। इनमें से नत्रजन की आधी मात्रा तथा फास्फोरस एवं पोटाश की पूरी मात्रा खेत तैयारी के समय तथा नत्रजन की शेष आधी मात्रा दो बार में खड़ी फसल में

देना चाहिए। पहली बार बुआई के 20 से 25 दिन बाद तथा दूसरी बार फूल आने पर नत्रजन की मात्रा देनी चाहिए।

## बीज एवं बुआई

एक हेक्टेयर खेत की बुआई के लिए लगभग 2 से 2.5 कि.ग्रा. बीज उपयुक्त होता है। बुआई से पूर्व बीज को 2 ग्राम केप्टान प्रति लीटर पानी में मिलाकर 3 से 4 घंटे भिगोकर रखना चाहिए तत्पश्चात छाया में सुखाकर बीज की बुआई करनी चाहिए। बुआई खेत में नाली बनाकर मेड़ों की एक साइड में करनी चाहिए और नाली में सिंचाई जल छोड़ना चाहिए। खासकर वर्षा वाली फसल तथा बीज रहित खीरे की किस्मों जैसे नेफेर की बुआई द्वि–पंक्तीय पद्धति द्वारा 6 इंच ऊंचाई की बनी हुई बेड पर करना चाहिए। सिंचाई ड्रिप पद्धति से संभव हो तो 30 से.मी. अन्तराल पर लगे ड्रिपर वाली ड्रिप लाइन पौधों के बगल से होते हुये बेड पर बिछानी चाहिए।

## पौधों को सहारा देना

खासकर वर्षा वाली फसल में और बीज रहित खीरे की किस्मों के पौधों को सीधा रखना चाहिए। इसके लिए बाँस या लोहे के पोल पर तार के सहारे सुतली से बाँधकर पौधों को सहारा देना चाहिए। इससे पौधों के आस–पास उचित वायु–संचार, फूलों पर आसानी से मधुमक्खियों का विचरण व अच्छे से परागण से फलों के अधिक पैदावार के साथ–साथ उनकी गुणवत्ता में भी उत्तम होती है।

सहारा दिए हुए खीरे का पौधा

## सिंचाई

गर्मी के मौसम में 4–5 दिन के अंतराल पर सिंचाई करनी पड़ती है, जबकि खरीफ फसल में बारिश न हो रही हो तो आवश्यकतानुसार सिंचाई करते रहना चाहिए। ड्रिप अथवा बूंद–बूंद सिंचाई से पानी की अच्छी बचत के साथ–साथ खीरे की पैदावार भी अच्छी होती है। ड्रिप के द्वारा घुलनशील उर्वरकों को पूरे खेत में देने के बजाय सीधे पौधों के पास दिया जा सकता है इससे पानी के साथ–साथ उर्वरकों के उपयोग की मात्रा में काफी कमी की जा सकती है।

## निराई–गड़ाई

खीरे की बेल (लता) की वृद्धि की प्रारंभिक अवस्था में निराई–गुड़ाई करने से पौधों का अच्छा विकास होता है और फलन भी अधिक होता है। बुआई के 2 से 3 दिन के अंदर पेंडीमेथालीन के 1.0 लीटर सक्रिय तत्व को 1000 लीटर पानी में मिलाकर प्रति हेक्टेयर छिड़काव करने से शुरुआत में खरपतवार से काफी राहत मिलती है। इसके अलावा खेत को साफ सुथरा रखने हेतु समय–समय खरपतवारों को निकालते रहना चाहिए।

तुड़ाई पश्चात् खीरे की उपज

## फल तुड़ाई व उपज

खीरे के पौधों पर समान्यतया पहले लगातार कुछ नर फूल तत्पश्चात मादा फूल आते हैं। अधिक प्रकाश व तापमान पर अक्सर मादा फूल की अपेक्षा नर फूल अधिक आते हैं।

खीरे के मादा फूल आने के 8 से 12 दिनों के बाद फल खाने योग्य हो जाते है। खीरे के पत्तों पर बोरिक अम्ल 25 मि.ली. ग्राम/लीटर पानी की दर से छिड़काव करने से फलों के उत्पादन में वृद्धि होती है।

फलों की सप्ताह में दो बार तुड़ाई करनी चाहिए। तुड़ाई लगातार करते रहना चाहिए जब तक फल मिलते रहें। जितना मुलायम फल बाजार में बेचने के लिए जाता है उतना ही अच्छा पैसा मिलता है। उन्नत तकनीक से की गयी खेती से लगभग 20 से 25 टन प्रति हेक्टेयर खाने योग्य फल प्राप्त होते हैं।

## प्रमुख रोग एवं नियंत्रण

**चूर्णी फफूँद (चूर्णिल आसिता)** यह विशेष रूप से खरीफ वाली फसल पर लगता है। प्रथम लक्षण पत्तियाँ और तनों की सतह

पर सफेद या धुंधले धूसर धब्बों के रूप में दिखाई देता है तत्पश्चात ये धब्बे चूर्णयुक्त हो जाते हैं। ये सफेद चूर्णिल पदार्थ अन्त में समूचे पौधे की सतह को ढँक लेते हैं। जिसके कारण फलों का आकार छोटा हो जाता है तथा बीमारी की गंभीर स्थिति में पौधों के पत्ते भी गिर जाते है।

चूर्णिल आसिता रोग ग्रसित पत्ती

**नियंत्रण:** इसकी रोकथाम के लिए रोग ग्रस्त पौधों को खेत में इकट्ठा करके जला देते हैं। फफूँदनाशक दवा जैसे 0.05 प्रतिशत ट्राइडीमोर्फ अर्थात 0.5 मिली दवा एक लीटर पानी घोल बनाकर सात दिन के अंतराल पर छिढ़काव करें। हेक्साकोनाजोल का 1.5 मिली/लीटर या माइक्लोब्लूटानिल का 1 ग्राम/10 लीटर पानी के साथ 7–10 दिन के अंतराल पर छिड़काव करें।

**मृदुरोमिल आसिता:** यह रोग वर्षा के उपरान्त जब तापमान 20–22 डिग्री सेंटीग्रेड हो, तब तेजी से फैलता है। इस रोग से पत्तियों पर कोणीय धब्बे बनते हैं जोकि बाद में पीले हो जाते हैं। अधिक आर्दता होने पर पत्ती की निचली सतह पर मृदरोमिल कवक की वृद्धि दिखाई देती है।

**नियंत्रण:** मैंकोजेब 2.5 ग्राम/लीटर पानी का घोल बनाकर छिड़काव करते हैं तथा पूरी तरह रोगग्रस्त लताओं को उखाड़कर जला देना चाहिए । अगर बीमारी गंभीर अवस्था में है तो मैटालैक्सिल का 1 ग्राम/लीटर या मैटीरैम का 2.5 ग्राम/लीटर की दर से 7–10 दिन के अंतराल पर 2–3 बार छिड़काव करें।

**खीरा मोजैक वाइरस:** इस रोग का फैलाव, रोग बीज के प्रयोग तथा कीट द्वारा होता है। इससे पौधों की नई पत्तियों में छोटे, हल्के पीले धब्बे सामान्यतः शिराओं से शुरू होता है। पत्तियों में मोर्टलिंग, सिकुडना शुरू हो जाता है। पौधे विकृत तथा छोटे रह जाते है। हल्के, पीले चित्तीदार लक्षण फलों पर भी उत्पन्न हो जाते हैं।

**नियंत्रण:** इसकी रोकथाम के लिए विषाणु मुक्त बीज का प्रयोग करें तथा रोगी पौधों को खेत से निकालकर नष्ट कर देना चाहिए। विषाणु वाहक कीट के नियंत्रण के लिए फॉसफोमिडॉन (0.05 प्रतिशत) रासायनिक दवा का छिड़काव 10 दिन के अंतराल पर करते हैं। फल लगने के बाद रासायनिक दवा का प्रयोग नहीं करते हैं।

## प्रमुख कीट एवं नियंत्रण

**कद्दू का लाल भृंग कीट (रेड पम्पकिन बीटिल):** इस कीट की सुड़ी जमीन के अन्दर पायी जाती है। इसकी सुड़ी व वयस्क दोनों पौधों को क्षति पहुचाते हैं। प्रौढ़ पौधों की छोटी पत्तियों पर ज्यादा क्षति पहुंचाते हैं। ग्रब (इल्ली) जमीन में रहती है जो पौधों की जड़ पर आक्रमण कर हानि पहुँचाती है। ये कीट जनवरी से मार्च के महीनों में सबसे अधिक सक्रिय होते है। फसलों के बीज पत्र एवं 4–5 पत्ती अवस्था इन कीटों के आक्रमण के लिए सबसे अनुकूल है। अधिक आक्रमण होने से पौधे पत्ती रहित हो जाते है।

**नियंत्रण:** जैविक विधि से नियंत्रण के लिए एजाडीरेक्टिन (300 पीपीएम) 5–10 मिली/लीटर या एजाडीरेक्टिन (5 प्रतिशत) 0.5 मिली/लीटर की दर से 2–3 छिड़काव करने से लाभ होता है। इस कीट का अधिक प्रकोप होने पर कीटनाशी कार्बेरिल 2 ग्राम/लीटर से छिड़काव करें।

**रेड माइट (लाल मकड़ी):** लाल मकड़ी बहुत छोटे कीट हैं जो पत्तियों पर एक ही जगह पर जाला बनाकर बहुत अधिक संख्या में रहते हैं। इनका प्रकोप शुष्क व गर्म मौसम में अधिक होता है। इसके प्रकोप के कारण पौधे अपना भोजन नहीं बना पाते जिसके फलस्वरूप पौधों की वृद्धि रुक जाती है तथा उपज में भारी कमी हो जाती है।

**नियंत्रण:** पावर स्प्रेयर (छिड़काव मशीन) द्वारा सिर्फ पानी का छिड़काव करने से फसल पर से मकड़ी अलग हो जाती है जिससे प्रकोप में कमी आती है। मकड़ीनाशक रसायन जैसे डाइकोफाल 18.5 ई.सी. 5 मि.ली./लीटर या फेनप्रोथ्रिन 30 ई.सी. 0.75 ग्राम/लीटर की दर से 10–15 दिनों के अंतराल पर छिड़काव करें।

**सफेद मक्खी:** सफेद मक्खी पत्तियों के निचली सतह पर शिराओं के बीच में होती हैं और पत्तियों का रस चूसती है। इस कीट का शुष्क मौसम के दौरान प्रकोप होता है और गतिविधि बारिश की शुरुआत के साथ घट जाती है। इसके प्रभाव से पौधे की पत्तियां पीली पड़ जाती हैं, पत्ते सिकुड़ने और नीचे की

और मुड़ जाते हैं। सफेद मक्खी विषाणु रोग फैलाती हैं, जिसके कारण पौधों की बढ़ोतरी रुक जाती है।

**नियंत्रण:** मक्का, ज्वार या बाजरा को फसल की मेड़ों पर या अन्तः सस्यन के रूप में उगाना चाहिए जो कीट के लिए अवरोधक का कार्य करती हैं और इससे सफेद मक्खी का प्रकोप कम हो जाता है। सफेद मक्खी के नियंत्रण हेतु कीटनाशक जसे इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस एल 0.5 ग्राम/लीटर या थायोमिथोक्जाम 25 डब्ल्यू जी 0.35 ग्राम/लीटर से छिड़काव करने से इस कीट पर नियंत्रण प्राप्त किया जा सकता है।

**मोजेक वायरस ग्रसित पौधा**

# लौकी की उन्नत खेती

**प्रतापसिंह खापटे एवं प्रदीप कुमार**
केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर

लौकी को घीया नाम से भी जाना जाता है। यह एक बहुत ही उपयोगी फसल है और पूरे भारत में उगाई जाती है। लौकी जायद एवं खरीफ दोनों ही मौसम में उगाई जाती है। कच्ची लौकी के गूदे में प्रचुर मात्रा में रेशा रहित कार्बोहाइड्रेट मिलता है। लौकी के हरे फलों से सब्जी, रायता, खीर, कोफ्ते, अचार एवं मिठाई बनाई जाती है। लौकी की प्रकृति ठंडी होती है। यह पेट के मरीजों के लिए बहुत ही लाभदायक होती है। इसके साथ ही साथ डायबटीज के लोगों के लिए डाक्टर इसे लेने की सलाह देते हैं।

## जलवायु एवं मिट्टी

लौकी की खेती के लिए लिए समशीतोष्ण जलवायु सबसे उपयुक्त होती है। बुआई के लिए तापमान 20–25 डिग्री सेंटीग्रेड उत्तम माना जाता है। लौकी की उचित बढ़वार तथा अधिक फल उत्पादन के लिए रात का तापमान 18 से 22 डिग्री सेंटीग्रेड तथा दिन का तापमान 30–35 डिग्री सेंटीग्रेड तक अच्छा माना जाता है।

लौकी की खेती के लिए उत्तर एवं मध्य भारत में फरवरी से जून (ग्रीष्म ऋतु) तथा जुलाई से अक्तूबर (वर्षा ऋतु) तक का समय सबसे अनुकूल होता है।

वैसे सभी तरह की मिट्टी इसकी खेती के लिए उपयुक्त हैं किन्तु अधिक अम्लीय व क्षारीय मिट्टी को छोड़कर रेतीली मिट्टी सर्वोत्तम रहती हैं। जीवाश्म की पर्याप्त मात्रा के साथ–साथ जल निकास का भी उचित प्रबंध होना चाहिए। खरीफ में उत्पादन लेने हेतु उत्तम जल निकास युक्त दोमट

## उन्नत किस्में

| किस्में | फल की विशेषता | उपयुक्त विवरण | औसत उपज |
|---|---|---|---|
| पूसा समर प्रोलीफिक लोंग | कच्चे फल हल्के हरे 40 से 50 से.मी. लम्ब व एक समान | गर्मी एवं वर्षा दोनों के लिए उपयुक्त | 300 क्विंटल/हेक्टेयर |
| अरका बहार | फल सीधे लम्बे, मध्यम आकार वाले लगभग 1 किलोग्राम वजनी व हरे | – | अधिक उपज देने वाली किस्म |
| क्ल्याणपुर हरी लम्बी | कच्चे फल लम्बे व गहरे हरे | गर्मी व बरसात दोनों मौसम के लिए उपयुक्त | 250 क्विंटल/हेक्टेयर |
| पंजाब लॉन्ग | फल लंबे हरे कोमल | वर्षा ऋतु के लिए उपयुक्त | 200 से 250 क्विंटल/हेक्टेयर |
| पंजाब कोमल | लंबे फल वाली अंगूरी रंग की किस्म, फल लंबे समय तक ताजे | अगेती मध्यम आकार की प्रति पौधा 10–12 फल<br>मोजेक रोग के प्रति सहनशील | 350 क्विंटल/हेक्टेयर |
| पूसा नवीन | कच्चे फल सीधे लंबे बेलनाकार (औसत भार 800 ग्राम) | अन्य किस्मों की तुलना में जल्दी तैयार, गर्मी व बरसात दोनों मौसम के लिए उत्तम | – |
| आजाद नूतन | फल 1 से डेढ़ किलोग्राम | बुआई के 60 दिन पश्चात ही फल देना प्रारंभ | 200 से 250 क्विंटल/हेक्टेयर |
| पूसा मेघदूत | शीघ्र फल देने कच्चे फल लम्बे, हल्के हरे, मुलायम तथा आकर्षक | बसंतकालीन व गर्मी की बुआई के लिए उपयुक्त | अधिक पैदावार देने वाली संकर किस्म |
| नरेन्द्र लौकी–1 | कच्चे फल समान आकार के लम्बे व हल्के हरे तथा नीचे से कुछ मुड़े हुए होते हैं | बसंतकालीन या गर्मी के मौसम के लिए उपयुक्त | 250 क्विंटल/हेक्टेयर |

भूमि सर्वोत्तम होती है, जबकि जायद के लिए बलुई दोमट और दोमट भूमि दोनों उत्तम मानी जाती है। भूमि का पी.एच. मान उदासीन (6.5 से 7.5 बीच) होना चाहिए।

## खेत की तैयारी

लौकी के खेत की तैयारी के लिए बोने से 3–4 सप्ताह पहले खेत में 20 टन कम्पोस्ट या गोबर की सड़ी खाद, 25 किलोग्राम नीम की खली व 35–40 किलो अरंडी की खली प्रति हेक्टेयर डालकर चाहे वो खरीफ में हो या जायद के लिए बुआई करनी हो, खेत की तैयारी के लिए 2–3 जुताई हैरो से करके आखिरी जुताई में पाटा लगाकर खेत को भुरभुरा बना लेना चाहिए और फिर 3 से 4 मीटर के अंतर से 40–50 से.मी. चौड़ी नालियां खेत में बना लें।

## बीज एवं बुआई

लौकी की बुआई हेतु 4–5 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर बीज पर्याप्त होता है। बीज बुआई से पूर्व 2 ग्राम प्रति किलोग्राम की दर से थाइराम या बाविस्टीन से बीज का उपचार करना चाहिए। इससे जमीन या भूमि से पैदा होने वाले रोग से बचाव होता है। बीज को 24 से 48 घंटे तक साफ पानी में डुबोयें। पानी में तैर जाने वाले बीजों को न बोयें। बीज की बुआई 3–4 मीटर की दूरी पर 40–50 से.मी. चौड़ी बनी नाली में दोनों मेड़ों पर अंदर की ओर 60–70 सें.मी. के अन्तराल पर मेड़ों की आधी ऊंचाई पर करनी चाहिए। बुआई करने से पहले नाली में पानी लगा देना चाहिए और ओट आने पर बुआई की जानी चाहिए। जायद की फसल के लिए बुआई करने के बाद उस पर सड़े गोबर की खाद थोड़ी–थोड़ी ऊपर से ढँक देनी चाहिए, जिससे गर्मी पाकर बीज का जमाव अच्छा हो सके, क्योंकि बुआई के समय तापमान कम रहता है।

## सिंचाई

लौकी की फसल में सिंचाई काफी महत्वपूर्ण है। जायद में जब पौधे चलने लगते हैं तो सिंचाई नालियों में करनी चाहिए। चूंकि जायद की फसल में गर्मी अधिक पड़ती है और खेत में नमी बनाए रखना आवश्यक है इसलिए समय–समय पर खाली जगह पर भी सिंचाई कर देनी चाहिए है। वैसे तो ग्रीष्म ऋतु में 4 से 5 दिन के अंतराल पर सिंचाई करनी चाहिए। जबकि वर्षा ऋतु में शुरू में एक दो सिंचाई नालियों में करनी चाहिए और आवश्यकतानुसार समय–समय पर सिंचाई करते रहना चाहिए।

## खाद एवं उर्वरक

लौकी के लिए 20–25 टन प्रति हेक्टेयर पूरी तरह से सड़ी गोबर की खाद या कम्पोस्ट बुआई के 3–4 सप्ताह पूर्व खेत में अच्छी तरह से मिला देना चाहिए। बहुत अच्छा होगा यदि मिट्टी परीक्षण के आधार पर उर्वरकों की मात्रा दी जाय। यदि यह संभव नहीं हो तो 120 कि.ग्रा. नत्रजन, 100 कि.ग्रा. फास्फोरस और 80 कि.ग्रा. पोटाश तत्व के रूप में देना चाहिए। नत्रजन की आधी मात्रा तथा फास्फोरस एवं पोटाश की पूरी मात्रा आखिरी जुताई के समय मिला देना चाहिए। नत्रजन की शेष आधी मात्रा खड़ी फसल में दो बार एक महीने की फसल होने पर तथा फूल आने की अवस्था पर पौधों की जड़ों के आस–पास डाल कर हल्की सिंचाई व निराई–गुड़ाई कर दें तथा जड़ों पर मिट्टी चढ़ा दें।

बेल से लटकते हुए लौकी के फल

## निराई व गुड़ाई

फसल को खरपतवारों से मुक्त रखना भी आवश्यक है। एक–दो सिंचाई के बाद नालियों की घास तुरंत निकाल देना चाहिए। खेत को घास से साफ रखना अति आवश्यक है। एक–दो सिंचाई के बाद निराई–गुड़ाई करने के बाद नहीं करनी चाहिए क्योंकि फसल में फल आने पर पौधे के हिलाने से परागण की क्रिया पर विपरीत प्रभाव पड़ता है और फल कम लगते हैं।

## पौधों को सहारा देना

लौकी के पौधों को खासकर बरसात की फसल में सहारा देने की जरूरत पड़ती है क्योंकि इस दौरान वृद्धि काफी ज्यादा होती है। अतः पौधों को बढ़ने के साथ ही लोहे या बांस के पोल पर ट्रेलिस या पण्डाल बनाकर चढ़ा देना चाहिए। सहारा देने से फल सीधे व आकर्षक प्राप्त होते हैं, जिससे इनका बाजार भाव भी अधिक मिलता है।

## फसल सुरक्षा

### प्रमुख रोग एवं नियंत्रण

**छाछ्या (पाउडरी मिल्ड्यू) रोग :** यह रोग एक कवक के कारण होता है। इस कवक की वजह से लौकी की बेल व पत्तियों पर सफेद गोलाकार जाल जैसा फैल जाता है जो बाद में कत्थई रंग में बदल जाता है। इसमें पत्तियां पीली होकर सूख जाती है। रोकथाम के लिए रसायन जैसे–हेक्साकोनाजोल का 1.5 मिली/लीटर या माइक्लोब्लूटानिल का 1 ग्राम/10 लीटर पानी के साथ 7–10 दिन के अंतराल पर छिड़काव करें।

**एन्थ्रेक्नोज रोग :** लौकी की फसल में एन्थ्रेक्नोज रोग भी एक कवक के कारण होता है। इस रोग के कारण पत्तियों एवं फलों पर लाल–काले धब्बे बन जाते हैं जिससे प्रकाश संश्लेषण की क्रिया बाधित होती है। इसके फलस्वरूप पौधा स्वस्थ नहीं रह पाता है।

**नियंत्रण :** इस रोग के नियंत्रण के लिए रासायनिक दवा जैसे–मैन्कोजेब अथवा बाविस्टिन 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करना चाहिए।

### प्रमुख कीट एवं नियंत्रण

**रेड बीटल :** यह हानिकारक कीट है जो लौकी के पौधे की प्रारंभिक वृद्धि के समय होता है और पत्तियों को खाता है जिससे प्रकाश संश्लेषण क्रिया धीमी पड़ जाती है, जिसके कारण पौधे में अच्छी तरीके से वृद्धि नहीं हो पाती है। रेड बीटल की यह सूड़ी बहुत खतरनाक होती है। यह भूमि के अंदर पौधों की जड़ों को काट कर उन्हें नष्ट कर देती है।

**नियंत्रण :** रेड बीटल से लौकी की फसल को सुरक्षा देने के लिए कार्बारिल 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करना चाहिए।

**फल मक्खी :** यह मक्खी लौकी के फलों में प्रवेश कर अंडे देती है। अंडों से सूंड़ी निकलती है जो फलों की गुणवत्ता को हानि पहुंचाती है जिससे किसानों को बाजार से अच्छा मूल्य नहीं मिल पाता है।

**नियंत्रण :** इस मक्खी से फसल की सुरक्षा के लिए जब फसल पर फूल निकलने शुरू हो रहे हों उस समय मैलाथियान 50 ई. सी. 2 मिली/लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करना चाहिए।

# तोरी उत्पादन की उन्नत तकनीक

**प्रतापसिंह खापटे एवं प्रदीप कुमार**
केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर

तोरी मूलतः एक भारतीय सब्जी फसल है। इसकी प्राकृतिक विविधिता की दृष्टि से उत्तर पश्चिम भारत काफी धनी है। इसकी खेती देश के लगभग हर राज्य में की जाती है। इसके कोमल व मुलायम फल सब्जी के लिए उपयुक्त होते हैं। इसके सूखे फलों के रेशों को बर्तन साफ करने तथा घरेलू उपयोग में फिल्टर के रूप में प्रयोग किया जाता है। इसके बीज में वसा व प्रोटीन भी प्रचुर मात्रा में पायी जाती है।

## मृदा एवं जलवायु

वैसे तोरी की खेती विभिन्न प्रकार की मिट्टी में सम्भव है परन्तु उचित जल निकास वाली जीवांश युक्त बलुई दोमट या दोमट मिट्टी काफी उपयुक्त मानी जाती है। 6–7 पी.एच. मान वाली मृदा इसकी खेती के लिए आदर्श होती है। इसकी खेती के लिए गर्म एवं आर्द्र जलवायु उत्तम होती है। ग्रीष्म (जायद) व वर्षा (खरीफ) दोनों ऋतुओं में इसकी खेती सफलतापूर्वक की जाती है।

## खाद एवं उर्वरक

खेत की तैयारी के समय 20–25 टन सड़ी गोबर की खाद खेत में मिलावें। इसके अलावा 30–35 कि.ग्रा. नत्रजन, 25–30 कि.ग्रा. फास्फोरस तथा 25–30 कि.ग्रा. पोटाश की प्रति हेक्टेयर देनी चाहिए। नत्रजन की आधी मात्रा तथा

## उन्नत किस्में

| किस्म | फल सम्बन्धी विवरण | उपयुक्त फलन अवधि | उपज |
|---|---|---|---|
| पूसा नसदार | बुआई से 60 दिनों में फूल आने शुरू, फल 12–20 सेमी. लम्बे, फल हल्के हरे व उस पर नसें उभरी हुई, गूदा सफेद से हरा और सुगन्धित होता है | किस्म गर्मी व वर्षा दोनों ऋतुओं के लिए उपयुक्त | 150–160 क्विंटल/हेक्टेयर |
| स्वर्ण मंजरी | फल मध्यम आकार के हरे व धारीयुक्त, किस्म चूर्णिल आसिता रोग के प्रति सहन ील | फलों की तुड़ाई बुआई के 65–70 दिनों बाद | 180–200 क्विंटल/हेक्टेयर |
| स्वर्ण उपहार | फल मध्यम आकार (200 ग्रा.) के हरे व धारीयुक्त, किस्म चूर्णिल आसिता रोग के प्रति सहनशील | फलों की तुड़ाई बुआई के 65–70 दिनों बाद | 280–310 क्विंटल/हेक्टेयर |
| अर्का सुमित | फल हल्के हरे बेलनाकार व कम बीज वाले, फल का औसत वजन 380 ग्राम, औसतन 13–15 फल प्रति लता, | पहली तुड़ाई बुआई के 52 दिन बाद | – |
| अर्का सुजात | फल हल्के हरे रंग के बेलनाकार, फल का वजन औसत 350 ग्राम, प्रथम मादा पुष्प 13–15 वीं गाँठ पर | मृदुल आसिता रोग का प्रभाव कम | – |
| कल्याणपुर धारीदार | फल हल्के हरे स्पष्ट धारियों वाले गूदेदार, मादा फूलों की संख्या अधिक | अगेती किस्म | 400 क्विंटल/हेक्टेयर |
| पन्त तोरई–1 (पी.आर.जी.–1) | फल 15–20 से.मी. लम्बे, गुम्बदाकार | फलों की तुड़ाई बुआई 65 दिनों बाद | 100–120 क्विंटल/हेक्टेयर |
| पंजाब सदाबहार | फल पतले, लम्बे, धारीदार, मुलायम तथा थोड़े मुड़े हुए | बुआई मई से जुलाई तक | 100–120 क्विंटल/हेक्टेयर |
| सतपुतिया | फल एकल या गुच्छों में, फल का आकार गोल, थोड़ा लम्बा या अण्डाकार, स्वाद काफी अच्छा एवं सुगन्धित | केवल उभयलिंगी पुष्प | – |
| काशी खुशी | फल हल्के हरे जिस पर 10 गहरी हरी लम्बवत धारियाँ, प्रति पौधा लगभग 140 फल | 8–10 तुड़ाई सम्भव | 5.2–6.8 कि.ग्रा./पौधा |

फास्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा बुआई के समय खेत में डालते हैं। नत्रजन की शेष आधी मात्रा बुआई के 30–40 दिन बाद टॉप ड्रेसिंग के रूप में जड़ों के पास देना चाहिए।

## बीज व बुआई

एक हेक्टेयर क्षेत्र के लिए 5 किग्रा. बीज पर्याप्त होता है। ग्रीष्म कालीन फसल की बुआई फरवरी–मार्च तथा वर्षाकालीन फसल की बुआई जून–जुलाई में करनी चाहिए। बुआई के लिए नाली एवं थाला विधि (चैनल तथा हिल) विधि सबसे उत्तम है। इस विधि में खेत की तैयारी के बाद 2.5–3.0 मीटर की दूरी पर 45 से.मी. चौड़ी तथा 30–40 से.मी. गहरी नालियाँ बना लेते हैं। इन नालियों के दोनों किनारों (मेड़ों) पर 50–60 से.मी. की दूरी पर बीज की बुआई करते हैं। एक जगह पर कम से कम दो बीज लगाना चाहिए तथा बीज जमने के बाद एक पौधा निकाल देते हैं।

## सिंचाई

तोरी की अच्छी ग्रीष्मकालीन फसल लेने हेतु खेत में पर्याप्त नमी बनाए रखना चाहिए जिसके लिए 5–6 दिनों के अन्तराल पर सिंचाई करते रहना चाहिए। वर्षाकालीन फसल के लिए वैसे सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती है परन्तु वर्षा न होने की स्थिति में यदि खेत में नमी की कमी हो तो सिंचाई कर देनी चाहिए।

## पौधों को सहारा देना

सामान्यतया ग्रीष्मकालीन फसल में पौधों को चढ़ाने की आवश्यकता नहीं होती है लेकिन वर्षाकालीन फसल में पौधों की वृद्धि अधिक होती है अतः पौधो को बढ़ने के साथ ही ट्रेलिस या पण्डाल बनाकर चढ़ा देना चाहिए। इससे गुणवत्तायुक्त अधिक उपज प्राप्त होती है।

## खरपतवार नियंत्रण

अच्छी पैदावार लेने के लिए खेत को खरपतवार मुक्त रखना चाहिए। इसके लिए बुआई के तुरन्त बाद व अंकुरण से पूर्व एलाक्लोर या ब्यूटाक्लोर 1–1.5 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करना चाहिए। इसके अलावा अन्तः शस्य क्रियाएं जैसे निराई, गुड़ाई इत्यादि समय–समय पर करते रहना चाहिए।

## पलवार का प्रयोग

बुआई के बाद खेत में मल्च का प्रयोग करना लाभप्रद होता है। इससे मृदा तापमान बढ़ने व नमी संरक्षित होने के कारण बीजों का जमाव अच्छा होता है तथा खेत में खरपतवार नहीं उग पाते जिसके फलस्वरूप पैदावार पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है।

उन्नत तोरी के फल

## फलों की तुड़ाई

फलों की तुड़ाई हमेशा मुलायम अवस्था में करनी चाहिए देर से तुड़ाई करने पर उसमें सख्त/कड़े रेशे बन जाते हैं। फलों की तुड़ाई 6–7 दिनों के अन्तराल पर करनी चाहिए।

## फसल सुरक्षा

### प्रमुख रोग एवं नियंत्रण

**मृदुरोमिल आसिता (डाउनी मिल्ड्यू):** यह एक फंफूद जनित रोग है। अधिक आर्द्रता वाले क्षेत्रों में इसका प्रकोप अधिक होता है। इस रोग के लक्षण पत्तियों के उपरी सतह पर कोणीय पीले धब्बों के रुप में परिलक्षित होते है जो आगे चलकर पत्तियों की निचली सतह पर फैल जाते हैं तथा पत्तियां सूखकर गिर जाती हैं।

**नियंत्रण:** रोग से ग्रसित पत्तियों को तोड़कर जला देना चाहिए। रोग के संक्रमण के समय जिनेब 75 डब्ल्यू पी 0.15 प्रतिशत या मैन्कोजेब के 0.2 प्रतिशत घोल का छिड़काव करना चाहिए। अधिक संक्रमण के समय मेटालाक्सिल 8 प्रतिशत + मैन्कोजेब 64 प्रतिशत के 2.5–3.0 ग्राम/लीटर पानी के घोल का छिड़काव साप्ताहिक अन्तराल पर करना चाहिए।

**चूर्णिल आसिता (पाउडरी मिल्ड्यू):** यह भी फंफूद जनित रोग है। इस फफूंद का संक्रमण सफेद से गंदा भूरे (ग्रे) पाउडर के रुप में पौधों के हर अंगो पर होता हैं। गम्भीर रुप से संक्रमित पत्तियां भूरे रंग की होकर सिकुड़ जाती हैं। परिपक्व होने से पहले ही पौधों की पत्तियां झड़ जाती है तथा लताएं मर जाती हैं।

**नियंत्रण:** पौधों के संक्रमित भाग को जलाकर नष्ट कर देना चाहिए। बीज की थाइराम/कैप्टान/कारबेन्डाजिम की 2.5–3.0 ग्राम प्रति किग्रा दर से उपचारित करने के पश्चात् बुवाई करनी चाहिए। संक्रमण के समय डेनोकैप 48 ई.सी. के 0.03 प्रतिशत या सल्फर के 0.2 प्रतिशत घोल का छिड़काव करना चाहिए।

**कालर राट:** इस रोग का कारक एक फफूंद है। इसके कारण नवांकुरित पौधे मर जाते हैं। यह रोग नये पौधों में अधिक जबकि अपेक्षाकृत पुराने पौधे में कम होता हैं।

**नियंत्रण:** उचित फसल चक्र अपनाना चाहिए। बुआई के समय बीज को कैप्टान की 3 ग्राम/कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करना चाहिए।

**पीला (एलो) मोजैक वायरस:** यह एक विषाणु जनित रोग है। तोरी की खेती के लिए यह रोग एक गम्भीर समस्या है। इस रोग का लक्षण पौधों की नई पत्तियों पर पीले धब्बे के रुप में दिखाई देता है। गम्भीर संक्रमण के समय पौधों की पत्तियां छोटी चित्तीदार व विकृत हो जाती हैं तथा फल अनियमित आकार के हो जाते हैं। इस रोग का विषाणु सफेद मक्खी के द्वारा फैलता है।

**नियंत्रण:** बीज को इमिडाक्लोप्रिड 70 डब्ल्यू. पी. या थाईमेथोक्साम 70 डब्ल्यू.एस. की 3 ग्राम/कि.ग्रा. बीज की दर से शोधित कर बुआई करें। संक्रमण के पूर्व रोग रोधन के तहत नीम तेल की 2–3 मिली/लीटर पानी के साथ 0.5 मिली स्टिकर मिलाकर छिड़काव करें। संक्रमण के समय इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. 0.3 मि.ली./लीटर या थाईमेथोक्साम 0.4 ग्राम/लीटर पानी के घोल का 15 दिन के अन्तराल पर छिड़काव करें।

- फसल की बुआई से लगभग 20 दिन पूर्व खेत के चारों ओर दो पंक्ति बाजरा की फसल को बार्डर फसल के रुप में उगायें।
- टमाटर, मिर्च व तम्बाकू की पुरानी फसल के बाद तोरई फसल की बुआई न करें तथा बैंगन, जंगली कद्दू वर्गीय व कपास की फसल के पास तोरई की फसल न उगायें।

### प्रमुख कीट एवं नियंत्रण

**रेड पम्पकिन बिटिल (कद्दू का लाल कीट):** इस कीट के प्रौढ़ व सुडियाँ दोनों ही फसल को नुकसान पहुँचाते हैं। इसके प्रौढ़ कीट (भृंग) छोटे पौधों की मुलायम पत्तियों को खा जाते हैं जिससे पौधे पत्ती रहित हो जाते हैं। इसकी सूड़ियाँ जमीन के नीचे पौधों की जड़ों एवं तनों में छेदकर देते है जिससे पौधे मर जाते हैं।

**नियंत्रण:** ग्रीष्म कालीन गहरी जुताई करें जिससे कि प्यूपा गर्मी की तेज धूप में झुलस कर मर जायें या तो पक्षियों के द्वारा खा लिये जायें। संक्रमण के समय कार्बेरिल घुलनशील चूर्ण (2 ग्राम प्रति लीटर पानी) या डाइक्लोरवास 70 ई.सी. की 1–1.5 मिली/लीटर पानी के घोल का बीजपत्रीय अवस्था में छिड़काव करें। खेत में सूड़ियों के गम्भीर संक्रमण के समय क्लोरपाइरोफास के 2–3 मिली/लीटर के घोल से मृदा को अच्छी तरह तर कर दें तथा छिड़काव से पहले खाने योग्य फल की तुड़ाई अवश्य कर लें।

**पर्ण सुरंगक कीट (लीफ माइनर):** इसके लार्वा पत्तियों में सुरंग बनाकर पर्ण हरित (क्लोरोफिल) को खाते हैं जिसके कारण प्रकाश संश्लेषण प्रभावित होता है।

**नियंत्रण:** इसकी रोकथाम के लिए 4 प्रतिशत नीम की गिरी के अर्क का छिड़काव प्रभावी होता है।

**फ्रूट फ्लाई (फल मक्खी):** इस कीट के मेगट नये विकसित फलों को गम्भीर क्षति पहुंचाते हैं। वयस्क मक्खियां मुलायम फलों के छिलके में छेदकर एपिडर्मिस के नीचे अंडा देती हैं तथा अण्डों से मेगट विकसित होते हैं जो कि फल को अन्दर से खाकर सड़ा देते हैं। ग्रीष्म कालीन वर्षा के समय अधिक आर्द्रता होने पर इनका संक्रमण अधिक होता है।

**नियंत्रण:** गहरी ग्रीष्मकालीन जुताई करें जिससे इस कीट के प्यूपा नष्ट हो जाऐं।

- खेत में 8–10 मीटर की दूरी पर मक्का की फसल फन्दा (ट्रैप) फसल के रुप में उगायें।
- खेत से संक्रमित फलों को इकट्ठा कर जमीन में गहराई पर गाड़कर नष्ट कर दें।

जहरीले चारा जिसमें 10 प्रतिशत गुड़ या शीरा के साथ मैलाथियान 50 ई.सी. 2 मि.ली./लीटर या कार्बारिल 50 डब्ल्यू.पी. 2 ग्राम/लीटर पानी के मिश्रण को खेत में 250 स्थान प्रति हेक्टेयर की दर उपयोग करें।

# ग्वारफली उत्पादन की उन्नत तकनीक

**प्रदीप कुमार, प्रतापसिंह खापटे, अनुराग सक्सेना एवं एम पाटीदार**

केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर

ग्वार एक सूखा रोधी फसल है, जिसे कम सिंचाई वाली परिस्थितियों में भी सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है, इसकी वजह से मरू क्षेत्रों के किसानों की आय के श्रोत के रूप में यह एक महत्वपूर्ण फसल है। ग्वार की फसल दाने, पशु चारे, गोंद (ग्वार गम), हरी सब्जी तथा हरी खाद के लिए मुख्यतः खरीफ अर्थात् बरसात् में उगायी जाती है। सब्जी में प्रयोग हेतु, हरी फलियों के लिए उगायी जाने वाली फसल को साधारण भाषा में सब्जी–ग्वार अथवा ग्वारफली से सम्बोधित करते हैं।

## जलवायु एवं भूमि

ग्वारफली की खेती बारानी तथा सिंचित, दोनों दशाओं में आसानी से की जा सकती है। इसकी खेती बरसात् (खरीफ) के अलावा गर्मी (जायद) के मौसम में भी आसानी से की जा सकती है। ग्वारफली को लगभग सभी प्रकार की भूमियों में उगाया जा सकता है, परन्तु उचित जल निकास वाली सिंचित उपजाऊ भूमि इसकी खेती के लिए उत्तम मानी जाती है।

## उन्नत किस्में

हरी फलियों के लिए उगाई जाने वाली ग्वार की प्रमुख उन्नत किस्में हैं– पूसा मौसमी, पूसा सदाबहार, पूसा नवबहार, शरद बहार, दुर्गा बहार, एम–83, गोमा मंजरी, पी.–28–1–1, आई.सी.–1388।

## बीज एवं बुआई

ग्वारफली की बुआई के लिए लगभग 15–20 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर बीज पर्याप्त होता है। बरसात् वाली फसल की अपेक्षा गर्मी वाली फसल में बीज अधिक लगता है। बीज उत्तम गुणवत्ता वाले होने चाहिए तथा इन्हें किसी विश्वसनीय संस्था द्वारा ही लेना चाहिए। बुआई से पूर्व बीजों को विशिष्ट राइजोबियम कल्चर से परिशोधित कर लेना चाहिए। बुआई 30–45 से.मी. दूरी पर बनी पंक्तियों में 10–15 से.मी. के अन्तराल पर करनी चाहिए।

## बुआई का समय

गर्मी वाली फसल की बुआई के लिए मध्य फरवरी से मार्च का प्रथम सप्ताह सबसे उपयुक्त होता है। देरी से बुआई करने पर अधिक गर्मी से इसकी फलन क्षमता पर विपरीत असर पड़ता है, जिससे फलियों की पैदावार में कमी आ जाती है। बरसात वाली फसल की बुआई का उपयुक्त समय मध्य जून से मध्य जुलाई तक अच्छा माना जाता है। असिंचित अथवा वर्षा आधारित फसल की बुआई वर्षा होने पर निर्भर करती है।

## खेत की तैयारी

शुष्क क्षेत्रों की भूमियों में भूमिगत कीड़ों, खासकर दीमक का प्रकोप बहुत होता है जिसकी रोकथाम के लिए क्लोरपाइरीफॉस 2 लीटर अथवा फिप्रोनिल 2.5 लीटर 4–5 किलो रेत के साथ प्रति हेक्टेयर की दर से बुआई से पूर्व मिट्टी में मिला देना चाहिए। पूर्णतया सड़ी हुई गोबर की खाद पूरे खेत में अच्छी तरह से बिखेर कर जुताई के साथ भली भाँति मिट्टी में मिला देना चाहिए। हैरो द्वारा अच्छी तरह से खेत की 2–3 जुताई करने के पश्चात् पाटा लगाकर भूमि को समतल कर लेना चाहिए। दलहनी फसल होने के कारण ग्वारफली को अधिक नत्रजन की आवश्यकता नहीं होती है।

## खाद तथा उर्वरक

इसकी अच्छी उपज के लिए प्रति हेक्टेयर 50 कि.ग्रा. नत्रजन देना चाहिए, इसके अलावा 60 कि.ग्रा. फॉस्फोरस तथा 60 कि.ग्रा. पोटाश भी देना चाहिए। नत्रजन की आधी तथा फॉस्फोरस एवं पोटाश की पूरी मात्रा अन्तिम जुताई के समय देकर भूमि में मिला देना चाहिए। नत्रजन की शेष मात्रा खड़ी फसल में निराई–गुड़ाई के समय देना चाहिए। उपलब्ध होने पर 20–25 टन प्रति हेक्टेयर गोबर की सड़ी खाद देना अत्यन्त लाभकारी होता है। इससे ग्वार फली की गुणवत्तापूर्ण अधिक पैदावार के साथ–साथ भूमि की भौतिक दशा में भी सुधार होता है।

## सिंचाई

गर्मी की फसल में आवश्यकतानुसार 5–7 दिनों के अन्तराल पर सिंचाई करनी चाहिए, जबकि बरसात की फसल में लम्बे अन्तराल तक वर्षा न होने की दशा में सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। खासकर फूल आने व फलियाँ बनते समय भूमि में पर्याप्त नमी बनाये रखना अत्यन्त आवश्यक है।

## निराई–गुड़ाई

ग्वार–फली की फसल को खरपतवारों से मुक्त रखना चाहिए जिसके लिए समय–समय पर निराई–गुड़ाई करते

रहना चाहिए। खरपतवारनाशी रसायनों के प्रयोग से भी खरपतवारों से निजात पायी जा सकती है। खेत तैयार करते समय बासालिन या ट्रेफ्लान 1–1.5 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से भूमि की ऊपरी परत में मिलाने से फसल के दौरान उगने वाले खरपतवारों को प्रभावी रूप से नियन्त्रित किया जा सकता है।

खेत में ग्वारफली की खड़ी फसल

## अन्त : फसल पद्धति

ग्वार–फली अन्तःफसल पद्धति के लिए बहुत उपयुक्त फसल है। नये रोपित फलों जैसे– बेर, बेल, आवलाँ, आदि के बगीचों में इनकी दो कतारों के बीच के खाली स्थान में इसकी खेती करने से अतिरिक्त आय प्राप्त होने के साथ–साथ भूमि की उर्वरता में भी वृद्धि होती है, जिसका फल वृक्षों की बढ़वार एवं उपज पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है। इसके अलावा दलहनी फसल होने के कारण यह फसल–चक्र में भी सम्मिलित की जा सकती है।

## तुड़ाई एवं उपज

समय–समय पर लम्बी, मुलायम तथा अधपकी फलियों की तुड़ाई करते रहना चाहिए। देरी से तुड़ाई करने पर फलियाँ सख्त हो जाती हैं जिससे इनकी गुणवत्ता में कमी आ जाती है और बाजार भाव कम मिलता है। फलियों की तुड़ाई तड़के सुबह जल्दी करनी चाहिए। ग्वारफली की उपज मौसम, किस्म, सिंचाई व्यवस्था, भूमि के प्रकार आदि पर निर्भर करती है। गर्मी की फसल से औसतन लगभग 4–5 टन प्रति हेक्टेयर जबकि बरसात की फसल से लगभग 6–8 टन प्रति हेक्टेयर हरी फलियों का उत्पादन लिया जा सकता है।

## बीज उत्पादन तकनीक

गुणवत्तापूर्ण बीज उत्पादन हेतु ग्वारफली की दो किस्मों के बीच कम से कम 50 मीटर की दूरी रखनी चाहिए। अच्छे बीज उत्पादन हेतु प्रजनक या आधारीय अथवा प्रमाणीकृत बीज, किसी विश्वसनीय संस्था से लेना चाहिए तथा किस्म की पहचान, प्रमाणीकरण, आदि की जानकारी सुनिश्चित कर लेनी चाहिए। बीज की बुआई 45–60 से.मी. दूरी पर बनी पंक्तियों में 15–20 से.मी. के अन्तराल पर करना चाहिए। अच्छे बीज उत्पादन के लिए खेत को हमेशा खरपतवारों, कीटों तथा बीमारियों से मुक्त रखना चाहिए। अन्य शस्य क्रियाएं इसकी फलियों के उत्पादन की तरह ही हैं। बीज बरसात वाली फसल से लेना लाभकारी होता है, क्योंकि इस दौरान बीज अपेक्षाकृत स्वस्थ तथा अधिक मात्रा में प्राप्त होता है। अच्छी फसल से प्रति हैक्टैयर औसतन 1000 कि.ग्रा. बीज प्राप्त किया जा सकता है।

तुड़ाई पश्चात् ग्वार की फलियाँ

## फसल सुरक्षा

### प्रमुख रोग एवं नियंत्रण

**जीवाणु पत्ती धब्बा रोग :** इस रोग से ग्वारफली की फसल को सर्वाधिक नुकसान पहुँचता है।

**नियंत्रण :** बुआई से पूर्व बीजों को स्ट्रेप्टोसायक्लीन के 100–150 पी.पी.एम. (100–150 मि.ग्रा./लीटर) घोल से उपचारित करना चाहिए। खड़ी फसल में इस रसायन (150 पी.पी.एम.) को ब्लाइटॉक्स (0.2%) के साथ मिश्रित करके छिड़काव करने से इस रोग की रोकथाम की जा सकती है।

**अल्टरनेरिया लीफ स्पॉट:** इस रोग के नियंत्रण के लिए 1.5 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से मेन्कोजेब या कैप्टेफाल नामक रसायन का 40–50 दिन की अवस्था से लेकर 15 दिनों के अन्तर पर 2 से 3 छिड़काव करना चाहिए।

**जड़ गलन:** इस रोग के नियंत्रण हेतु वीटावैक्स व बाविस्टीन की 2 ग्राम प्रति कि.ग्रा. की दर से बीज को उपचारित करने के पश्चात् बुआई करनी चाहिए।

**चूर्णिल आसिता:** इस रोग के नियंत्रण हेतु फसल पर घुलनशील गंधक–0.3% व घुलनशील सिरैसिन क्यूपरोविड

नामक रसायन की 1 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से 15 दिनों के अन्तराल पर छिड़काव करना लाभदायक रहता है।

## प्रमुख कीट एवं नियंत्रण

ग्वारफली की फसल को माहू (चेंपा), सफेद मक्खी, लीफ हॉपर या जैसिड, पत्ती छेदक, फली छेदक, इत्यादि कीट नुकसान पहुँचाते हैं। सफल उत्पादन के लिए इन कीटों को नियन्त्रित करना बहुत जरूरी होता है। माहू, जैसिड, फली छेदक तथा पत्ती छेदक कीटों के नियंत्रण के लिए डायमेथोएट 30 ई.सी. को 1.0 मिली प्रति लीटर की दर से फसल पर 10 दिनों के अन्तराल पर छिड़काव करना उपयोगी सिद्ध होता है, जबकि सफेद मक्खी की रोकथाम हेतु इमिडाक्लोप्रिड (0.03%) का छिड़काव अधिक कारगर होता है।

# हरी-पत्तीदार सब्जियों के उत्पादन की उन्नत तकनीक

**प्रतापसिंह खापटे, प्रदीप कुमार एवं अनुराग सक्सेना**
केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर

हरी पत्तीदार सब्जियाँ अपनी विशिष्ट गुणों जैसे कम समय में तैयार और पोषण गुणों से भरपूर होने की वजह से जानी जाती हैं। पालक, मेथी और चौलाई मुख्य हरी पत्तीदार सब्जियाँ हैं। ये सब्जियाँ खनिज पदार्थों जैसे–लोहा, कैल्शियम, फास्फोरस, विटामिन्स ('ए', 'बी–2', 'के' एवं 'सी') तथा खाद्य रेशा की प्रमुख स्रोत हैं, जिसके कारण बच्चे, बूढ़े यहाँ तक कि गर्भवती महिलाओं के लिए पत्तीदार सब्जियाँ अधिक उपयोगी हैं। ये सब्जियाँ स्वास्थ्यवर्धक होने के साथ कम मूल्य में आसानी से सर्वत्र उपलब्ध हो जाती हैं तथा भोजन को सरस, शीध्र पाचनयुक्त, स्वादिष्ट, संतुलित व पौष्टिक बनाने में मदद करती हैं।

## पालक

### जलवायु एवं भूमि

पालक को पूरे वर्ष भर उगाया जा सकता है परंतु इसकी अच्छी वृद्धि और उपज के लिये 15–20 डिग्री सेन्टीग्रेड तापक्रम उपयुक्त होता है। शरद ऋतु में इसकी वानस्पतिक वृद्धि अच्छी होती है और 5–6 कटाइयाँ एक फसल से प्राप्त हो जाती हैं। गर्मी के मौसम में उगाने पर ऊंचे तापक्रम के कारण एक कटाई ही मिलती है और बाद में बीज के डंठल निकल आते हैं।

अच्छे जल निकास वाली, बलुई दोमट या दोमट मिट्टी पालक की खेती के लिए अधिक उपयुक्त होती है। पालक में क्षारीय और लवणीय मिट्टी को सहन करने की क्षमता अधिक होती है। इसकी खेती 7 से 8.5 पी.एच. मान वाली मिट्टी में सफलतापूर्वक कर सकते हैं।

### उन्नत किस्में

आलग्रीन, पूसा हरित, पूसा ज्योति, जोबनेर ग्रीन, पन्त कम्पोजिट–1, एच.एस.–23 पालक की प्रमुख उन्नत किस्में हैं।

### खेत की तैयारी

खेत की 2–3 जुताई करके मिट्टी को भुरभुरी बना लेना चाहिए। बुआई के पूर्व खेत में छोटी–छोटी क्यारियाँ और सिंचाई की नालियाँ बना लेनी चाहिए। बुआई के 3–4 सप्ताह पूर्व 20–25 टन प्रति हेक्टेयर की दर से गोबर की सड़ी खाद या कम्पोस्ट डालकर मिट्टी में अच्छी तरह मिला देना चाहिए। इसके अलावा सामान्य दशा में 100 कि.ग्रा. नत्रजन, 50 कि. ग्रा. फास्फोरस और 50 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से शरदकालीन फसल में डालते हैं। फास्फोरस और पोटाश की पूरी मात्रा और नत्रजन की एक चौथाई मात्रा आपस में मिलाकर बुआई के पूर्व खेत में डालकर मिट्टी में मिला देना चाहिए। शेष नत्रजन बराबर मात्रा में बाँटकर प्रत्येक कटाई के बाद देते हैं। शरदकालीन फसल में औसतन 3–4 बार टॉप ड्रेसिंग (ऊपर से छिड़काव) करते हैं। गर्मी की फसल में उर्वरक की मात्रा आधी हो जाती है क्योंकि केवल एक ही कटाई मिल पाती है।

तैयार पालक के पत्ते

## बीज एवं बुआई

एक हेक्टेयर क्षेत्र में बुआई के लिए 25–30 कि.ग्रा. बीज की आवश्यकता पड़ती है। बुआई का मुख्य समय अक्टूबर–नवम्बर है लेकिन इसकी बुआई लगभग पूरे वर्ष कर सकते हैं। बीज को प्रायः समतल खेत में छिटकवाँ विधि से बोते हैं परन्तु पंक्तियों में बोना अधिक लाभदायक होता है। इस विधि से पंक्तियों की दूरी 15–20 से.मी. रखते हैं। बीज की बुआई के समय पर्याप्त नमी होना आवश्यक है। बीज को 2–3 से.मी. गहराई पर बोते हैं। बीज जमने के बाद पौध से पौध की दूरी 4–5 से.मी. रखते हैं।

खेत में खड़ी पालक की फसल

## सिंचाई

पालक के लिए पहली सिंचाई बीज जमने के बाद करते हैं और बाद की सिंचाईयाँ 10–15 दिन के अन्तराल पर करते रहते हैं। फव्वारा विधि से सिंचाई करने से पानी की काफी बचत की जा सकती है साथ ही पैदावार भी अच्छी मिलती है।

## निराई–गुड़ाई

खरपतवारों के प्रबन्धन के लिए एक या दो निराई की आवश्यकता होती है। निराई खुरपी की सहायता से करते हैं। दो पंक्तियों के बीच हल्की गुड़ाई भी कर दें जिससे पौधों की जड़ों में वायु संचार पूर्ण रूप से हो सके।

## पत्तियों की कटाई व उपज

पालक के पत्तों की पहली कटाई बुआई के तीन या चार सप्ताह बाद करते हैं। बाद की कटाईयाँ 15–20 दिन के अन्तर पर करते हैं। कटाई सदैव जमीन से 5–6 से.मी. ऊपर करनी चाहिए। हरी कोमल पत्तियों की औसत उपज 15 टन प्रति हेक्टेयर प्राप्त होती है।

# मेथी

## जलवायु एवं भूमि

मेथी की खेती शरद ऋतु में की जाती है। इसमें ठंड व पाला सहन करने की अच्छी शक्ति होती है। पालक की तरह ही मेथी की भूमि होनी चाहिए हालाँकि मेथी अपेक्षाकृत अधिक क्षारीय भूमि और खारे पानी को भी सहन करने में सक्षम है।

खेत में खड़ी मेथी की फसल

## उन्नत किस्में

पूसा अर्ली बचिंग, कोयंबतूर–1, मेथी से.–47, कसूरी मेथी, लाम सेलेक्शन–1, यू.एम–112।

## बीज एवं बुआई

सामान्य मेथी की एक हेक्टेयर खेत की बुआई के लिए 25–30 कि.ग्रा. बीज की आवश्यकता होती है, जबकि कसूरी मेथी में बीज का आकार अत्यन्त छोटा होने के कारण 8–10 कि.ग्रा. बीज पर्याप्त होता है। मेथी की बुआई का उचित समय अक्टूबर से मध्य नवम्बर है। अगेती फसल के लिए 15 सितम्बर के आस–पास बीज की बुआई कर सकते हैं। बीज की बुआई 15–20 से.मी. की दूरी पर कतार बनाकर 1.5–2.0 से.मी. गहराई पर करना चाहिए।

## खेत की तैयारी

खेत को तैयार करते समय 20–25 टन गोबर की सड़ी खाद या कम्पोस्ट प्रति हेक्टेयर की दर से डालकर खेत की मिट्टी में अच्छी तरह मिला देते हैं। बुआई के पहले 20 कि.ग्रा. नत्रजन एवं 40 कि.ग्रा. फास्फोरस प्रति हेक्टेयर की दर से अन्तिम जुताई के समय पूरे खेत में समान रूप से बिखेर कर मिट्टी में मिला देना चाहिये। प्रत्येक कटाई के बाद 10 कि.ग्रा. नत्रजन प्रति हेक्टेयर की दर से टॉप ड्रेसिंग (ऊपर से छिड़काव) के रूप में देना चाहिये।

## सिंचाई

बीज की बुआई के समय पर्याप्त नमी होना आवश्यक है। मेथी में पहली सिंचाई बीज जमने के बाद करते हैं और बाद की सिंचाईयाँ 10–15 दिन के अन्तराल पर करते रहते हैं। फव्वारा विधि से सिंचाई करना काफी लाभकारी होता है।

## निराई–गुड़ाई

प्रारम्भिक अवस्था में मेथी की वृद्धि धीमी गति से होती है। अतः केवल एक निराई की आवश्यकता होती है। बुआई के 4–5 सप्ताह बाद पौधों में इतनी अधिक वृद्धि हो जाती है कि खरपतवार नुकसान नहीं पहुँचा पाते हैं। जहाँ तक हो सके समय–समय पर खरपतवार निकालते रहना चाहिए।

## पत्तियों की कटाई व उपज

मेथी की पहली कटाई बुआई के तीन या चार सप्ताह बाद करते हैं और बाद की कटाईयाँ 15–20 दिन के अन्तर पर करते हैं। कटाई सदैव जमीन से 5–6 से.मी. ऊपर करनी चाहिए।

समान्यतः मेथी की हरी पत्ती की उपज 7–8 टन तथा कसूरी मेथी की 9–10 टन प्रति हेक्टेयर होती है। बीज की पैदावार सामान्य मेथी में 1.2–1.5 टन प्रति हेक्टेयर तथा कसूरी मेथी में 0.6–0.7 टन प्रति हेक्टेयर होती है।

## चौलाई

चौलाई की खेती पालक और मेथी से अलग, इसकी पत्तियाँ हरे और लाल रंगों वाली होती हैं और इसकी फसल वर्षा एवं ग्रीष्म ऋतु में की जाती है।

## जलवायु व भूमि

चौलाई गर्म जलवायु की फसल है। मैदानी क्षेत्रों में इसकी खेती ग्रीष्म एवं वर्षा दोनों ऋतुओं में करते हैं। शरद ऋतु में पौधों की बढ़वार नहीं होती।

## उन्नत किस्में

बड़ी चौलाई, छोटी चौलाई, पूसा कीर्ति, पूसा किरण, पूसा लाल चौलाई, को.–5, अर्का सुगुना, अर्का अरुणिमा आदि चौलाई की प्रमुख उन्नत किस्में हैं।

## खेत की तैयारी

पालक व मेथी की तरह बुआई के लगभग 3–4 सप्ताह पूर्व 20–25 टन गोबर की सड़ी खाद या कम्पोस्ट प्रति हेक्टेयर की दर से डालकर खेत की मिट्टी में अच्छी तरह मिला देते हैं। इसके अलावा 100 कि.ग्रा. नत्रजन 50 कि.ग्रा. फास्फोरस और 30 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर देने की आवश्यकता पड़ती हैं। फास्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा और नत्रजन की आधी मात्रा आपस में मिलाकर बुआई के पूर्व खेत में डालकर मिट्टी में मिला देना चाहिए। शेष नत्रजन बराबर मात्रा में बाँटकर प्रत्येक कटाई के बाद छिटक कर डालते हैं।

## बीज एवं बुआई

एक हेक्टेयर क्षेत्र की बुआई के लिए 1.5–2.0 कि.ग्रा. बीज की आवश्यकता पड़ती है। ग्रीष्म ऋतु की फसल की बुआई फरवरी–मार्च एवं वर्षा ऋतु की फसल की बुआई जून–जुलाई में करते हैं। साधारणतया ग्रीष्मकालीन फसल की पैदावार अधिक व गुणवत्तायुक्त होती है, जबकि वर्षा ऋतु में पत्तियाँ कीड़ों से प्रभावित हो जाती हैं जिससे काफी नुकसान होता है।

तैयार चौलाई की फसल

चौलाई के बीज बहुत छोटे होते हैं इसलिए इसकी बुआई रेत मिलाकर करते हैं, ताकि बीज पूरे खेत में एक समान पड़े। बीज क्यारियों में छिटकर बोते हैं या 20–25 से.मी. की दूरी पर कतारों में बुआई करते हैं। यदि पौध घनी उग जाए तो उनको उखाड़कर प्रति क्यारी पौध सीमित कर लेते है। जहाँ खाली स्थान छूट गया हो वहाँ घने स्थान से पौधों को निकालकर रोपण भी किया जा सकता है। जहाँ तक हो सके बीज की बुआई पर्याप्त नमी की अवस्था में करनी चाहिए, ताकि जमाव अच्छी तरह हो सके।

## सिंचाई

गर्मी के दिनों में तापक्रम के अनुसार सिंचाई 4–5 दिन के अन्तर पर करते हैं। वर्षा ऋतु में सिंचाई की आवश्यकता नहीं पड़ती है और यदि वर्षा न हो रही हो तो आवश्यकतानुसार सिंचाई करते रहना चाहिए। कम पानी वाली दशा में फव्वारा विधि अपनाना चाहिए।

## निराई–गुड़ाई

चौलाई की क्यारियों से खरपतवार बराबर निकालकर क्यारी साफ–सुथरी रखनी चाहिए, ताकि चौलाई के पौधों को बढ़ने में कोई असुविधा न हो। समान्यतया चौलाई में दो निकाई की आवश्यकता पड़ती है जिसे आवश्यकता के अनुसार करते हैं। निकाई के साथ–साथ हल्की गुड़ाई भी करते रहना चाहिए।

## पत्तियों की कटाई व उपज

चौलाई के पत्तों की पहली कटाई बुआई के तीन या चार सप्ताह बाद करते हैं। बाद की कटाईयाँ 15–20 दिन के अन्तर पर करते हैं। कटाई सदैव जमीन से 5–6 से.मी. ऊपर करनी चाहिए।

पत्तियों की पैदावार, किस्म, बोने के समय, मिट्टी की भौतिक दशा तथा उसमें उपलब्ध तत्वों के ऊपर निर्भर करती है। उचित खाद एवं उर्वरकों के प्रयोग व देख–रेख से हरी पत्तियों की औसत उपज 15–20 टन प्रति हेक्टेयर प्राप्त होती है।

## प्रमुख रोग एवं नियंत्रण

**पत्ती धब्बा (लीफ स्पॉट) रोग:** यह रोग पत्तेदार सब्जियों (पालक, चौलाई) की एक प्रमुख समस्या है। इसमें हल्के, भूरे गोल धब्बे, जिसके किनारे लाल होते हैं, पालक को छोड़कर अन्य पत्तीदार सब्जियों में ठीक तरह नहीं दिखाई देते हैं।

**नियंत्रण:** इस रोग से ग्रसित पौधों की निचली पत्तियों को तोड़कर जला देना चाहिए। बहुत अत्यधिक संक्रमण की अवस्था में क्लोरोथैलोनिल या मैंकोजेब की 2 ग्राम मात्रा प्रति लीटर पानी की दर से घोलकर 2–3 छिड़काव करें। खेत में संतुलित उर्वरक तथा कम्पोस्ट का प्रयोग करें।

**सफेद गलन:** यह रोग एक कवक के द्वारा, जोकि सामान्यतया ठंडे एवं नम मौसम में अधिक आता है। रोग के लक्षण जलीय मृदुगलन के रूप में पर्ण वृन्त, पुष्प वृन्त एवं तने पर शुरू होता है और पत्ती के कुछ भाग तक फैल जाता है। संक्रमण के बाद कवक जाल घनी हो जाती है एवं कवक तन्तुओं पर जल बिन्दु दिखने लगते हैं। बाद में संक्रमित भागों के ऊपर कवक जाल बहुत घनी हो जाती है और काले रंग की कवक संरचना से ढँक जाती है।

**नियंत्रण:** इसके नियंत्रण हेतु कार्बेण्डाजिम की 1 ग्राम मात्रा प्रति लीटर पानी की दर से घोलकर पर्णीय छिड़काव करें और इसके 6–10 दिन बाद मैंकोजेब 2.5 ग्राम मात्रा प्रति लीटर पानी की दर से घोलकर पर्णीय छिड़काव करें। छिड़काव निचली पत्तियों एवं तने तक अवश्य पहुँचना चाहिए।

**चूर्णिल आसिता:** इस बीमारी के संक्रमण की प्रारंभिक अवस्था में पत्तियों पर सफेद पाउडर दिखाई देता है जो संक्रमण बढ़ जाने पर पूरे पौधों पर सफेद चूर्णिल आवरण बना देता है। यह बीमारी मेथी की फसल को अधिक प्रभावित करती है।

**नियंत्रण:** इसके नियंत्रण हेतु घुलनशील गंधक 2.5 ग्राम प्रति लीटर पानी के घोल का छिड़काव करें।

## प्रमुख कीट एवं नियंत्रण

**कर्तन कीट (पत्ती काटने वाले कीट) एवं चेपा:** कर्तन कीट पत्तियों को काटकर नुकसान पहुँचाता है जबकि चेपा पत्तियों एवं पौधों के कोमल भाग से रस चूसता है तथा उसकी वृद्धि को प्रभावित करता है।

**नियंत्रण:** डायमेथोएट (0.1 प्रतिशत) का छिड़काव 15 दिन के अन्तराल पर कर सकते है। जहाँ तक हो सके जैविक कीटनाशकों का प्रयोग करें। नीम तेल (4 प्रतिशत) का छिड़काव 10 दिन के अन्तराल पर 4 बार करने से कीटों से सुरक्षा मिलती है। पत्तियों की कटाई कीटनाशकों के प्रयोग से कम से कम 10 दिन बाद करनी चाहिए।

# सब्जी हेतु खेजड़ी एवं गूंदे का उत्पादन एवं प्रबंधन

अकथ सिंह एवं पी.आर मेघवाल
केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर

## सांगरी के लिए कलिकायन विधि से तैयार खेजड़ी का उत्पादन

शमी या खेजड़ी (*प्रोसोपिस सिनेरेरिया*) को शुष्क क्षेत्र की जीवन रेखा कहते हैं। यह लूंग, मीझर, सांगरी तथा खोखा के लिए प्रसिद्ध है। शुष्क क्षेत्र मे सांगरी का प्रयोग सब्जी व अचार के रूप में किया जाता है। मरू क्षेत्र की लोकप्रिय सब्जी "पंचकुटा" मे सांगरी एक प्रमुख घटक है। सांगरी की उपयोगिता तथा माँग को देखते हुए खेजड़ी को एक बागवानी फसल के रूप में तैयार किया जा सकता है। प्राकृतिक रूप से उगे पेड़ बीजू होने के कारण जहाँ इनमें सांगरी 12–15 वर्ष पश्चात् लगना शुरू होती है वहीं उसकी गुणवत्ता भी सुनिश्चित नही होती है। खेजड़ी का प्रवर्धन कलिकायन विधि द्वारा करने से बहुत अच्छे परिणाम मिल रहे हैं तथा सुव्यवस्थित बाग लगाकर अच्छी आमदनी भी प्राप्त की जा सकती है।

कलिकायन विधि से चयनित उत्तम सांगरी व लूंग वाली खेजड़ी के पेड़ो का बगीचा निम्न तीन विधियों से विकसित किया जा सकता है।

1. शीर्ष क्रिया द्वारा
2. स्वस्थानिक कलिकायन द्वारा, तथा
3. पौधशाला में मूलवृन्त पर कलिकायन द्वारा

## शीर्ष क्रिया द्वारा

उन्नत किस्म की खेजड़ी विकसित करने की यह सबसे सरल विधि है। सर्व प्रथम उत्तम सांगरी वाली खेजड़ी का चयन कर लें। अब खेतो में प्राकृतिक तरीके से लगे खेजड़ी के छोटे (1–5 वर्ष) बीजू पौधों का चयन यथा संभव दूरी पर कर लें। इन पौधों को दिसम्बर–जनवरी में जमीन की सतह से इस प्रकार काटें कि जमीन के अन्दर का तना तथा जड़ों को नुकसान न पहुंचे। मार्च–अप्रैल में इस प्रकार कटे हुए पौधों से नई शाखाएँ निकलना शुरू होती हैं। इनमें से दो–तीन सीधी बढती हुए शाखाओं को कलिकायन के लिए रख कर शेष को हटा दें। मई माह तक यह शाखाएँ 5–8 मि.मी. व्यास की हो जाती हैं तब ये कलिकायन करने योग्य हो जाती हैं। अब इनके शीर्ष भाग एक फुट ऊपर से काट दें तथा साइड से काटें व छोटी शाखाओं को भी हटा दें। अब जमीन से लगभग 6 इंच की ऊँचाई पर पेंच विधि से मातृवृक्ष से एकत्रित कलिका को मूलवृन्त पर चढ़ाकर प्लास्टिक की टेप से बाँध दें। पेंच विधि से कलिकायन के लिए मूलवृन्त से 2.5 से.मी. की छाल का टुकड़ा सावधानीपूर्वक अलग करते हैं तथा इसी आकार का छाल का टुकड़ा चयनित मातृवृक्ष की शाखा से लेकर मूलवृन्त में फिट कर बांध देते हैं। लगभग एक माह बाद लगाई गई कलिका से स्फुटन शुरू होकर कलिका से नई शाखाएँ निकलती हैं। इस दौरान मूलवृन्त से निकलने वाली शाखाओं को हटाते रहें जिससे कि कलिकायन किये गये भाग की तीव्र वृद्धि हो सके।

## स्वस्थानिक कलिकायन विधि से बगीचा लगाना

इस विधि से मूलवृन्त के बीजू पौधे सीधे खेत में लगाए जाते हैं। फसल पद्धति की आवश्यकतानुसार 6 मी. x 8 मी. या 8 मी. x 8 मी. या 6 मी. x 16 मी. की दूरी पर 2 x 2 x 2 फुट आकार के गड्ढे मई माह में खोदकर इन्हें कुछ दिनों के लिए खुला छोड़ देते हैं। इसके बाद इसमें दस किलो गोबर की सड़ी हूई खाद को गड्ढे की ऊपरी मिट्टी में मिलाकर भर दें। मई–जून में खेजड़ी की पूर्ण पकी फलियों (खोखा) से बीज निकालकर बुआई के लिए रख लें। जुलाई में प्रथम वर्षा होने के बाद प्रत्येक गड्ढे में 3–4 बीज लगभग एक इंच की गहराई पर गड्ढों के मध्य में बुआई करें। इस दौरान वर्षा का लम्बा अन्तराल होने पर गड्ढों में हल्की सिंचाई करें ताकि अंकुरण के बाद पौधों की बढ़वार हो सके। प्रति गड्ढे एक–दो बीजू पौधो को छोड़कर शेष को निकाल दें। खेत में गड्ढों में बीजों की सीधी बुआई का फायदा यह होता है कि उनकी जड़ें सीधी व अधिक गहराई में शुरू से ही विकसित हो जाती हैं जिससे आगे जाकर इनमें अधिक सूखा सहन करने की क्षमता विकसित हो जाती है। अगले वर्ष की वर्षा ऋतु तक इन पौधों की निराई–गुड़ाई तथा अन्य कृषि क्रियाएँ करते हुए इनको जानवरों से बचा कर रखें। जुलाई माह में प्रत्येक गड्ढे में एक सीधे तने वाला पौधा छोड़कर बाकी शाखाओं को निकाल दें। अब इनमें चिन्हित मातृवृक्ष से कलिका लेकर पूर्व में बताई विधि से कलिकायन कर लें। जिस पौधे पर कलिकायन सफल नहीं हो, उनके नीचे जमीन से निकल रही नवोदित कल्लों को बढने दें ताकि उनकी उचित मोटाई होने पर फिर से

कलिकायन किया जा सके। इस तरह दो वर्ष में स्वस्थानिक कलिकायन विधि से पूरा बगीचा तैयार हो जाता है।

## पौधशाला में कलिकायन कर पौधे तैयार करना

कलिकायन विधि से तैयार पौधों को दूरस्थ स्थानों पर भेजने अथवा ऐसे पौधों को बेचने के लिए यह विधि अपनाई जाती है। इस विधि में सबसे पहले पौधशाला में खेजड़ी के बीजू पौधे (मूलवृन्त) तैयार किये जाते है। इसके लिए खेजड़ी की पूर्ण पकी तथा सूखी फलियों से बीज निकाल लेते हैं। इन बीजो को 30X15 से.मी. आकार की पॉलीथीन की थैलियों में गोबर की खाद, बालू मिट्टी तथा चिकनी मिट्टी (1:5:1) के मिश्रण से भरकर बेड में लाइन से जमाकर बीजों की बुआई जुलाई माह में कर दें। प्रति थैली 3–4 बीज बोवें ताकि कम अंकुरण की स्थिति में भी कम से कम एक–दो पौधे मिल सकें। बुआई के पश्चात सिंचाई तथा अन्य कृषि क्रियाएँ करते रहें। अगले वर्ष जून माह मे जब इन पौधो के तने की मोटाई लगभग 5–8 मि.मी. हो जाए तब इन पर चयनित मातृ वृक्ष से कलिका लेकर कलिकायन कर दिया जाता है। कलिकायन के एक माह के भीतर इसमे कलिका फूटने लगती है तथा तेजी से बढना आरम्भ कर देती है। लगभग दो महीने बाद इनको एक बार नई द्वितीयक नर्सरी क्यारी में स्थानान्तरित किया जाता है जिसके 10–15 दिन बाद इन पौधों को खेतों में वांछित दूरी पर प्रतिरोपित किया जा सकता है अथवा इनकी मांग के अनुसार अन्यत्र भी भेजा जा सकता है।

## सांगरी उत्पादन हेतु उन्नत प्रजातियाँ

केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर में उत्तम गुणवत्ता की सांगरी हेतु के–1, के–2, के–13, के–16 व के–17 चयनों को अति उत्तम पाया गया है। अब सांगरी उत्पादन हेतु खेजड़ी की किस्मों पर वानस्पतिक विधि से प्रवर्धन कर हजारों की संख्या मे उन्नत किस्मों के पौधे तैयार किये जा सकते हैं एवं सुव्यवस्थित बाग भी लगाये जा सकते हैं।

## थार शोभा

खेजड़ी से व्यवस्थित एंव गुणवत्ता युक्त सांगरी उत्पादन के लिये केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर ने वर्ष 2007 में "थार शोभा" नामक प्रजाति की संस्तुति की है। किसान बाजार माँग के अनुसार उत्तम गुणों वाली सांगरी के बगीचे विकसित कर इसे अतिरिक्त आमदनी का स्त्रोत बना सकते हैं। कलिकायन किये हुए एक पंचवर्षीय पेड़ से लगभग 4.25 कि.ग्रा. ताजा सांगरी तथा 6.27 कि.ग्रा. लूंग प्रति वर्ष प्राप्त किये जा सकते हैं। पेड़ की आयु के अनुरूप लूंग का उत्पादन उत्तरोतर बढता जायेगा। इस किस्म की ताजा फलियां हल्की हरी, सीधी, गोल, मुलायम एवं मीठी होती हैं। यह किस्म अत्यधिक गर्मी एवं सर्दी के अलावा सूखा सहिष्णु भी है जिससे शुष्क क्षेत्रीय जलवायु में इसकी खेती की व्यापक संभावना है।

## कलिकायन विधि से तैयार खेजड़ी का उत्पादन प्रबन्धन

कलिकायन करने के पश्चात् इन्हें एक मजबूत पेड़ के रूप में विकसित करने के लिए शुरू से ही कटाई छंटाई द्वारा संतुलित बढ़वार नियंत्रित करना अति आवश्यक होता है। शुरूआत में कलिकायन किए हुए स्थान के नीचे मूलवृन्त से निकलने वाली अन्य शाखाओं को निकालना जरूरी होता है। कलिकायन के स्थान से एक मजबूत उर्ध्वगामी शाखा से 2–3 शाखाओं को सभी दिशा में बढ़ने दें। आगे जाकर यही शाखाएँ पेड़ की मुख्य शाखाओं का रूप लेती हैं इसके बाद तीन चार वर्ष तक इन शाखाओं से यथा संभव दूरी पर वांछित शाखाओं को रख कर शेष को निकाल देना चाहिये।

पेबन्दी पेड़ों की परम्परागत छंगाई नवम्बर–दिसम्बर में की जा सकती हैं लेकिन ऐसा करने पर उन्हें अगले साल लूंग

कलम से तैयार खेजड़ी का पौधा

कटाई–छंटाई किया हुआ खेजड़ी का पेड़

तो मिलेगा लेकिन मार्च अप्रैल में फूल व सांगरी नहीं आयेगी। आर्थिक दृष्टि से लूंग व सांगरी दोनो मिलने पर खेजड़ी की बागवानी ज्यादा सार्थक होगी। केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर में किये गये प्रयोगों से सिद्ध हो गया है कि खेजड़ी की प्रति वर्ष छंगाई नवम्बर–दिसम्बर की बजाय मई–जून के अन्तिम सप्ताह से जून के प्रथम सप्ताह तक करने से लूंग के साथ–साथ सांगरी भी ली जा सकती है। मई–जून में छंगाई करने के बाद जून–जुलाई में इन पेड़ों पर पुनः नई फूटान आ जाती है जो कि नवम्बर–दिसम्बर तक शाखाएँ पक जाती हैं जिससे उनमें अप्रैल में कच्ची सांगरी की फसल ले सकते हैं। छंगाई करने का यह समय कलिकायन किये गए पौधों से अधिक व्यावसायिक लाभ के साथ खेजड़ी की उपयोगिता में चार चाँद लगा सकता है क्योंकि इस तरह इनमें फलन पिछले साल से ही शुरू हो जाती हैं। साथ ही लूंग तथा सांगरी दोनो उत्पादन लेना सम्भव हो पाता है। इस प्रकार खेजड़ी में वानस्पतिक विधि से प्रवर्धन तथा छंगाई के समय में बदलाव करने से अधिक आर्थिक लाभ के साथ इसे मरू क्षेत्र में आजीविका के साधन के रूप में अपना सकते है।

## सांगरी की तुड़ाई एवं तुड़ाई उपरान्त प्रबंधन

कलिकायन विधि से तैयार खेजड़ी वृक्ष जिनमें छंगाई मई–जून मे की जाती है, उन पौधों में मार्च से लेकर अप्रैल के पहले सप्ताह तक पुष्प गुच्छ बनना आरम्भ हो जाता है तथा अप्रैल के अन्त से मई मध्य तक कच्ची सांगरी मिलती रहती है।

नर्म व हरी अवस्था में ताजा सांगरी का सब्जियों के लिये प्रयोग तो उसी मौसम में होता है, परन्तु सांगरी को सुखाकर वर्ष भर प्रयोग किया जाता है। सुखाने के लिये मुलायम व हरी फलियों को कच्ची अवस्था में तोड़ना चाहिए। ताजा फलियों को सुखाने के लिये फलियों की तुड़ाई सुबह व शाम के समय ही करें। फलियों के गुच्छों को तोड़कर गीले टाट अथवा बांस के टोकरे में भरकर पेड़ की छाया में रखें। घर में साफ सुथरी जगह पर कपड़े व प्लास्टिक की चद्दर बिछा कर गुच्छों में से सुखाने योग्य अच्छी फलियों की छंटाई कर साफ करें। बहुत छोटी व अयोग्य फलियों को अलग कर दें।

सांगरी को सुखाने से पूर्व उबलते हुए गर्म पानी में 2 मिनट तक डुबोने से फलियाँ लम्बे समय तक सुरक्षित रखी जा सकती हैं तथा अच्छी दिखाई देती है। ब्लांचिंग की क्रिया के लिये बड़े बर्तन में इतना पानी हो कि 8–10 किलो सांगरी आसानी से डूब जाये। 20 ग्राम नमक प्रति लीटर पानी के हिसाब से डालकर पानी को हल्का उबालें। छंटाई की हुई सांगरी को उबलते हुए पानी में डाले और एक–दो पल्टी लगाकर छलनी की सहायता से तुरन्त बाहर निकाल ले। इस तरह तैयार सांगरी को घर के अन्दर आंशिक धूप व छांव वाले स्थान में सुखा दें। सूखने पर सांगरी को प्लास्टिक की थैलियों में भरकर विक्रय करें।

## सब्जी हेतु गून्दे की खेती

गूंदा को लसोड़ा तथा लेहसुआ के नाम से भी जाना जाता है। उत्तर पश्चिमी राजस्थान के बाड़मेर, जोधपुर, जैसलमेर, अजमेर, पाली, सिरोही आदि जिलों में बागवानी के रूप में इसकी खेती की जाती है। खेती के लिए अनुपयुक्त कम उर्वरा वाली जमीन में भी इसकी खेती की जा सकती है। यह एक बहुउपयोगी वृक्ष है जिसके कच्चे फल सब्जी व अचार बनाने, हरे पत्ते पशुओं के चारे के रुप में, लकड़ी कृषि यन्त्रों तथा हैण्डीक्राफट इत्यादि में काम आते हे। फलों में औषधीय गुण भी विद्यमान है जोकि डायबटीज, मूत्रविकार आदि रोगों में कारगर है। अप्रैल के शुरूआत में आने वाले कच्चे फलों का बाजार भाव काफी ऊंचा रहता है अतः किसान भाई इसकी खेती करके अच्छा लाभ कमा सकते हैं।

फलों से लदा गूंदे का पेड़

## भूमि एवं जलवायु

बलुई दोमट मिट्टी जिसमें जीवांश की मात्रा अधिक हो इसकी खेती के लिए सर्वोत्तम है परन्तु बलुई मिट्टी में भी हर साल देशी गोबर की खाद का उपयोग करके इसकी खेती की जा सकती है। हल्की क्षारीय व हल्की लवणीय मृदा में भी लगाया जा सकता है। गूंदे का पेड़ अधिक तापमान (42–45 डिग्री सेन्टीग्रेड) को सहन कर सकता है परन्तु फूल आने के समय यदि तापमान अधिक है तो इसका कुप्रभाव फल लगने पर पड़ सकता है।

## भूमि का चयन, तैयारी एवं पौधे प्रतिरोपण

जिन क्षेत्रों में नियमित रूप से पाला पड़ने की सम्भावना रहती है इसकी खेती के लिए उपयुक्त नही है। पौधे लगने के लिए गड्ढ़े की खुदाई का कार्य मई–जून में कर लेना चाहिए । 6 मी. कतार से कतार तथा 6 मी. पौधे से पौधे की दूरी रखते हुए वर्गाकार विधि से रेखांकन करके 2 फुट x 2 फुट x 2 फुट आकार के गड्ढ़े खोदकर 10–15 दिनों तक खुला छोड़ दें। तत्पश्चात् ऊपरी मिट्टी में 10–15 कि.ग्रा. देशी सड़ी हुई खाद व 50 ग्राम क्लोरपाइरीफॉस तथा 25 ग्राम फ्यूराडॉन मिलाकर 10–15 से.मी. भूमि सतह से ऊपर तक भराई कर छोड़ देना चाहिए। इसके उपरान्त पहली वर्षा के पश्चात् जब गड्ढ़े की मिट्टी अच्छी तरह बैठ जाए तो कलिकायन किए पौधों को गड्ढ़े के मध्यम भाग में प्रतिरोपित करना चाहिए। पौधो को लगाते समय ध्यान रहे कि पॉलीथिन की थैली को इस तरह हटायें कि पौधे में मिट्टी यथावत् बनी रहे। लगाने के पश्चात् चारों तरफ की मिट्टी अच्छी तरह दबा कर तुरन्त हल्की सिंचाई कर देनी चाहिए। तत्पश्चात् जरूरत के अनुसार सिंचाई करते रहना चाहिए।

## किस्म

गूंदे में अभी तक कोई विकसित किस्म नही है। प्राकृतिक रुप से दो तरह के गूंदे पाये जाते हैं। छोटे किस्म के गूंदे में खाने योग्य भाग बहुत कम होता है अतः इसका बाजार भाव नहीं के बराबर है। यह प्रवर्धन के लिए मूलवृंत बनाने के लिए उपयोग में लाया जाता हैं। व्यावसायिक तौर पर बड़े आकार वाले गूंदें लगाये जाते है, जिनके फलों का वजन 10–12 ग्राम तक होता है। काजरी जोधपुर मे बड़े फल वाले गूंदें चयनित किये गये हैं, जिनको वानस्पति प्रवर्धन करके तैयार किए हुए पौधे वहाँ से प्राप्त किये जा सकते हैं।

## प्रवर्धन

गूंदे का वानस्पतिक प्रवर्धन कलिकायन विधि द्वारा किया जाता है। गूंदी अथवा छोटे फल वृक्षों के फलों से गुठली निकालकर इनको अच्छी तरह पानी में धोकर तथा छाये में सुखाकर, पहले से मिश्रण (1 भाग मिट्टी 1 भाग बालू तथा 1 भाग खाद) भरी थैलियों में बुआई कर दी जाती है। 60–70 दिन की पौध हो जाने के पश्चात, अच्छी उत्पादन क्षमता तथा बड़े फल वाले गून्दों के पेड़ से कलिका लेकर बडिंग विधि से कलम चढ़ा दी जाती है। कलिकायन का सर्वोत्तम समय जुलाई– अगस्त होता है।

## सिंचाई व्यवस्था

पौधों की रोपाई के तुरन्त बाद हल्की सिंचाई करें तथा 15–20 दिन तक नियमित अन्तराल पर हल्की सिंचाई करते रहना चाहिए। जब पौधे लग जाएं तब प्रथम दो वर्षो तक 10–15 दिन के अन्तर पर सिंचाई करनी चाहिए। फरवरी के अन्त में नये पत्ते तथा फल आने शुरू होने से लेकर फल तुड़ाई तक नियमित रूप से 7–10 दिन के अन्तराल पर हल्की सिंचाई करते रहना चाहिए। नवम्बर से जनवरी तक सिंचाई बन्द रखना चाहिए ताकि पत्ते पीले पड़कर गिर जाएं तथा पेड़ सुषुप्तावस्था में चले जायें। तापमान अचानक बढ़ जाए या गर्म हवा चलने लगे तो फूल एवं फल के गिरने से बचाने के लिए भी सिंचाई अवश्य करें जिससे बाग में नमी की मात्रा बराबर बनी रहे।

## खाद एवं उर्वरक

अच्छी बढ़वार तथा अधिक उत्पादन के लिए खाद एवं उर्वरक का उचित प्रबन्ध करना चाहिए। बढ़वार के हिसाब से 10–15 कि.ग्रा. गोबर की सड़ी खाद जुलाई–अगस्त में तथा पुनः 10–15 कि.ग्रा. कम्पोस्ट या 5 कि.ग्रा. वर्मीकम्पोस्ट पत्तों की तुड़ाई के एक सप्ताह बाद देने से उपज तथा गुणवत्ता अधिक मिलती है। गूंदे के सूखे पत्तों को सड़ा कर अच्छी किस्म का कम्पोस्ट बनाया जा सकता है जो पेड़ों के लिए बहुत उपयोगी सिद्ध हो सकता है।

## कटाई–छंटाई एवं पत्तों की तुड़ाई

गूंदे में प्रतिवर्ष नियमित कटाई–छंटाई की जरूरत नही पड़ती, परन्तु रोपाई के बाद 2–3 साल में मजबूत तथा संतुलित शाखाएं विकसित करने के लिए छंटाई आवश्यक है। पूर्ण विकसित पेड़ से अत्यधिक शाखाएँ सूखी एवं रोगग्रस्त टहनियों को समय–समय पर काटते रहना चाहिए। पत्ते की तुड़ाई गूंदे में एक नियमित तथा नितान्त आवश्यक प्रक्रिया है। कलियाँ विकसित होने तथा फूल खिलने के लिए गूंदे के पेड़ों को कुछ दिनों के लिए सुषुप्तावस्था आवश्यक है। इसके लिए नवम्बर से जनवरी तक पेड़ों को पानी देना बन्द कर देना चाहिए। सभी पत्ते एक साथ एक समय पर गिरने से फूल व

बिक्री के लिए तैयार गूंदे के फल

फल जल्दी व एक साथ आते है। जनवरी के अन्तिम सप्ताह में पेड़ों से सभी पत्ते हाथ से तोड़ देने चाहिए। पत्ते की तुड़ाई उपरान्त फरवरी मध्य में खाद इत्यादि मिलाकर पेड़ों में नियमित सिंचाई शुरू कर देनी चाहिए।

## फल तुड़ाई एवं उपज

सब्जी एवं अचार बनाने के लिए हरे फलों की तुड़ाई गुच्छों में ही की जाती है। फूलों में फल लगने के 25 दिन बाद फलो की तुड़ाई शुरू कर सकते है। उत्तम बाग प्रबंधन कर एक पेड़ से औसतन 25 से 50 कि.ग्रा. फल प्राप्त किये जा सकते हैं। सिंचित अवस्था में उचित सिचाई प्रबन्धन करके और अधिक उपज ली जा सकती है।

## फसल सुरक्षा

### रोग एवं कीट नियंत्रण

गून्दे में रोग एवं कीट न के बराबर ही लगते हैं। गमोसिस अर्थात् शाखाओं से गोंद निकलना मुख्य समस्या हैं। आमतौर पर पुरानी शाखाओं से गोंद निकलता है जिससे शाखाएँ कमजोर होकर सूख जाती हैं जिससे पेड़ों का फैलाव प्रभावित होता है। इसकी रोकथाम एवं प्रबंधन के लिए सूखी हुई शाखाओं को काटकर जमे हुए गोंद को साफ कर देना चाहिए तथा प्रभावित शाखाओं पर कॉपर आक्सीक्लोराइड या बोर्डोपेस्ट का लेपन करना चाहिए। कटाई–छँटाई करते समय भी इस तरह की शाखाओं को काटकर निकाल देना चाहिए जिससे अन्य शाखाओं में संक्रमण रोका जा सके।

# सब्जियों में रोग प्रबंधन

**ऋतु मावर एवं कुलदीप सिहं जादोंन**
केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर

सब्जियाँ सघन श्रमिक आवश्यकता वाली फसलें हैं। अतः ये किसानों के लिये रोजगार के ज्यादा अवसर प्रदान करती हैं तथा उनकी आय को बढाती हैं। वर्षा तथा शरद ऋतु में बोई जाने वाली सब्जियों की खेती का विशेष महत्व है। इसके साथ ही इन फसलों में लगने वाले रोगों की जानकारी व उपचार का भी उतना ही महत्व है। सब्जियों में बीमारियों का प्रकोप बीजों की बुआई से लेकर फलों के तैयार होने तक कभी भी हो सकता है। रोग पौधों की जड़ों से लेकर पत्तियों एवं फलों तक में हो सकता है।

अन्य फसलों की तरह ही सब्जियों में मुख्य रूप से फफूँद, जीवाणु, सूत्रकृमि एवं माइकोप्लाज्मा जनित रोगों का प्रकोप होता है। ये माध्यम प्रमुख रूप से तीन प्रकार के हो सकते है। 1. बीज जनित 2. भूमि जनित 3. वायु के माध्यम से फैलने वाले रोगाणु। इसी प्रकार इनके उपचार बीज उपचार, भूमि उपचार तथा फसल पर छिड़काव द्वारा की जा सकती है।

## सब्जियों के प्रमुख फफूँद रोग एवं उनका नियंत्रण

**पत्ती धब्बा रोग (लीफ स्पॉट):** इस रोग में सब्जियों की बढ़वार के समय प्रमुख रूप से पत्तियों पर विभिन्न आकार, शक्ल व रंग के धब्बे हो जाते है जो बाद में असीमित आकार के बन जाते हैं। इससे पत्तियाँ अपरिपक्व अवस्था में ही गिर जाती हैं जिससे पौधा नष्ट हो जाता है। मुख्य रूप से अल्टर नेरिया, सरकोस्पोरा, फाइटोपथोरा व सेप्टोरिया जाति के फफूँदों से पत्ता गोभी, फूलगोभी, प्याज, टमाटर, बैंगन, गाजर, आलू आदि में बहुतायत से पाया जाता है।

**नियंत्रण:** रोग के नियंत्रण के लिये बुआई से पूर्व बीजों को मेन्कोजेब 0.3 प्रतिशत दर से उपचारित करें। अन्य सब्जियों में लक्षण प्रकट होने पर मेन्कोजेब 0.25 प्रतिशत या डायथेन जेड–78 या फाइटोलान 0.2 प्रतिशत (2 ग्राम दवा प्रति लीटर पानी) का छिड़काव करें।

**छाछ्या रोग (पाउडरी मिल्डयू):** यह सब्जियों की आम बीमारी है जिसका प्रकोप होने से पौधों पर सफेद चूर्ण छा जाता है। ऐसा प्रतीत होता है जैसे आटा बिखेर दिया हो। चूर्ण की परत पत्तियों, कलियों, तनों, टहनियों तथा फलों पर जमी हुई दिखाई देती है। इससे ग्रसित फसल के पौधों सिकुड़ कर छोटे रह जाते है तथा पत्तियाँ झड़कर नष्ट हो जाती हैं। छाछ्या रोग अलग–अलग सब्जियों में भिन्न–भिन्न प्रकार के फफूँदों से होता है। जैसे इरीसीफी सीचोटसीयम (इसका प्रकोप कुष्माण्ड कुल की सब्जियों तथा भिण्डी में होता है) विशष रूप से फूल आने की अवस्था पर शुष्क मौसम एवं तापक्रम बढ़ जाने पर यह रोग बढ़ता है।

**नियंत्रण:** इस रोग के नियंत्रण हेतु

1. गंधक का बारीक चूर्ण 25 किग्रा प्रति हेक्टेयर की दर से भुरके।
2. 2.5 किग्रा घुलनशील गंधक का पाउडर पानी में घोलकर प्रति हेक्टेयर छिड़काव करें।
3. कैराथेन एक मिली या हेक्साकोनाजोल 1.5 मि.ली.। प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें आवश्यकतानुसार छिड़काव को 15 दिन के अन्तराल पर पुनः दोहरावें।

**झुलसा रोग तथा फल सड़न रोग:** झुलसा बीमारी में टमाटर व अन्य फसलों के तने और पत्तियों पर गहरे रंग के धब्बे पड़ जाते हैं। फलों पर फफूँदजनक रोगों के प्रकोप से फलों पर धब्बे पड़ जाते हैं तथा सड़ने लगते हैं।

**नियंत्रण:** इसकी रोकथाम के लिए कॉपर फन्जीसाइड 3 कि. ग्रा. या मेन्कोजेब (डाईथेन एम 45) 2 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर के हिसाब से छिड़के।

**आर्द्र गलन तथा जड़ सड़न रोग:** जड़ सड़न एवं पद गलन रोग का प्रकोप प्रमुख रूप से निम्नांकित फसलों पर होता है–(1) टमाटर (2) मिर्च (3) प्याज और (4) भिण्डी

**टमाटर में आर्द्र गलन (डेम्पिंग आफ):** नर्सरी में भूमि की सतह पर उगते हुए बीजों पर प्रहार कर उन्हें गिरा देते है।

**नियंत्रण:** ऐसे क्षेत्र में 1 प्रतिशत फोर्मेलिन घोल (1 लीटर दवा 100 लीटर पानी में) का ड्रेन्चिंग (8–10) कर के बुआई पूर्व भूमि उपचार कर लें। उपचारित क्षेत्र को 48 घंटे तक गीले टाट या पोलिथीन की शीट से ढक दें ताकि जमीन में इस दवा की धुआं घुस सके। इसके बाद उपचारित जमीन को बुआई से पूर्व 2–3 दिन तक खुला छोड़ दें ताकि अंकुरण पर कोई विपरीत प्रभाव न पड़े।

**टमाटर का जड़ सड़न रोग:** नर्सरी के पौधों के खेत में रोपाई के बाद पौधे को जमीन की सतह से गिरा कर नष्ट कर देता है।

**नियंत्रण:** पौधों की जड़ों को रोपाई से पहले 0.2 प्रतिशत बाविस्टिन के घोल (2 ग्राम दवा 1 लीटर पानी) में 5 मिनट तक डुबोकर उपचारित करें।

**बीज उपचार:** नर्सरी में बुआई से पहले बीजों को 2 ग्राम बाविस्टीन या 3 ग्राम थाइराम प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित करें। प्याज और मिर्च में इस प्रकार के रोग के लिए भी नियंत्रण का यही तरीका है।

## सब्जियों के जीवाणु (बैक्टीरियल) रोग एवं उनका नियंत्रण

जीवाणु रोगों से सब्जियों में बहुत नुकसान होता है। अलग–अलग प्रकार के जीवाणु रोग फसल विशेष पर प्रकोप करते हैं, इनमें से प्रमुख हैं–

**टमाटर व मिर्च में जीवाणु झुलसा (बैक्टीरियल लीफ स्पॉट):** इस रोग के प्रकोप से पौधों की पत्तियों पर छोटे–छोटे तैलीय या जलीय धब्बे बन जाते हैं। धब्बे बाद में गहरे भूरे से काले रंग के उठे हुए दिखाई देते हैं। कभी–कभी ये धब्बे बहुत अधिक हो जाते हैं।

**नियंत्रण:** 200 मिलीग्राम स्ट्रेप्टोसाईक्लीन प्रति लीटर पानी की दर से घोलकर आवश्यकतानुसार क्षेत्र में छिड़काव करना चाहिए। बीमारी की गम्भीरता को देखते हुए पौधा बनने से लेकर फल धारण होने तक 15 दिन के अन्तर से छिड़काव करना चाहिए।

**ग्वार का जीवाणु झुलसा:** यह रोग 'जेनथोमोनास' नामक जीवाणु से फैलता है और सब्जी वाली किस्मों में अधिक होता है। इसे रोग की शुरूआत से ही देखा जा सकता है क्योंकि यह रोग बीज से फैलता है और यदि मौसम वर्षा का बना रहे और तेज हवा चलती रहे तो स्वस्थ पौधों को भी रोगग्रस्त कर देता है। प्रारम्भ में पत्तियों पर पानी के धब्बे जैसे निशान पड़ जाते हैं जो बाद में भूरे रंग में बदल जाते हैं। ये धब्बे आपस में मिलकर बड़े धब्बे बनाते हैं तथा पूरे पौधों में फैल जाते हैं। यहाँ तक कि अधिक प्रकोप होने पर तना भूरे व काले रंग का हो जाता है और नष्ट हो जाता है तथा उसका वह भाग सूख जाता है। बीमारी आगे बढ़कर फलियों तथा बीजों को भी ग्रसित कर देती है।

**नियंत्रण:** इस रोग की रोकथाम के लिए स्ट्रेप्टोसाईक्लीन 250 मिलीग्राम एक लीटर पानी (250 पी.पी.एम.) के घोल का छिड़काव किया जाना चाहिए। छोटी अवस्था में रोग के लक्षण दिखते ही 15–15 दिन के अन्तर पर 2–3 छिड़काव करें। रोग के सुरक्षात्मक उपाय के अन्तर्गत स्वस्थ बीजों को प्रयोग में लाना चाहिए। बीजों को बुआई से पूर्व इसी एन्टीबायोटिक दवा के 250 पी.पी.एम. घोल से उपचार करके बोना चाहिए।

**खीरा में कोढ़िया पत्ती रोग:** यह खीरे में पाये जाने वाला प्रमुख रोग है। यह रोग 'स्यूडोमोनास लैक्रिमन्स' नामक जीवाणु द्वारा होता है। इसके कारण पत्तियों पर कोणीय भूरे धब्बे बन जाते हैं। पत्तियाँ सूखकर झड़ जाती हैं। प्रभावित फलों में भूरे रंग की सड़न दिखने लगती है। यह बीमारी रोगग्रस्त बेलों, बीजों तथा पानी द्वारा फैलती है।

**नियंत्रण:** स्वस्थ बीजों का प्रयोग करना चाहिए। स्ट्रैप्टोमाईसिन के 250 पी.पी.एम. के घोल के बीजों को डुबोकर उपचारित करना चाहिए। फसल पर रोग के लक्षण दिखते ही स्ट्रैप्टोमाईसिन के 250 पी.पी.एम. के घोल से छिड़काव करें।

## सब्जियों के विषाणु रोग एवं उनका नियंत्रण

सब्जियों की फसल में विषाणुओं से भी कई प्रकार की बीमारियाँ फैलती है। विषाणु रोग का उपचार बहुत कठिन है। इनका अभी तक कोई पूर्ण कारगर रासायनिक उपचार नहीं है। रोगरोधक किस्मों की बुआई ही इनका सस्ता व कारगर उपाय है। विषाणु रोग के प्रसार में एक कमजोरी यह है कि इसमें चलायमान होने की शक्ति नहीं है अतः अपने आप फैल नहीं पाता है तथा कीटों के माध्यम से ही यह एक पौधे से दूसरे पौधे में पहुँच पाता है। अतः विषाणु रोग के प्रसार को रोकने के लिए कीटों का नियंत्रण कर आसानी से उपाय किए जा सकते हैं। प्रमुख विषाणु रोग एवं उनके नियंत्रण के बारे में नीचे बताया जा रहा है।

**कुष्माण्ड कुल की सब्जियों में विषाणु रोग:** कुष्माण्ड कुल की सब्जियों में दो प्रकार के विषाणु पाए जाते हैं – (अ) कुकुम्बर मोजेक वायरस (सी.एम.बी.); (ब) वाटर मेलन मोजेक वायरस (डब्लू.एम.सी.)।

विषाणु रोग एफिड्स (मोयला या चेपा) से फैलते हैं। इस रोग के कारण पत्तियों की लम्बाई–चौड़ाई कम हो जाती है। ग्रसित पौधे के फल भद्दे रंग के व बेडौल आकार के हो जाते हैं।

**नियंत्रण:** रोग्रस्त पौधों को उखाड़कर नष्ट कर दें। विषाणुग्रस्त बीजों का प्रयोग नहीं करें तथा रोगरोधी किस्मों की ही बुआई करें। चेपा की रोकथाम के लिए फास्फोमिडान 150 मि.ली. प्रति हेक्टेयर की दर से 10–15 दिन के अन्तर पर छिड़काव करें।

**मिर्च, टमाटर एवं बैंगन के मोजेक रोग:** यह एक विषाणु रोग है जो रस चूसने वाले कीड़ों जैसे– सफेद मक्खी, एफिड या थ्रिप्स के कारण फैलता है। यह रोग मिर्च, टमाटर, बैंगन, आलू तथा कुष्माण्ड कुल की अन्य सब्जियों में अधिक होता है। इस रोग के प्रकोप से पौधों की पत्तियाँ सिकुड़ जाती हैं और झुर्रियाँ पड़ जाती हैं इसलिए इसे माथा बन्दी रोग कहते हैं। पौधा भोजन लेना बन्द कर देता है। पौधों की बढ़वार रूक जाती है और उन पर फल नहीं आते।

**नियंत्रण:** इसकी रोकथाम के लिए नर्सरी से ही उपचार करना आवश्यक है अन्यथा एक बार रोग हो जाने पर उस काबू पाना बहुत कठिन है।

1. नर्सरी में बुआई पूर्व 12 ग्राम कार्बोफ्यूरान प्रति वर्ग मीटर के हिसाब से कतारों में डालें।
2. बुआई के 10 दिन बाद नर्सरी में 10 मिली डाईमेथोएट प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।
3. पौध रोपाई के बाद– (अ) फूल आने से पहले डाइमेथोएट 1 लीटर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें, (ब) फल आते समय मेलाथिओन 50 ई.सी. 1250 मिलीलीटर प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

**भिण्डी का पत्ती–शिरा विषाणु रोग (येलो वेन मोजेक):** इस रोग मे पत्तियाँ चितकबरी या पीली हो जाती हैं और भोजन बनाना बन्द कर देती है। पौधों की बढ़वार रूक जाती है।

**नियंत्रण:** फल लगने से पहले तक टमाटर व मिर्च के विषाणु रोग की तरह ही आन्तरिक कीटनाशी जैसे डाईमेथोएट का 15–15 दिन के अन्तर पर छिड़काव करते रहना चाहिए। फल लगने पर मेलाथिआन या डायमेथोएल के घोल का फसल पर छिड़काव दोहराते रहना चाहिए। रोगरोधक भिण्डी की किस्मों की बुआई ही सर्वश्रेष्ठ उपाय है।

**माईकोप्लाज्मा रोग:** इस श्रेणी के अन्तर्गत लिटिल लीफ रोग विशेष उल्लेखनीय है। यह रोग बैंगन की फसल पर प्रकोप करता है। इस रोग में पौधे पर अनेक छोटी–छोटी पत्तियों का प्रकट होना इस रोग का प्रमुख लक्षण है। इससे पौध की बढ़वार रूक जाती है तथा फूल व फल नहीं लगते।

**नियंत्रण:** रोग फैलाने वाले कीड़ों के नियंत्रण के लिए 1 मि.ली. मेलाथियान का प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर पौधों पर छिड़काव करना चाहिए।

## रोगों का जैव नियंत्रण उपाय

**ट्राइकोडर्मा:** यह फफूँद विरोधी जैव संगठक है जो सब्जियों की फसलों में बीज एवं पौध गलन, पद गलन, जड़ गलन व उखटा आदि की बीज एवं मृदा जन्य बीमारियों से सुरक्षा में प्रभावी है। ट्राइकोडर्मा से बीज उपचार कम लागत में सरलता से किया जा सकता है। इसकी 4 से 6 ग्राम मात्रा प्रति किलो बीज की दर से आवश्यकता होती है। जड़ गलन एवं उखटा रोगग्रसित खेतों में प्रति वर्ष इससे बीज अथवा पौध को उपचार करके बोना चाहिए। ट्राइकोडर्मा में फफूँद के स्पोर होते है। इन्हें सूखे एवं ठण्डे स्थानों पर भण्डारित करना चाहिए तथा तीन माह के भीतर इसे प्रयोग कर लेना चाहिए। ट्राइकोडर्मा का भूमिगत बीमारियों के निदान हेतु उपयोग किया जाता है। यह एक एन्टागोनिस्टक फफूँद है जिसके कारण रोगजनित फफूँद की वृद्धि रुक जाती है एवं पौधों पर रोगों का प्रकोप भी कम हो जाता है। यह एक जैविक नियंत्रण विधि होने के कारण इससे फसलें रासायनिक दवाओं के दुष्परिणाम से अप्रभावित रहती है। ट्राइकोडर्मा को किसान भाई काजरी के एटिक केन्द्र से प्राप्त कर सकते हैं।

## प्रयोग विधि

**बीजोपचार:** कृषि एवं उद्यानिकी फसलों में बीजोपचार 4 से 8 ग्राम प्रति किलो बीज की दर से किया जाता है।

**जड़ोपचार:** पौध की जड़ों को उपचार कर लगाने से फसल में बीमारी कम आती है। इसके लिए 500 ग्राम ट्राइकोडर्मा 5 लीटर पानी में घोल बनाकर जड़ों को आधा घंटा डुबोकर रोपण करना चाहिए।

**भूमि उपचार:** 1–2 कि.ग्रा. ट्राइकोडर्मा 40 कि.ग्रा. गोबर की खाद में मिलाकर बुआई के पूर्व एक हेक्टेयर क्षेत्र में मिलाये।

**नर्सरी उपचार:** सब्जियों की नर्सरियों में 5 ग्राम ट्राइकोर्डमा प्रति वर्गमीटर की दर से बीज की बुआई के पूर्व में मिलायें। हमें यह जानकारी होनी चाहिए कि रोग बीज जनित है या भूमि जनित या हवा के माध्यम से फैलने वाला।

## रोगों के उपचार करते समय ध्यान रखने वाली बातें

रोग का प्रकोप उसके मौसम की अनुकूलता से ही बढ़ता है, जैसे : आर्द्रता, तापक्रम, नमी, वर्षा आदि अनुकूल मौसम

मिलते ही झुलसा, उकठा, छाछ्या आदि रोग पत्तियों, तनों, फलों आदि पर फैलने लगते हैं। रोग संक्रमण की पहचान, फसल पर आए लक्षणों जैसे – धब्बे होना, पीला होना, चूर्ण जमा हुआ दिखना, पत्तियाँ सिकुड़ना, तना सूखना, पौधा मुरझाना, फलों का सड़ना आदि को देखकर रोग को पहचानने का ज्ञान होना चाहिए ताकि उसके अनुसार सही रोगनाशक रसायनों का प्रयोग किया जा सके। बीज व जड़ों के रोगों की पहचान इन भागों के रोगग्रस्त होने से की जा सकती है।

कई रोगों के लिए सुरक्षात्मक उपाय रोग होने से पूर्व ही करना पड़ता है जबकि अधिकतर रोगों में बीमारी के लक्षण दिखने पर ही नियंत्रण कार्य किया जाता है। अतः पहले यह निश्चित करना होगा कि फसल पर किस प्रकार का संक्रमण है तथा उसके बाद सही पौध संरक्षण दवाओं का चयन करना चाहिए।

रोग नियंत्रण में हमेशा यह ध्यान रखना चाहिए कि रसायनों का उपयोग उनकी प्रारम्भिक अवस्था से करें अन्यथा बाद में उनका नियंत्रण करना सम्भव नहीं होता। अतः सही पौध–संरक्षण रसायनों का सही समय पर प्रयोग करना चाहिए तभी किए गए खर्चे से ज्यादा लाभ प्राप्त हो सकेगा तथा किफायती भी रहेगा।

# सब्जियों में कीट प्रबंधन

**निशा पटेल**
केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर

सब्जी उत्पादन में कीटों का प्रकोप एक प्रमुख समस्या है। विभिन्न प्रकार के कीट सब्जियों के पौधों में अंकुरण से लेकर फल बनने तक नुकसान पहुंचाते हैं। पश्चिमी राजस्थान में उगाई जाने वाली सब्जियों में मिर्च, टमाटर, प्याज, लहसुन, टिंडा, तोरई, बैंगन, गोभी आदि प्रमुख हैं। यहाँ इन सब्जियों पर लगने वाले प्रमुख कीटों एवं उनसे निदान के उपाय सुझाए गए हैं। सब्जियों पर हमला करने वालों के साथ अन्य कीटों की सही ढंग से पहचान करना, इन कीटों को प्रभावी ढंग से नियंत्रित करने की दिशा में पहला कदम है। सब्जियों को नुकसान पहुँचाने वाले कीटों में रस चूसने वाले कीट, पत्तियों व फलों को खाने वाले कीट, लटें, टिड्डे, तने में छेद करने वाले, जड़ों को नुकसान पहुंचाने वाल कीट, दीमक, आदि प्रमुख हैं। कुछ कीट सब तरह की फसलों में नुकसान पहुंचाते हैं इन्हें बहुभक्षी कीट कहा जाता है। रस चूसने वाले कीड़ों में सफेद मक्खी, चेपा, फुदका, छोटी मकड़ियां, थ्रिप्स आदि प्रमुख कुछ अन्य कीट किसी खास फसल पर ही लगते हैं जैसे बैंगन का फल एवं प्ररोह छेदक।

## बहु भक्षी कीट

**एफिड्स (चेपा या माहू):** सब्जियों पर लगने वाले प्रमुख कीटों में से एक है एफिड्स जिसे चेपा या माहू या मोयला भी कहा जाता है। एफिड छोटे, नाशपाती के आकार के, कोमल शरीर वाले, हरे, पीले, भूरे, लाल या काले रंग के कीट होते हैं। पौधों पर ये बड़ी संख्या में मिलते हैं। अधिकांश सब्जियों पर इनका हमला होता है। ये पत्तियों का रस चूस कर पौधों को कमजोर कर देते हैं जिससे पौधों की प्रकाश संश्लेषण क्रिया प्रभावित होती है और उनकी उत्पादकता बहुत कम हो जाती है। ये एक मीठा पदार्थ भी स्रावित करते हैं जिसे अंग्रेजी में हनीड्यू कहते हैं, जिससे पत्तियों पर चिपचिपाहट हो जाती है। इस पदार्थ पर फफूंद लगने से पौधों की प्रकाश संश्लेषण क्रिया प्रभावित होती है और पौंधे मुरझा कर सूखने लगते हैं और उनकी उत्पादकता बहुत कम हो जाती है। ये पौधों में वायरस भी संचारित करते हैं जिनसे पत्तियाँ सिकुड़ जाती हैं या पीली पड़ जाती हैं। आमतौर पर वयस्क एफिड पंखहीन होते हैं, पर जब उनकी संख्या काफी बढ़ जाती है तब वे पंखों सहित भी मिलते हैं। उनकी कई प्रजातियाँ होती हैं पर सबका प्रबंधन का तरीका समान होता है। इनकी एक साल में कई पीढ़ियाँ होती हैं। गर्म मौसम में अवयस्क एफिड सात–आठ दिनों में वयस्क बन जाते हैं। हर वयस्क एफिड अनुकूल मौसम में करीब 80 संतानें पैदा कर सकता है जिसके कारण इनकी संख्या तेजी से बढ़ती है ।

**नियंत्रण:** नाइट्रोजन वाली खाद जैसे यूरिया आदि का अधिक उपयोग करने से चूसनेवाले कीड़ों का प्रकोप ज्यादा होता है अतः नाइट्रोजन खाद का अधिक प्रयोग न करें। 'लेडीबर्ड बीटल' नाम का भृंग चेपा को खाकर उसकी संख्या कम करता है इसलिए लेडीबर्ड भृंग का संरक्षण करें। अधिक प्रकोपित पत्तों को निकालकर नष्ट कर दें। इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. 1 मि.ली./3 लीटर या डाइमेथोएट 30 ई.सी. 2 मि.ली./लीटर या क्विनलफॉस 25 ई.सी. 2 मि.ली./लीटर का छिड़काव करें।

**फुदके या जेसिड्स:** जेसिड या फुदके हल्के हरे या भूरे रंग के कीड़े होते हैं। वयस्क एवं अवयस्क पत्तों की निचली सतह से रस चूसते हैं जिसके कारण पत्तियाँ पीली हो जाती हैं और ऊपर की ओर मुड़ जाती हैं। पत्तियों का आकार कप जैसा हो जाता है और किनारे जले हुये से दिखते हैं। प्रभावित पत्ते बाद में लाल रंग के भुरभुरे होकर झड़ जाते हैं। यदि मौसम बादलों वाला हो तो कीटों की संख्या तेजी से बढ़ती है। साथ ही यदि तेज बारिश हो जाए तो ये घुल कर साफ हो जाते है। ज्यादा आक्रमण होने पर फलों में भी आक्रमण हो जाता है।

**नियंत्रण:** जमीन में 50 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से नीम की खल मिलाएं। उसके बाद 4 प्रतिशत नीम के अर्क का छिड़काव करें। बीजों का इमिडाक्लोप्रिड से उपचार करें। ये लगभग प्रथम 45 दिनों तक पौधे को कीट प्रकोप से बचाती है। फूल आने से पहले की अवस्था में इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. 1 मि.ली./3 लीटर या डाइमेथोएट 30 ई.सी. 2 मि. ली./लीटर का छिड़काव करें। 10 दिन के अंतराल पर दोहराएं।

**लाल मकड़ी माइट:** लाल मकड़ियों का प्रकोप शुष्क मौसम एवं आर्द्रता कम हो जाने पर अधिक होता है। मकडियों के वयस्क और निम्फ पत्तियों की निचली सतह पर सफेद रेशमी जाले बनाकर पत्तियों से रस चूसते हैं जिसके कारण पत्तियों पर सफेद धब्बे दिखाई देते हैं। प्रभावित पत्तियां धीरे–धीरे मुड़ना शुरु हो जाती हैं और अंत में झुर्रीदार हो जाती हैं। पत्तों का रंग धीरे–धीरे भूरा हो जाता है। अधिक प्रकोप होने पर पत्तियाँ सूखकर गिर जाती हैं। अंडों की अवस्था में मकड़ियों पर कीटनाशकों का कोई असर नहीं होता है।

**नियंत्रण:** अत्यधिक प्रभावित पत्तों/पौधों को इकट्ठा करके जला देना चाहिये ताकि अन्य पौधों में उनका प्रकोप ना हो। उचित सिंचाई और स्वच्छ खेती से कीट की आबादी नियंत्रण में रखी जा सकती है। डिकोफोल (18.5 ई.सी. 2.5 मिली/लीटर का छिड़काव करें) या सल्फर 75 डब्लू पी पाउडर 3 ग्राम प्रति लीटर पानी के हिसाब से लाल मकड़ियों का प्रभावी नियंत्रण सम्भव है।

**सफेद मक्खी (व्हाइट फ्लाई):** सफेद मक्खी ज्यादातर पत्तियों की निचली सतह पर पाई जाती है। यदि पौधों को हिलाया जाये तो उस पर से कई छोटे–छोटे सफेद कीट उड़ते दिखाई देते हैं। इस कीट के वयस्क एवं छोटी अवस्था दोनों ही पत्तों से रस चूसते हैं जिसके कारण पौधे की उत्पादकता कम हो जाती है। इनके अवयस्क जिन्हें निम्फ कहते हैं, पत्तियों से चिपक कर लगातार उनका रस चूसते रहते हैं। सफेद मक्खी के आक्रमण से पत्तियां पीली पड़ जाती हैं एवं मुड़ जाती हैं। इनके द्वारा मीठे द्रव्य के स्राव के कारण पत्तियों पर काली फफूंद लग जाती है जिस से प्रकाश संश्लेषण कम हो जाता है और पौधों की भोजन बनाने की क्षमता कम हो जाती है। यह कीट वायरस जनित पत्ती मोड़क रोग भी फैलाता है।

**नियंत्रण:** सफेद मक्खी का नियंत्रण निम्नवत तरीके से संभव है।

1. पौध तैयार करते समय नर्सरी को 40 मेश की नाइलोन की नेट से ढक कर रखें।
2. रोपाई से पहले पौधों की जड़ों को आधे घंटे के लिए इमिडाक्लोप्रिड 200 एस एल 0.3 मि.ली./प्रति ली पानी के घोल में डुबोएं।
3. नीम बीज अर्क (4 प्रतिशत) या डाइमेथोएट 30 ई.सी. 2 मि.ली./लीटर या मिथाइल डेमिटोन 30 ई.सी. 2 मि.ली./लीटर या इमिडाक्लोप्रिड 200 एस एल 0.3 मि.ली./प्रति लीटर पानी का छिड़काव करें।

**दीमक:** दीमक सफेद मटमैले कोमल शरीर वाले कीड़े हैं जो जमीन में बहुत बड़े समूहों में रहते हैं। कुछ लोग इन्हें सफेद चींटियाँ भी कहते हैं हालांकि, दीमक चींटियाँ नहीं हैं। ये पौधों की जड़ों को खा जाते हैं। जिससे पौधे मुरझा कर सूख जाते हैं। पौधों में पानी की कमी या सूखे की अवस्था में इनका आक्रमण अधिक होता है।

**नियंत्रण:** जिन खेतों में दीमक की स्थाई समस्या हो वहां पर बुआई से पहले भूमि उपचार करना आवश्यक है। जमीन में 25 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से क्लोरपायरीफॉस पाउडर भूमि में मिलाकर डालना चाहिए।

बीज का उपचार करने से दीमक की समस्या से कुछ समय तक राहत मिल जाती है। बीजोपचार के लिए क्लोरपायरीफॉस 4 मि.ली. प्रति किलो बीज के हिसाब से बीज में मिलकर बीजों को छाया में सुखा लेना चाहिए, इसके बाद बीज को बोना चाहिए। जिन फसलों की रोप पौध तैयार की जाती है, उन्हें रोपने से पहले उनकी जड़ों को इमिडाक्लोप्रिड नामक कीटनाशी 200 एस एल 0.3 मि.ली./लीटर पानी में कुछ समय के लिए डुबोना चाहिए। अगर फसल खेत में दीमक लग जाए तो जहाँ दीमक लगी हो फसल के उस हिस्से में ही कीटनाशी जैसे क्लोरपायरीफॉस का प्रयोग करें, पूरे खेत में नहीं ।

## प्याज वर्गीय सब्जियाँ

**थ्रिप्स:** प्याज और लहसुन में थ्रिप्स अत्यधिक हानि पहुंचाते हैं। ये कीट कई प्रकार की फसलों के पौधों को नुकसान पहुंचाते हैं। प्याज लहसुन के अलावा ये पत्तागोभी, टमाटर, ककड़ी, कपास, कद्दू, तरबूज आदि पौधों में भी हानि पहुंचाते हैं। थ्रिप्स के वयस्क 1/20 इंच लम्बे, छोटे और पतले कीड़े होते हैं। उनका रंग हल्का या गहरा भूरा होता है। पंख पतले एवं झालरदार होते हैं। इन कीटों से सबसे ज्यादा नुकसान आम तौर पर गर्म एवं शुष्क मौसम में होता है। नुकसान पत्तियों पर सफेद धारियों के रूप में प्रकट होता है। वयस्कों एवं शिशु दोनों ही पत्तियों को खुरचकर उसमें से उनका रस पी जाते हैं। इनके प्रकोप से पौधों की बढ़त रुक जाती है और उसमे फल बीज कम बनते हैं। वर्ष भर में इनकी कई पीढ़ियाँ हो जाती हैं।

**नियंत्रण:** इसके वैकल्पिक भोजन जैसे खरपतवार को हटा देने से इन कीटों की आबादी को नीचे लाने में मदद मिलती है। हर वर्ष प्याज, लहसुन या इसके अन्य वैकल्पिक पौधे न लगाएं। फसल प्रबंधन के कुछ आसान तरीकों को अपनाकर थ्रिप्स के आक्रमण से बचा जा सकता है। खेतों में साफ सफाई रख कर और थोड़ी देर से बुआई करके जल्दी आने वाले कीटों से बचा जा सकता है एवं छिड़काव सिंचाई से कीटों की आबादी को कम किया जा सकता है। सतही सिंचाई की तुलना में ड्रिप द्वारा सिंचाई से इनकी संख्या काफी कम हो जाती है। पत्तियों के घेरों के बीच छुपे हुए कीट इससे पानी से धुल जाते हैं और निरंतर गीलेपन की वजह से मिटटी में छुपे प्यूपा नष्ट हो जाते हैं। थ्रिप्स के नियंत्रण के लिए कार्बेरिल 50 डब्ल्यू.पी. 2 ग्राम/लीटर या डाइमेथोएट 30 ई.सी. 2 मि.ली./लीटर का छिड़काव करें।

**प्याज मक्खी (ओनियन मैगट):** इस कीट के प्रकोप की वजह से पौधे ऊपर से नीचे की तरफ भूरे पड़कर सूख जाते हैं। कंद या इसके पास के पत्तों का हिस्सा नम हो जाता है। इसके अलावा शिशु कंद को भी पूरी तरह नष्ट कर देते हैं।

**नियंत्रण:** इस कीट के नियंत्रण के लिए दानेदार कीटनाशी कार्बोफ्युरान 3 जी 25 कि.ग्रा./हेक्टेयर या फिप्रोनिल 0.3 जी. 18 कि.ग्रा./हेक्टेयर प्रयोग करें।

## टमाटर में लगने वाले कीड़े और उनका प्रबंधन

टमाटर की फसल में लगने वाले प्रमुख कीट फल छेदक, कपास इल्ली, लीफ माइनर और सफेद मक्खी हैं। सफेद मक्खी के नियंत्रण के उपाय पहले बताये गए हैं।

**टमाटर फल छेदक (टोमेटो फ्रुट बोरर):** इस कीट की सूंड़ियां छोटी अवस्था में पत्तों को खाती हैं और बड़े होने के बाद फलों को खाने लगती हैं। सूंड़ियां फलों में छेदकर इनके पदार्थ को खाती हैं तथा आधी फल से बाहर लटकती नजर आती हैं। एक सूंड़ी कई फलों को नुकसान पहुंचाती है। इसके अतिरिक्त ये पत्तों को भी हानि पहुंचाती हैं।

**नियंत्रण:** टमाटर की प्रति 16 पंक्तियों पर ट्रैप फसल के रूप में एक पंक्ति गेंदा की लगाएं। इस पर यह कीट पहले अंडे देते हैं।

1. जिन फलों पर सुन्डी लग गई हो उन्हें इकट्ठा कर के नष्ट कर दें।
2. इस कीड़े की निगरानी के लिए 5 फेरोमोन ट्रैप प्रति हेक्टेयर लगाएं।
3. छोटी अवस्था में लटों को 5 प्रतिशत नीम बीज अर्क के छिड़काव से नियंत्रित किया जा सकता है। जरूरत पड़ने पर एन.पी.वी. 250 एल.इ./हेक्टेयर या बी.टी. 1 ग्राम/लीटर पानी या एमामेक्टिन बेन्जोएट 5 एस.जी. 1 ग्राम/2 लीटर या स्पिनोसेड 45 ए 45 एस.सी. 1 मि.ली./4 लीटर या डेल्टामेथ्रिन 2.5 ई.सी. 1 मि.ली./लीटर पानी का ) का छिड़काव करें।

**तम्बाकू की इल्ली (टोबैको कैटरपिल्लर):** इस कीट की लटें पौधे की नई कोंपलों और पत्तों को खाती हैं। अधिक प्रकोप होने पर पौधे के सारे पत्ते खत्म हो जाते हैं। ये फलों को भी खाती हैं।

**नियंत्रण:** अधिक प्रकोप वाले पौधों को निकालकर जमीन में दबा दें। खेत में फेरोमोन ट्रैप लगाएं जिससे कीट की उपस्थिति का पता लग जायेगा। बी.टी. 1 ग्राम/लीटर या नीम बीज अर्क (5 प्रतिशत) या स्पिनोसेड 45 एस.सी. 1 मि.ली./4 लीटर या डेल्टामेथ्रिन 1 मि.ली./लीटर पानी छिड़कें।

**पत्ती सुरंगक कीट (लीफ माइनर):** इस कीट के शिशु पत्तों के हरे पदार्थ को खाकर इनमें टेढ़ी–मेढ़ी सफेद सुरंगें बना देते हैं। इससे पौधों का प्रकाश संश्लेषण कम हो जाता है। अधिक प्रकोप से पत्तियाँ सूख जाती हैं।

**नियंत्रण:** ग्रसित पत्तियों को निकाल कर नष्ट कर दें। डाइमेथोएट 2 मि.ली./लीटर या इमिडाक्लोप्रिड 1 मि.ली./3 लीटर या मिथाइल डेमिटोन 30 ई.सी. 2 मि.ली./लीटर पानी का छिड़काव करें।

## बैंगन के कीट व उनका प्रबंधन

बैंगन की फसल में लगने वाले प्रमुख कीट हैं– प्ररोह व फल छेदक, तना छेदक (स्टेम बोरर), हड़डा भृंग और लेस विंग बग।

**प्ररोह व फल छेदक (शूट एंड फ्रुट बोरर):** इस कीट के लार्वा आरंभिक चरणों में, तने में छेद कर देते हैं जिससे पौधों का विकास रुक जाता है। मुर्झाये, झुके हुए तने का दिखाई देना इसका प्रमुख लक्षण है। ग्रसित पौधों में फल देरी से लगता है तथा कई बार फल लगते ही नहीं। बाद में लार्वा फल में छेद कर देते हैं जिससे वह खपत के लिए अयोग्य हो जाता है। ग्रसित प्ररोह मुरझा कर सूख जाते हैं।

**नियंत्रण:** पिछले वर्ष के पौधों पर दोबारा उत्पादन (रेटून) यानि पेड़ी फसल न लें क्योंकि इसमें फल छेदक का प्रकोप अधिक होता है। ग्रसित प्ररोहों व फलों को निकाल कर भूमि में दबा दें।

1. फल छेदक की निगरानी के लिए 5 फेरोमोन ट्रैप प्रति हेक्टेयर का इस्तेमाल करें।
2. नीम बीज अर्क (5 प्रतिशत) या बी.टी. 1 ग्राम/लीटर या स्पिनोसेड 45 एस.सी. 1 मि.ली./4 लीटर या कार्बेरिल, 50 डब्ल्यू.पी. 2 ग्राम/लीटर या डेल्टामेथ्रिन 1 मि.ली. /लीटर इस्तेमाल करें।

**तना छेदक (स्टेम बोरर):** सूंड़ी पौधों के प्ररोह को नुकसान करती है तथा बाद में मुख्य तने में घुस जाती है। छोटे ग्रसित पौधे मुरझाकर सूख जाते हैं। बड़े पौधे मरते नहीं, ये बौने रह जाते हैं तथा इनमें फल कम लगते हैं।

**नियंत्रण:** ग्रसित पौधों को निकाल कर नष्ट कर दें। प्ररोह व फल छेदक के लिए सुझाई गई नियंत्रण विधियां, इसके लिए भी प्रयोग की जा सकती हैं।

**लेस विंग बग:** इस कीट के शिशु व वयस्क दोनों ही पौधों से रस चूसकर हानि पहुंचाते हैं। वयस्क बग के अगले पंखों पर शिराओं का जाल–सा बन जाता है अतः इसे लेस विंग बग कहते हैं।

**नियंत्रण:** डाइमेथोएट 30 ई.सी. 2 मि.ली./लीटर या इमिडाक्लोप्रिड 11.8 एल.एल. 1 मि.ली./3 लीटर का इस्तेमाल करें।

**हड्डा बीटल:** इसके वयस्क पत्तों की ऊपरी सतह से जबकि शिशु निचली सतह से पत्तों के हरे पदार्थ को खाते हैं। ग्रसित पत्ते सूख कर गिर जाते हैं।

**नियंत्रण:** वयस्कों, शिशुओं व अंडों के झुंडों को इकट्ठा करके नष्ट कर दें। समय–समय पर पर्ण कुंचन से प्रभावित पौधों को निकाल बाहर करें।

नीम बीज अर्क (5 प्रतिशत) या स्पिनोसेड 45 एस.सी. 1 मि.ली./4 लीटर या इन्डोक्साकार्ब 14.5 एस.सी. 1 मि.ली./2 लीटर पानी का छिड़काव करें।

**फल मक्खी (फ्रुट फ्लाइ):** कद्दू वर्गीय सब्जियों जैसे करेला, टिंडा, खीरा, लौकी, तुरई कद्दू, आदि में फल मक्खी का बहुत नुकसान होता है। घरेलू मक्खी जैसी दिखने वाली इस मक्खी का आकार छोटा होता है तथा 3–4 दिन के बाद अंडों में से सुंडी निकल कर फलों के गूदे को खाने लगती हैं। फल के गूदे को भीतर ही भीतर खाकर सुरंगें बना देते हैं। सूड़ी करीब 1 से.मी. लम्बी एवं बिना टाँगों की होती है। इसके खाने और मल से फल सड़ने लगते हैं। कई बार उनमे फफूंद भी लग जाती है। 1–2 सप्ताह बाद सूड़ी जमीन पर गिरकर प्यूपा में परिवर्तित हो जाती है।

**नियंत्रण:**

1. खेत की निराई करके प्यूपा को नष्ट कर दें।
2. ग्रसित फलों को भी एकत्रित करके नष्ट कर दें।
3. मक्खियों को आकर्षित कर मारने के लिए मीठे जहर, जो कार्बेरिल 50 डब्ल्यू.पी. 2 मिली/लीटर व 1 प्रतिशत चीनी/गुड़ (25 ग्राम/लीटर) से बनाया जा सकता है, का 50 लीटर/हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें।
4. फल मक्खी के नरों को आकर्षित करने के लिए ''मिथाइल यूजीनोल'' का प्रयोग भी किया जा सकता है।

## भिन्डी के कीट व उनका प्रबंधन

भिंडी की नरम और कोमल प्रकृति तथा उच्च नमी के कारण इसकी खेती में कीटों व हमले की संभावना अधिक रहती है। एक अनुमान के अनुसार कीटों व रोगों के प्रकोप से कम से कम 35 से 40 प्रतिशत उत्पादन का नुकसान हो सकता है। भिंडी में लगने वाले प्रमुख कीट हैं फल और तना छेदक लट, जेसिड्स फुदका, लाल मकड़ी और सफेद मक्खी।

**फल व तना छेदक:** इसके मौथ (तितली) नये निकल रहे पत्तियों, फूलों, फलों, तनों के ऊपरी भाग में अण्डे देते हैं। कोमल भागों पर निकलने वाली इल्ली आक्रमण करती है, यह आक्रमण फसल के प्रारंभिक अवस्था में होता है। इस कीट की लटें पौधों की शाखाओं में व फलों में सुरंग/छेद बनाकर उसे अंदर ही अंदर खाती हैं जिस के कारण पौधा सूख जाता है। फलों में प्रकोप होते पर वे खाने योग्य नहीं रहते।

**नियंत्रण:** बीजों का इमिडाक्लोप्रिड से उपचार करें। फल आने पर कार्बेराइल, फेनवलरेट, सायपरमेथ्रिन का उपयोग करें। दवा छिड़काव के बाद कम से कम तीन दिनों तक फल न तोड़ें।

कीटनाशकों के अंधाधुंध प्रयोग से कई गंभीर नुकसान होते हैं। जो सब्जियाँ कम अंतराल पर काटी जाती हैं उनमें डाले जाने वाले कीटनाशकों के अवशेष उच्च स्तर पर सब्जियों में रह जाते हैं जो उपभोक्ताओं के लिए बेहद खतरनाक हो सकते हैं। इनके अवशेषों के कारण मनुष्यों में कई प्रकार की बीमारियाँ हो रही हैं। पर्यावरण में अनेक जीव जंतुओं पर भी इनका प्रभाव पड़ता है। अतः इनका प्रयोग सावधानीपूर्वक एवं आवश्यकतानुसार ही करना चाहिए।

## नीम आधारित कीटनाशी

भारत में देश के लगभग हर भाग में हर गाँव में नीम के पेड़ होते हैं। नीम के पत्तों और निबौलियों में अनोखे कीटनाशी गुण होते हैं। अधिकांश नीम आधारित कीटनाशी कई प्रकार के कीटों पर प्रभावी हैं। किसान आसानी से अपने घरों में खेत खलिहानों में विभिन्न प्रकार नीम आधारित कीटनाशी जैसे नीम के पत्तों का अर्क, नीम के बीज की गिरी का अर्क, नीम की खली से कीटनाशी आदि स्वयं बना सकते हैं और अपने खेतों में कीट नियंत्रण के लिए इन सस्ते उत्पादों का उपयोग कर के अपने स्वास्थ्य और पर्यावरण की रक्षा कर सकते हैं एवं पैसे बचा सकते हैं।

## नीम की गिरी से अर्क बनाना

मई से लेकर अगस्त के महीने में जब नीम पर निबौलियां पकने लगती हैं इस समय निबौलियों को इकठ्ठा कर लेना चाहिए। इन निबौलियों को मिटटी व् फफूंद लगने से बचाना चाहिए। निबौलियों को 1–2 दिन बाल्टी, टब या किसी चौड़े बर्तन में पानी में भिगो कर रखें। उसके बाद हाथ से मसल कर गूदा हटा दें। अब इन निबौलियों को अच्छी तरह सुखा कर हवादार जगह पर रख लें। बीज का बाहरी छिलका हटाने के लिए इन्हें इमाम दस्ते में डालकर हल्का–हल्का कूट कर उसकी गिरी अलग कर लें। इस गिरी का प्रयोग कीटनाशी बनाने के लिए किया जाता है। यदि 10 लीटर पानी का घोल स्प्रे तैयार करना हो तो करने के लिए 500 ग्राम नीम गिरी की आवश्यकता होती है। अगर नीम का बीज बिना बाहरी छिलका निकले काम में लेना है तो इसकी डेढ़ गुना मात्रा (750 ग्राम)

की आवश्यकता होती है। गिरी को सावधानी पूर्वक धीरे–धीरे कूटा जाता है ताकि नीम गिरी का तेल बाहर न निकले।

नीम गिरी पाउडर को एक मलमल थैली में इकट्ठा करके थैली में गाँठ लगा कर रात भर पानी में भिगो रख देते हैं। अगले दिन इस थैली को पानी में अच्छी तरह निचोड़ कर नीम गिरी का अर्क पानी में छान लिया जाता है। इस छने हुआ अर्क के घोल में 1 लीटर पानी में 1 मिलीलीटर के हिसाब से इमल्सीफायर (साबुन घोल) मिलाया जाता है जो इस घोल को पत्तियों पर चिपकने में मदद करता है।

नीम गिरी अर्क का घोल दूधिया सफेद रंग का होना चाहिए न कि भूरे रंग का। यह घोल चेपा, सफेद मक्खी, तना–तन छेदक जैसे रस चूसने वाले कीड़ों का नियंत्रण नहीं करता। इनके नियंत्रण के लिए नीम के तेल का घोल बना कर इस्तेमाल में लेना चाहिए।

## नीम पत्तों से कीटनाशी

हरी नीम की 1 किलो पत्तियाँ 5 लीटर पानी के लिए पर्याप्त है, क्योंकि इसमें पत्तियों की मात्रा काफी होती है (लगभग 80 किलो 1 हेक्टेयर के लिए आवश्यक है)। इसे नर्सरी और किचन गार्डन के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है। पत्तियों को पानी में रात भर भिगो कर रखा जाता है। अगले दिन, पत्तियों को कूट कर पानी को छान लिया जाता है। पत्तियों से बना कीटनाशी घोल पत्ते खाने वाली लटों, भूमि वाली लटों, टिड्डियां और टिड्डों के खिलाफ इस्तेमाल के लिए उपयुक्त होता है।

## मित्र कीट

सभी कीट हमारे शत्रु नहीं होते हैं। कई कीट महत्वपूर्ण परभक्षी हैं और नुकसान पहुँचानेवाले कीटों को खा जाते हैं। हमारे खेतों को नुकसान पहुंचानेवाले कीटों से बचाने के लिए और अधिक उपज प्राप्त करने के लिए आवश्यक है कि हम अपने मित्र और दुश्मन कीटों को पहचानें और ऐसी परिस्थितियां बनाएँ जो लाभप्रद कीटों को बढ़ावा दें और इनकी मदद से नुकसान पहुंचाने वाले कीटों की संख्या कम करें। इससे कीटनाशकों का उपयोग कम या बिल्कुल बंद करने में भी मदद मिलती है। हमारे खेतों में आमतौर पर मिलने वाले प्रमुख मित्र कीट हैं लेडीबर्ड, भृंग, लेसविंगकीट, सिर्फिड मक्खी, मकड़ियां आदि।

**लेडीबर्ड बीटल:** इसके वयस्क बगीचों और खेतों में अक्सर दिखनेवाले नारंगी या लाल पर काली धारियों वाले कीट होते हैं। इनके वयस्क और लार्वा दोनों ही परभक्षी होते हैं और कई प्रकार के कीड़ों जैसे लटों, चैपा जैसिड, मीली बग, सफेद मक्खी आदिं के अंडो तथा पौधों को नुकसान पहुंचाने वाली मकड़ियों को अपना भोजन बनाते हैं। वयस्क फूलों के रस (नेक्टर) और पराग की ओर आकर्षित होते हैं और परागण में भी मदद करते हैं।

**लेसविंग:** इस कीट के पंख लगभग 3/4 इंच लम्बे और हरे या भूरे रंग के पारदर्शी होते हैं और जिसमें नसें दिखाई देती हैं। इस मक्खी के वयस्क फूलों में परागण करते हैं और इसके लार्वा छोटे हानिकारक कीटों को खाते हैं। इनके लार्वा भूरे या हरे रंग के होते हैं।

**सिर्फिड मक्खियाँ:** ये भी किसानों की मित्र कीट होती हैं। वयस्क सिर्फिड के पेट पर काले और पीले या सफेद धारीदार घेरे जैसे बने होते हैं। देखने में ये मधुमक्खी या ततैये जैसे दिखती हैं। सिर्फिड मक्खियाँ खेतों और बगीचों में रस चूसने वाले कीट जैसे चेपा, जैसिड, छोटे आकार की लट और मीलीबग आदि का नियंत्रण करती हैं। सभी प्रकार के पौधों पर विविध तरह की मकड़ियां रहती हैं और ये प्रचुर मात्रा में विभिन्न तरह के हानिकारक कीटों को अपना भोजन बनाती हैं।

मित्र कीटों को प्रोत्साहित करने के लिए खेत में कई प्रकार के पौधे लगाएँ। विशेषकर जिन पर अधिक मात्रा में फूल आते हों जैसे खेजड़ी, कुमट, मेहन्दी, बेर आदि। फसल के चारों तरफ देसी घास की पट्टी विकसित करें। लाभप्रद कीड़ों को आकर्षित करने एवं जीवित रखने के लिए पानी की व्यवस्था करना एक सरल उपाय है। किसी कम गहरे बर्तन में पानी भरकर रखने से कई प्रकार के लाभप्रद कीड़ों को खेत में आकर्षित किया जा सकता है। बिना जरुरत के या पहले से तयशुदा कार्यक्रम के हिसाब से कीटनाशियों का छिड़काव न करें। खेतों में उपलब्ध झाड़ियाँ, फसलों के अवशेष, सूखी पत्तियां आदि लाभकारी कीटों के लिए छिपने के लिए एक उपयुक्त स्थान उपलब्ध कराते हैं, इसलिए खेतों में अत्यधिक साफ सफाई न रखकर कुछ मात्रा में झाड़ियाँ और फसल अवशेष आदि रहने दे।

# सब्जियों में सूक्ष्म पोषक तत्व प्रबंधन

**नवरतन पवार एवं प्रदीप कुमार**
केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर

सब्जी उत्पादन नकदी फसल व्यवसाय है। खाद्यान्न फसलों की अपेक्षा सब्जियों में मुख्य पोषक तत्वों जैसे नत्रजन, फास्फोरस, पोटाश या ज्यादा से ज्यादा कैल्शियम, मैग्नीशियम व सल्फर के साथ–साथ सूक्ष्म पोषक तत्वों जैसे जिंक, मैंगनीज, ताँबा, लोहा, जस्ता, बोरॉन एवं मोलिब्डेनम का संतुलित मात्रा में प्रयोग करना अत्यन्त आवश्यक है। सूक्ष्म पोषक तत्व पौधों की विभिन्न महत्वपूर्ण कर्यिकी प्रक्रिया को सफलता से निष्पादन करने में अपनी भूमिका निभाते हैं जो सीधे तौर से कुल उत्पादन पर प्रभाव डालता है, साथ ही ये उत्पाद की गुणवत्ता को गिरने से (कार्य की विकृतियों के कारण) बचाने में मदद करते हैं, क्योंकि उत्पाद की गुणवत्ता इनके अच्छे बाजार भाव के लिए आवश्यक होती है। सब्जियों का मानव भोजन व स्वास्थ्य में लाभ को देखते हुये इनकी माँग बढ़ रही है जिससे इनके फसल उत्पादन का क्षेत्र भी दिनो दिन बढ़ता जा रहा है अर्थात इस व्यावसायिक फसल को परंपरागत किसानों के अलावा नये किसान भी अपना रहे हैं। चूँकि अधिकतर किसान काफी समय से खाद्यान्न फसलों को उगाते आ रहे हैं जिनमें वे मुख्य पोषक तत्वों के प्रयोग पर ही ध्यान देते हैं और समझते हैं कि बाकी के (सूक्ष्म) पोषक तत्वों की फसल को जरूरत नहीं पड़ती या फिर भूमि से पौधे ले लेते हैं। इसके अलावा सब्जियों में संकर किस्मों के प्रयोग व अधिक पैदावार लेने, कार्बनिक खादों के घटते प्रयोग तथा असंतुलित पोषक तत्वों के प्रयोग से भूमि में सूक्ष्म पोषक तत्वों की मात्रा घट रही है जिसका सब्जी उत्पादन पर नकारात्मक प्रभाव पड़ रहा है। कभी–कभी उचित ज्ञान के अभाव में जरूरत से अधिक सूक्ष्म पोषक तत्वों के प्रयोग से या भूमि में इनकी अधिकता होने के कारण इनके आवश्यकता से अधिक मात्रा में पौधों को मिलने से सब्जियों की वृद्धि एवं उपज पर हानिकारक प्रभाव पड़ता है। अतः उत्तम गुणवत्ता वाले उन्नत सब्जी उत्पादन हेतु किसान भाइयों को मुख्य पोषक तत्वों के साथ सूक्ष्म पोषक तत्वों की उपयोगिता व इनके संतुलित प्रयोग के बारे में जानकारी रखना अत्यंत आवश्यक है।

## सूक्ष्म तत्वों की उपलब्धता को प्रभावित करने वाले कारक

वर्तमान समय में विभिन्न प्रकार की भूमियों में किसी न किसी पोषक तत्व की कमी या अधिकता पायी जाती है। भूमि में सूक्ष्म तत्वों की उपलब्धता होते हुये भी ये पौधो को पूर्णरूप से उपलब्ध नहीं हो पाते हैं जिसकी कमी के लक्षण पौधों पर परिलक्षित होने लगते हैं। इसका एक मुख्य कारण भूमि की भौतिक व रासायनिक दशा है जैसे–

1. मिट्टी का बहुत अधिक अपघटन होना,
2. मिट्टी का अधिक रेतीला या बालुवार होना,
3. भूमि का पी.एच. सामान्य से कम या अधिक होना,
4. मृदा में लवणता या क्षारीयता की समस्या
5. भूमि में पैतृक रूप से बहुत कम कार्बनिक पदार्थ होना तथा
6. भूमि में बहुत अधिक कार्बनिक पदार्थों का होना (पीट या माक भूमि)

## मृदा में सूक्ष्म पोषक तत्वों की उपलब्धता को प्रभावित करने वाले कारक

सूक्ष्म पोषक तत्वों की उपलब्धता मृदा के प्रकार, जलवायु एवं वातावरण की भिन्नता के अनुसार कम–ज्यादा हो सकती है यद्यपि मृदा में सूक्ष्म तत्वों की कुल मात्रा अधिक होती हैं। लेकिन फसलों के लिए इसका विशेष महत्व नहीं होता हैं क्योंकि पौधे कुल मात्रा का कुछ अंश ही ले पाते है और अधिकांश मृदा में ही रहता है। मृदा में सूक्ष्म पोषक तत्वों की उपलब्धता को प्रभावित करने वाले मुख्य कारणों में मृदा पी.एच., कैल्शियम कार्बोनेट, कार्बनिक पदार्थ, मृदा संगठन, घुलशील लवण तथा एल्यूमीनियम ऑक्साइड इत्यादि हैं।

**मृदा पी.एच. मान:** सूक्ष्म पोषक तत्वों की उपलब्धता को मृदा पी.एच. सबसे अधिक प्रभावित करता है। मृदा पी.एच. मान बढ़ने पर मोलिब्डेनम को छोड़कर सभी पोषक तत्वों की उपलब्धता कम हो जाती है। इनकी उपलब्धता प्रायः अम्लीय भूमियों में अधिक होती है जबकि मोलिब्डेनम सामान्य व क्षारीय मृदा पी.एच. पर अधिक उपलब्ध होता है।

**कैल्शियम कार्बोनेट:** मृदा पी.एच. के अतिरिक्त चूना (कैल्शियम कार्बोनेट) की अधिकता भी सूक्ष्म पोषक तत्वों की उपलब्धता पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है। चूने वाली मृदाओं में जस्ता, तांबा, लोहा एवं मैंगनीज की उपलब्धता भी घट जाती हैं।

**जैविक पदार्थ :** मृदा में 0.2 से 0.5 प्रतिशत जैविक पदार्थ पाया गया है। जैविक पदार्थ की मात्रा मरूस्थलीय मृदाओं में 0.2 प्रतिशत से भी कम पाई जाती हैं। जैविक पदार्थ सूक्ष्म पोषक तत्वों की प्राप्यता को भी प्रभावित करता है। जैविक पदार्थ की मात्रा बढ़ने पर सूक्ष्म पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ जाती है। जैविक पदार्थो में ये तत्व रह सकते है तथा जैविक पदार्थ प्रयोग करने पर मृदा में इनकी उपलब्धता बढ जाती है।

**अन्य पोषक तत्व :** भूमि में फास्फोरस तत्व की अधिकता का भी जस्ता, तांबा एवं लोहा की उपलब्धता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इसी प्रकार जस्ते की अधिकता तांबा, लोहा एवं मैगनीज की उपलब्धता पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है। संतुलित पोषक तत्वों का उपयोग फसलों के सही पोषण के लिए जरूरी है।

**मृदा के प्रकार :** रेतीली/मरूस्थलीय मृदाओं में काली, चिकनी व दोमट मृदाओं की तुलना में सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी पाई जाती है। मृदाओं के जलमग्न होने पर जस्ते की उपलब्धता कम हो जाती है, जबकि फॉस्फोरस, लोहा व मैंगनीज की मात्रा बढ़ जाती है।

**मृदा तापमान:** मृदा तापमान अत्यधिक कम (ज्यादा सर्दी) होने पर सूक्ष्म पोषक तत्वों की उपलब्धता कम हो जाती है जिसकी कमी पत्तों पर छिड़काव करके दूर की जा सकती है। मृदा में सूक्ष्म पोषक तत्वों की मात्रा क्रान्तिक स्तर से नीचे आते ही पौधों में सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी हो जाती है जिसका पौधों की वृद्धि पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता हैं। तत्व विशेष की कमी के लक्षण पौधों पर विशेष रूप से दिखाई देने लगते हैं जो कि विभिन्न फसलों में अलग–अलग होते हैं। गर्मी में पौधे पीले पड़ जाते हैं, वृद्धि रूक जाती है, फूल कम आते है और उपज घट जाती है।

एक बात ध्यान देने वाली ये है कि सूक्ष्म पोषक तत्वों का प्रयोग तभी करना चाहिए जब उस तत्व विशेष की जरूरत हो या मृदा में कमी हो या तो फिर फसल की माँग विशेष तत्व के लिए अधिक हो, जैसे बोरॉन तत्व शलजम व चुकंदर के लिए। अतः मिट्टी परीक्षण करना अत्यंत आवश्यक है जिससे मिट्टी में पोषक तत्वों की सही उपलब्धता का पता चलता है। इसके अलावा उगाई जाने वाली सब्जी फसल की पोषक तत्वों की माँग एवं भूमि की दशा को ध्यान में रखकर इनकी सही मात्रा का इस्तेमाल किया जा सकता है।

सूक्ष्म पोषक तत्वों की पौधों में उपयोगिता, इनकी कमी के लक्षण व इनके प्रयोग करने की संस्तुति के बारे में विवरण निम्नवत है।

## जिंक

**उपयोगिता:** जिंक पौधों में बहुत से एंजाइम के सफल क्रियान्वयन में भाग लेता है। इसके अलावा ऑक्सिन हार्मोन खासकर इंडोल एसीटिक एसिड के संश्लेषण में अहम भूमिका निभाता है।

जिंक की मात्रा प्याज, पालक व स्वीट कार्न में अधिक, सेम, चुकंदर, खीरा, टमाटर में मध्यम तथा गाजर, मटर व पत्तागोभी में कम होती है।

**कमी की दशा व लक्षण:** जिंक की कमी फास्फोरस की अधिकता में, 7.5 से अधिक पी.एच. मान होने, कार्बनिक पदार्थ की कमी होने की दशा में संभव है।

इसकी कमी के लक्षण से पुरानी पत्तियों पर चित्तीदार धब्बे (मोटलिंग) दिखाई देते हैं। फसल विशेष में इसकी कमी का लक्षण कुछ अलग भी हो सकता है। प्याज की पत्तियों की वृद्धि रुक जाती है और मुड़ जाती है तथा उनमें लंबी पीली धारी पड़ जाती है। मटर में निचली पत्तियों का किनारा झुलस जाता है और फूल कम या नहीं आते। पालक की पत्तियों पर अनियमित चित्रट धब्बा व झुलसा हुआ दाग दिखाई पड़ता है जो बाद में पुरानी पत्तियों की शिराओं की तरफ पहुँच जाता है। पत्तागोभी में पत्तियाँ कप का आकार ले लेती हैं और उनके किनारे बाहर की तरफ मुड़ जाते हैं। फ्रेंच बीन्स जिंक की कमी के प्रति काफी असहिष्णु हैं इसमें पत्तियों के निकलते ही पीलापन दिखाई देने लगता है जो कि पत्तियों की शिराओं के बीच ऊपरी शिरा से किनारे की तरफ फैलता है साथ ही नन्ही कलियाँ झड़ने लगती हैं।

**निवारण:** जिंक की कमी की पूर्ति के लिए प्रति हेक्टेयर क्षेत्र हेतु 2.5–10 कि.ग्रा. जिंक या 0.5 से 1.0 कि.ग्रा. जिंक चिलेट जुताई द्वारा मिट्टी में मिला देना चाहिए। पर्णीय छिड़काव हेतु 0.5 से लेकर 1.0 प्रतिशत तक जिंक सल्फेट 2 से 3 बार कर सकते हैं।

## बोरॉन

**उपयोगिता:** बोरॉन एवं कार्बोहाइड्रेट के उपपाचयन, प्रोटीन संश्लेषण, कोशिकाभित्ति निर्माण तथा परागकणों के प्रस्फुटन व परागनलिका के विकास के लिए आवश्यक होता है। इसकी मात्रा फूलगोभी, पत्तागोभी, ब्रोकोली, शलजम, चुकंदर में अधिक (0.2 कि.ग्रा./प्रति हेक्टेयर से अधिक), गाजर, प्याज, पालक, मूली, टमाटर, खरबूजा के लिए मध्यम (1 से 2 कि.ग्रा./प्रति हेक्टेयर), तथा खीरा, सेम, मटर, मिर्च व आलू के लिए कम (1.0 कि.ग्रा./प्रति हेक्टेयर से कम) होती है।

खीरे में बोरॉन तत्व की कमी के लक्षण

**कमी की दशा व लक्षण:** बोरॉन की उपलब्धता कम कार्बनिक पदार्थों वाली बालुआर, 7.5 पी.एच. से अधिक भूमिओं में कम होती है।

सामान्यतः बोरॉन की कमी से नव विकसित ऊतकों का क्षय तथा उसके अंतिम छोर छोटे या झाड़ीनुमा (रोस्सेटिंग) हो जाते हैं। तनों का खोखलापन, उनका फटना व अंदर भूरा या काला क्षेत्र बनना आदि बोरॉन की कमी के मुख्य लक्षण हैं। गोभीवर्गीय सब्जियाँ बोरॉन की कमी के प्रति काफी संवेदनशील हैं जिनमें बोरॉन की कमी से तना खोखला पड़ जाता है, फूलगोभी में तो शीर्ष भी भूरा पड़ जाता है। गाजर के पर्णवृन्त में कार्क की तरह दरारें पड़ जाती हैं, जड़ों के मध्य में भी दरारें पड़ जाती हैं जो बाद में खोखली हो जाती है, जड़ों की बाहरी त्वचा की चमक फीकी पड़ जाती है। पालक की नयी पत्तियाँ ठूंठदार एवं झुलसी हुई प्रतीत होती हैं, जबकि पुरानी पत्तियाँ ऊपरी सिरे से धीरे–धीरे सूखने लगती हैं। प्याज की पत्तियों में लम्बवत महीन दरारें पड़ जाती हैं। चुकंदर की जड़ों में कहीं–कहीं खुरदरा काला धब्बा (कैंकर) दिखाई पड़ता है। खीरे की पत्तियों में बोरॉन की कमी का लक्षण मोजैक रोग के लक्षण के अनुरूप दिखाई पड़ता है। पॉलीहाउस खीरे (टमाटर में भी) में पुष्पन के समय बोरॉन की कमी से फूलों में परागण एवं निषेचन प्रभावित होता है तथा फल अच्छी तरह से विकसित नहीं होते हैं। टमाटर की पुरानी पत्तियों की पर्णिकाओं में शिराओं के मध्य पीलापन व बाद में शिराएँ पीली व नारंगी हो जाती हैं तथा पत्तियाँ व तने टूटने के प्रति संवेदनशील हो जाते हैं। मूली में जड़ों की मोटाई वाले गूदों में भूरापन लिए क्षेत्र विकसित होता है जिसका पहला लक्षण जड़ के ऊपर गहरे धब्बे के रूप में दिखाई देता है।

**निवारण:** बोरॉन की कमी की दशा में 0.5 से 3.5 कि.ग्रा./प्रति हेक्टेयर तक बोरॉन मिट्टी मे जुताई द्वारा मिलना चाहिए। 0.2 प्रतिशत बोरैक्स या बोरिक अम्ल का पुष्पन से पूर्व पर्णीय छिडकाव हितकर पाया गया है। पॉलीहाउस खीरे में 0.5 से 1.0 प्रतिशत बोरैक्स का छिडकाव फ्रूट अबॉरशन को कम करता है। लौकी में 25 पी.पी.एम. बोरिक अम्ल 0.5 से 1.0 प्रतिशत यूरिया के घोल का 2 से 3 छिड़काव फल उत्पादन बढ़ाने मे सहायक पाया गया है।

## लोहा

**उपयोगिता:** लोहा पौधों की पत्तियों में पर्णहरित के निर्माण के लिए अत्यंत आवश्यक है। इसके अलावा यह प्रोटीन संश्लेषण व नत्रजन स्थिरीकरण के लिए भी आवश्यक है। लोहा तत्व की मांग पालक, टमाटर, सेम, चुकंदर, फूलगोभी, ब्रोकोली व फ्रेंच बीन्स में अधिक तथा पत्तागोभी में मध्यम होती है।

**कमी की दशा व लक्षण:** लोहा तत्व की कमी अक्सर 7 से अधिक पी.एच. वाली, कंकरीली भूमि तथा लंबे समय तक ठंडे व आर्द्र मौसम में पायी जाती है।

लौह तत्व की कमी से टमाटर एवं आलू में नयी पत्तियों की शिराएं तो हरी रहती हैं जबकि उनके मध्य का भाग पीला पड़ जाता है। गोभी वर्गीय सब्जियों में लक्षण मैगनीज की कमी के लक्षण से मेल खाते हैं। चुकंदर में नयी पत्तियाँ पीली या सफेद पड़ जाती हैं परंतु पुरानी पत्ती सामान्य दिखती हैं। मटर में पर्ण तन्तु पीले पड़ जाते हैं जबकि पत्तियाँ हरी बनी रहती हैं।

**निवारण:** लोहा की कमी होने पर प्रति हेक्टेयर 50 से 100 कि.ग्रा. फेरस सल्फेट या 500 से 1000 कि.ग्रा. पाइराइट जुताई करके भूमि में अच्छी तरह से मिला देते हैं। खड़ी फसल में 0.5 से 2 प्रतिशत फेरस सल्फेट के घोल का 2–3 या लोहा–चिलेट के 0.02 से 0.05 घोल का 3 से 4 छिड़काव इसकी कमी को पूरा करता है।

## ताँबा

**उपयोगिता:** ताँबा पौधों के विकास व कई इंजाइम के सुचारु रूप से कार्य करने में मदद करता है। इसकी कमी में प्रोटीन संश्लेषण बाधित होता है। तांबे की मात्रा प्याज, पालक व चुकंदर में अधिक, गाजर, खीरा, टमाटर, शलजम, मूली और गोभीवर्गीय सब्जियों में मध्यम तथा सेम, मटर व फ्रेंच बीन्स में कम होती है।

**कमी की दशा व लक्षण:** इसकी उपलब्धता अनुपजाऊ व कंकरीली भूमि में कम होती है।

ताँबे की कमी से अधिकतर पौधों में ताजगी में कमी अर्थात मुर्झायापन प्रतीत होता है। पत्तियों में अंतिम छोर से

पहले नीले–हरे रंग की आभा विकसित होती है जो बाद में पीली पड़कर सूख जाती है। ताँबे की कमी से गाजर की नयी पत्तियाँ गहरी हरी हो जाती हैं और वे खुलने में असमर्थ होती हैं। गाजर के जड़ों व प्याज के कंदों का रंग अच्छी तरह से विकसित नहीं हो पाता, साथ ही प्याज–कंद के बाहर की परते पीली व पतली हो जाती हैं। पालक की नयी पत्तियों के किनारे धूँधले– हरे हो जाते हैं जो आगे चलकर मुरझाकर पीछे की ओर मुड़ जाते हैं।

**निवारण:** ताँबे की कमी को दूर करने के लिए 5 से लेकर 10 कि.ग्रा./हेक्टेयर ताँबा खेत में जुताई के साथ देना चाहिए। खड़ी फसल पर कॉपर सल्फेट के 0.1 से 0.2 प्रतिशत घोल का पर्णीय छिडकाव ताँबे की कमी को दूर करता है।

## मैंगनीज

**उपयोगिता:** मैंगनीज भी कई सारे इंजाईम क्रियाओं में भाग लेता है जोकि ए.टी.पी. ऊर्जा में आवश्यक होते हैं। यह प्रकाश संश्लेषण के परमाणु परिवहन शृंखला में अत्यंत आवश्यक होता है। मैंगनीज की आवश्यकता प्याज, पालक व सेम को अधिक, गाजर, खीरा, मटर, टमाटर, चुकंदर, आलू तथा गोभीवर्गीय सब्जियों में मध्यम होती है।

**कमी की दशा व लक्षण:** इसकी कमी की दशाएँ व कारक लौह तत्व के ही समान हैं।

मैंगनीज की कमी से पत्तियाँ पीली या जैतूनी हरी दिखाई पड़ने लगती हैं। इसकी कमी के लक्षण लोहे की कमी के लक्षण से काफी मिलते–जुलते हैं, परंतु लोहे की कमी के लक्षण नई पत्तियों पर आते हैं। प्याज में मैंगनीज की कमी से पहले बाहरी पत्तियों पर धारीदार धब्बा जोकि बाद में सड़ने लगता है। पौधे का विकास रुक जाता है। गाजर में खेत में तो कहीं–कहीं एक छोटे भाग में एक समान रूप से सारे पौधों की पत्तियाँ पीली या हल्की हरी हो जाती है। टमाटर में मध्य एवं पुरानी पत्तियों की शिराओं के मध्य महीन पतला पीला क्षेत्र बन जाता है जोकि लौह तत्व की कमी से थोड़ा कम परंतु नई पत्तियों पर नहीं पाया जाता है। चुकंदर में इसकी कमी में पत्तियों की शिराओं के मध्य छींटदार पीला धब्बा बन जाता है। पत्तियाँ त्रिकोणीय हो जाती हैं तथा उनका बाहरी किनारा लहरदार हो जाता है।

**निवारण:** मैंगनीज की कमी की दशा में 10 से 25 कि.ग्रा./प्रति हेक्टेयर तक मैंगनीज भूमि डाल सकते हैं, परंतु साधारणतया इसकी भूमि में सीधे प्रयोग की संस्तुति नहीं की जाती। खड़ी फसल पर्णीय छिडकाव हेतु मैंगनीज चिलेट 125 से 300 ग्राम/प्रति हेक्टेयर या मैंगनीज सल्फेट 0.5 से 1.0 प्रतिशत का घोल का इस्तेमाल करना चाहिए।

## मोलिब्डेनम

**उपयोगिता:** मोलिब्डेनम नाइट्रेट रीडक्टेज, जोकि नत्रजन स्थिरीकरण व नत्रजन का अपचयन करता है, का एक अभिन्न अंग है। इसकी कमी से नत्रजन की कमी परिलक्षित होती है। इसकी आवश्यकता पौधों में बहुत कम होती है। इसकी आवश्यकता प्याज, पालक, फूलगोभी, ब्रोकोली तथा चुकंदर को अधिक, सेम, मटर, टमाटर, मूली, शलजम व पत्तागोभी को मध्यम, जबकि गाजर, खीरा, आलू को कम मात्र में होती है।

**कमी की दशा व लक्षण:** मोलिब्डेनम की कमी समान्यतः अम्लीय भूमि जिसका पी.एच. 5.5 या इससे कम में होती है।

मोलिब्डेनम की कमी से प्याज में नए पौधों का धीमा विकास होता है और पौधे मर जाते हैं। पुरानी पत्तियों का ऊपरी शिरा सूख जाता है तथा सूखा भाग तथा स्वस्थ ऊतकों के बीच एक मुरझान क्षेत्र बन जाता है। चुकंदर में पत्तियाँ पतली होकर सूख जाती हैं जोकि एक समूह में सूखी हुई दिखाई देती हैं। फूलगोभी एवं ब्रोकोली में कमी से प्रभावित पत्तियाँ चाबुक की तरह (व्हिपटेल) पतली हो जाती हैं।

**निवारण:** भूमि में प्रयोग करने हेतु प्रति हेक्टेयर 100 ग्राम से लेकर 1.0 कि.ग्रा., बीज शोधन हेतु 15 ग्राम तथा पर्णीय छिडकाव हेतु 0.07 से 0.1 प्रतिशत का सोडियम या अमोनियम मोलिब्डेट पर्याप्त होता है।

## सूक्ष्म तत्वों के प्रयोग में सावधानियाँ

सूक्ष्म पोषक तत्वों के प्रयोग में भरपूर लाभ उठाने तथा फसलों की अधिक उपज के लिए निम्नलिखित बातों पर ध्यान देना चाहिए–

1. सूक्ष्म तत्वों का प्रयोग हमेशा मिट्टी की जाँच के आधार पर ही करना चाहिए।
2. सूक्ष्म पोषक तत्वों का प्रयोग वैज्ञानिकों की सलाह पर ही करें।
3. हमारी भूमि में सभी सूक्ष्म तत्वों की इतनी कमी नहीं है इसलिए तत्वों के मिश्रण के प्रयोग में विशेष सावधानी रखें तथा जिस किसी तत्व विशेष की कमी हो उसी की ही पूर्ति के लिए उर्वरक प्रयोग करें।
4. एक बार प्रयोग किया गया जिंक सल्फेट दो फसलों के लिए पर्याप्त होता है क्योंकि इसका प्रभाव अगली फसल तक रहता हैं।

5. जस्ते का प्रयोग भूमि में बिजाई कर करें अन्य सूक्ष्म तत्वों का पत्तियों पर छिड़काव करें।

6. पत्तों पर छिड़काव के लिए पानी की सिफारिश की गई पूरी मात्रा प्रयोग करें।

7. घोल में उर्वरक की सिफारिश की गई मात्रा का प्रयोग करें। उर्वरक की अधिक मात्रा का प्रयोग करने पर लाभ की बजाया हानि हो सकती है।

8. पर्णीय छिड़काव में यदि सूक्ष्म पोषक तत्व का सल्फेट घोल का उपयोग किया जा रहा हैं तो उसमें सूक्ष्म पोषक तत्व की मात्रा से आधी मात्रा के बराबर चूने के घोल का उपयोग करना चाहिए। इससे पौधों पर सल्फेट का हानिकारक प्रभाव से बचाया जा सकता है।

# सब्जी उत्पादनः उन्नत सिंचाई एवं जल प्रबंधन

रंजय कुमार सिंह
केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर

भारतीय गर्म शुष्क क्षेत्र में राजस्थान के पश्चिमी भाग (19.6 मिलियन हेक्टेयर, 69 प्रतिशत), उत्तर पश्चिमी गुजरात (6.22 मिलियन हेक्टेयर, 21 प्रतिशत) और हरियाणा और पंजाब के दक्षिण पश्चिमी भाग (2.75 मिलियन हेक्टेयर, 10 प्रतिशत) शामिल हैं। गर्म शुष्क क्षेत्र को बहुतायत क्षेत्र राजस्थान के उत्तरी पश्चिमी भाग के अंतर्गत आता है। गर्मियों के दौरान उच्च तापमान, कम वर्षा, कम सापेक्ष आर्द्रता, उच्च क्षमता वाष्पीकरण, तेज धूप, प्रचुर मात्रा में सौर ऊर्जा, विरल वनस्पति और उच्च हवा की गति इस क्षेत्र की विशेषताएँ हैं। गर्मियों में दिन का तापमान 40–43 डिग्री सेंटीग्रेड तक रहता है जोकि कभी–कभी 48 डिग्री सेंटीग्रेड से ऊपर भी पहुँच जाता है। राजस्थान राज्य की समग्र औसत वार्षिक वर्षा 531 मि.ली. है, जबकि राजस्थान के पश्चिमी भागों के लिए 318 मि.मी. है। वाष्पोत्सर्जन प्रति वर्ष 1500 से 2000 मि.मी. के बीच होता है। मानसून की अवधि सामान्यतया 1 जुलाई से 15 सितंबर तक होती है। इस क्षेत्र में मुख्यतः टिब्बा एवं अंर्त–टिब्बा युक्त रेतीली भूमि पायी जाती है, जिसकी मृदा, अल्प जल धारण क्षमता वाली और कम उपजाऊ है। ऐसी मिट्टी में जैविक कार्बन बहुत कम, उपलब्ध फास्फोरस कम से मध्यम और उपलब्ध पोटेशियम उच्च मात्रा में होती है।

## शुष्क क्षेत्र की सब्जियाँ एवं जल प्रबंधन

शुष्क क्षेत्र की सब्जियों में सामान्यतः खरबूज, तरबूज, ककड़ी, खीरा, टिंडा, लौकी, काचरी, खेजरी, ग्वार इत्यादि उगाए जाते हैं। शुष्क और अर्द्ध–शुष्क क्षेत्रों में मौजूदा खेती प्रणाली में वास्तविक जल उपयोग दक्षता बहुत कम है। अनियमित और अल्प वर्षा के कारण शुष्क क्षेत्रों में पानी के प्रति यूनिट जैविक और आर्थिक उपज बढ़ाने की जरूरत है। शुष्क भूमि क्षेत्रों में, सब्जी उत्पादन बढ़ाने के लिए, वैसी सिंचाई प्रणाली की आवश्यकता है, जिसमें जल की खपत कम हो और प्रति यूनिट उपज ज्यादा हो। संरक्षित जल एवं सिंचाई जल प्रबंधन शुष्क क्षेत्रों के लिए अपनायी जाने वाली रणनीतियों में से एक है।

सब्जी उत्पादन में पोषक तत्वों एवं जल का बहुत योगदान है। सब्जियों का 90 प्रतिशत या इससे अधिक भाग जल से बना होता है। पानी पोषक तत्वों के लिए विलय का काम करता है और पानी के माध्यम से ही पोषक तत्व पूरे पौधे में पहुंचता है। थोड़े अंतराल के लिए ही पानी की कमी, विशेषकर क्रांतिक अवस्था में, उत्पादन के साथ–साथ सब्जियों की गुणवत्ता पर भी बुरा प्रभाव डालती है। सब्जियों में विकास के समय, फूल आने एवं फल वृद्धि के समय पानी की कमी होने पर सब्जियों में सबसे ज्यादा हानि होती है।

प्रक्षेत्र स्तर पर उपलब्ध जल का कुशल उपयोग जल उपयोग दक्षता में वृद्धि, बेहतर सिंचाई आवेदन दक्षता, सिंचाई वितरण क्षमता में वृद्धि और संरक्षण की नई प्रौद्योगिकियों के माध्यम से किया जा सकता है। पानी के कुशल उपयोग के अन्य साधनों में उपयुक्त कुशल सिंचाई पद्धति का चुनाव, खेतों में विभिन्न स्रोतों से पानी के संयुक्त उपयोग पर आधारित सिंचाई का इष्टतम निर्धारण, सस्य विज्ञान पद्धतियों में सुधार शामिल हैं।

## सब्जियों में पानी के अधिकतम उपयोग के उन्नत सिंचाई तकनीक

### स्प्रिंकलर या फव्वारा सिंचाई

फव्वारा विधि से सिंचाई सब्जियों की पौधशाला के लिए बहुत लाभकारी होती है। छिड़काव द्वारा पानी में घुलनशील उर्वरकों, कीटनाशकों, फफूंदनाशकों एवं खरपतवारनाशी इत्यादि का भी प्रयोग किया जा सकता है। अगर सिंचाई करने के समय हवा की गति तेज हो तो इस विधि का प्रयोग उस समय नहीं करना चाहिए।

### ड्रिप (टपक या बूंद–बूंद) सिंचाई

ड्रिप सिंचाई के द्वारा पानी की अच्छी–खासी बचत की जा सकती है। ड्रिप सिंचाई से जल की उपयोग दक्षता 85–90 प्रतिशत होती है जो सतही अथवा स्प्रिंकलर पद्धति की तुलना में काफी अधिक है। ड्रिप सिंचाई में ड्रिपर द्वारा पानी बूंद–बूंद के रूप में पौधों की जड़ों में दिया जाता है। इस पद्धति के उपयोग से पारम्परिक सतही सिंचाई की तुलना में जल का औसतन 40 से 50 प्रतिशत बचत की जा सकती है, वहीं उत्पादन में 20 से 25 प्रतिशत तक की वृद्धि की जा सकती है। छोटे स्तर पर घड़ा सिंचाई प्रणाली का प्रयोग भी किया जा सकता है। ड्रिप सिंचाई के साथ फर्टिगेशन द्वारा उर्वरकों,

पोषक तत्वों एवं विभिन्न प्रकार की दवाओं का भी उपयोग किया जा सकता है। यह प्रणाली खरपतवार नियंत्रण में भी सहयोग करता है। ड्रिप प्रणाली ऊबड़–खाबड़ एवं क्षारीय जमीन में भी उपयोगी है और इससे अगेती फसल की भी प्राप्ति होती है। रासायनिक खाद, मजदूरी एवं अन्य खर्चों में कटौती के साथ–साथ इस प्रणाली को अपनाने से समय की भी बचत होती है।

सब्जी उत्पादन में ड्रिप सिंचाई प्रणाली

## ग्रेविटी (गुरुत्वाकर्षण) विधि

यह एक छोटे आकार की फसल क्षेत्र के लिए पानी उपलब्ध कराने के लिए सस्ता प्रभावी तरीका है जिसमें पौधों को पानी गुरुत्वाकर्षण विधि के द्वारा दिया जाता है। एक पर्याप्त स्तर पर दबाव उपलब्ध कराने के लिए खेत को यथासंभव समतल तैयार किया जाना चाहिए।

## जैविक विधियाँ

कृषि योग्य भूमि से भूमि एवं जल संरक्षण की शस्य वैज्ञानिक विधियाँ अपनाकर खेत से बहकर जाने वाले जल को खेत में ही संरक्षित करके अधिक पैदावार प्राप्त की जा सकती है। इन विधियों को अपनाने के लिए अलग से धन की आवश्यकता नहीं होती है। ये विधियाँ ढलान की लंबाई को कम करके वर्षा के पानी के बहने की गति को धीमा करती है तथा वर्षा के पानी की बूँदों की प्रहारक क्षमता को कम करके पानी पौधों की पत्तियों, शाखाओं व तनों पर धारण कराकर उसे धीरे–धीरे सोखने में मदद करती है। ये विधियाँ 5 प्रतिशत वाली भूमि के लिए उपयोगी रहती हैं।

## सतही पलवार (मल्च)

शुष्क क्षेत्रों में उच्च तापमान के द्वारा तीव्र वाष्पीकरण होता है जिससे मृदा में व्याप्त नमी का तेजी से ह्रास होता है व पौधे नमी के अभाव में सूखने लगते हैं। अतः संचित नमी को बचाए रखने के लिए खेत से निकाले गए खरपतवार व अन्य घास–फूस से सतह पर की गयी पलवार मृदा नमी को बचाने में काफी सहायक होती है। सतही पलवार से भूमि के तापमान में कमी आती है, फलस्वरूप जल वाष्पन कम हो जाता है। सतही पलवार के रूप में उपलब्धता के आधार पर फसलों के अवशिष्ट अंश, पत्तियाँ, सूखी घास, लकड़ी का बुरादा या पॉलिथीन की चादरें काम में ली जा सकती हैं।

सब्जी उत्पादन में मल्चिंग का उपयोग

## ऊंची उठी क्यारियाँ

इस विधि में सब्जियों को ऊंची उठी हुई क्यारियों जोकि सामान्यतया 75–100 से.मी. चौड़ी होती हैं, दोनों किनारों पर लगाया जाता है और पानी क्यारी के दोनों तरफ कूँड़ या नालियों के माध्यम से दिया जाता है। इस विधि से सिंचाई करने से जल बचत लगभग 25–30 प्रतिशत होती है। इस विधि के दूसरे फायदों में जल भराव की समस्या भी नहीं होती। सब्जी उत्पादन में, समतल क्यारियों की अपेक्षा 15–20 प्रतिशत की बदोतरी होती है। क्यारियों में लगाई सब्जियों में यदि पलवार का भी प्रयोग किया जाए तो 50 प्रतिशत पानी की बचत के साथ उत्पादन एवं गुणवत्ता में भी आशातीत वृद्धि होती है।

## जल भंडारण संरचनाएं

जल भंडारण संरचनाएं, शुष्क क्षेत्रों में वर्षा जल संचयन (एक्स–सीटू) के द्वारा पानी की उपलब्धता को बढ़ाने के लिए एक आशाजनक तकनीक है। इस तकनीक में दूर हुई बारिश को अपवाह द्वारा क्षेत्र में लाने के बाद में उपयोग के लिए सतह भंडारण का संग्रह शामिल है। वर्षा जल संग्रहण का यह प्रकार फसल के मौसम के शुष्क अवधि के दौरान पूरक या रक्षात्मक सिंचाई प्रदान करता है।

## भूमि समतलीकरण

असमतल भूमि में वर्षाजल का वितरण कहीं आवश्यकता से अधिक तो कहीं पर बहुत कम होता है। ये दोनों ही

स्थितियाँ फसल उत्पादन के लिए प्रतिकूल है। खेत के समतलीकारण के द्वारा वर्षाजल वितरण की इस असमानता को दूर किया जा सकता है। समतल सतह से जल का बहाव कम होने के कारण वर्षाजल भूमि में अधिक मात्रा में रिसता है और नमी गहराई तक बनी रहती है।

नीचे के भागों में शुष्क एवं अर्द्ध–शुष्क क्षेत्रों में उगाई जानी वाली सब्जियों के सिंचाई प्रबंधन पर चर्चा की गयी है। पौधे को उचित समय पर उचित मात्रा में सिंचाई करने से न सिर्फ अमूल्य जल की बचत होती है, अपितु सब्जियों के उत्पादन एवं उनकी गुणवत्ता में भी सुधार आता है।

## टमाटर

टमाटर में गर्मियों में 6–8 दिनों एवं सर्दियों में 10–15 दिन के अंतराल पर सिंचाई की आवश्यकता होती है। यह ध्यान देने की बात है कि खेत में अधिक पानी न लगने पाये अन्यथा पौधों में विल्टिंग होने की संभावना बढ़ जाती है।

## खीरा

गर्मी की फसल को 5 दिन एवं सर्दियों की फसल को 10–15 दिनों पर पानी देना चाहिए। फूल आने के समय एवं फल वृद्धि के समय पानी की कमी नहीं होनी चाहिए। बरसात वाली फसल के लिए सिंचाई की विशेष आवश्यकता नहीं होती।

## मिर्च

मिर्च में पौध रोपण के तुरंत बाद एक हल्की सिंचाई करना अति आवश्यक है। गर्मी के महीनों मे सिंचाई एक सप्ताह के अंतराल पर एवं बारिश के मौसम में आवश्यकतानुसार (10–15) दिनों के अंतराल पर करना अनुशंसित है। खेत में वर्षा जल निकासी का समुचित प्रबंध होना चाहिए नहीं तो पौधे रोग से मर जाते हैं।

## गाजर

बुआई के समय मिट्टी में नमी कम होने की स्थिति में एक हल्की सिंचाई आवश्यक है। बाद में गाजर में गरम मौसम में सिंचाई सप्ताह में एक बार और जाड़े के समय में 10–12 दिनों में एक बार करते हैं। इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि मिट्टी सख्त न होने पाये नहीं तो गाजर की जड़ों का समुचित विकास नहीं हो पाता। यह सब्जी रसीली और गूदेदार होने के कारण पानी के प्रति काफी संवेदनशील होती है।

## लौकी तथा तोरी

गर्मियों में 4–5 दिन के अंतराल पर सिंचाई करना लाभदायक होता है और सर्दियों में आवश्यकतानुसार सिंचाई करनी पड़ती है।

# गृह वाटिका में सब्जी बागवानी

**सोमा श्रीवास्तव एवं प्रदीप कुमार**
केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर

दैनिक आहार में फल एवं सब्जियाँ संतुलित पोषण को बनाए रखने में अपना महत्वपूर्ण योगदान देती हैं क्योंकि विटामिन, खनिज लवण, खाद्य रेशा के साथ–साथ कुछ सब्जियाँ स्टार्च व शर्करा की भी अच्छी स्रोत होती हैं। पोषाहार विशेषज्ञों के अनुसार संतुलित भोजन के लिए एक वयस्क व्यक्ति को प्रतिदिन लगभग 300 ग्राम सब्जियाँ जिसमें लगभग 125 ग्राम हरी पत्तेदार, 100 ग्राम जड़ वाली तथा 75 ग्राम अन्य प्रकार की सब्जियों का सेवन करना चाहिए।

बाजार में सब्जियों के दाम में काफी उतार–चढ़ाव होता रहता है तथा बाजार में उपलब्ध सब्जियाँ एक (पास के स्थानों से) या दो–तीन (दूरस्थ स्थानों से) दिन पहले खेत से काटकर लाई गयी होने के कारण अपेक्षाकृत बासी हो जाती हैं। इसके अलावा इन पर अच्छी चमक बनाए रखने हेतु कभी–कभी रसायनों का भी प्रयोग किया जाता है जिससे इनकी गुणवत्ता भी खराब हो सकती है। सब्जियों की नियमित उपलब्धता बनाए रखने के साथ–साथ स्वयं के द्वारा तैयार सब्जियों में अच्छी गुणवत्ता सुनिश्चित करने हेतु घर के पिछवाड़े की जमीन पर खेती एक उत्तम विकल्प के अलावा बहुत लाभदायक उपाय है।

## घर में सब्जी बगीचा को प्रेरित करने वाले कारक

1. घर के आस–पास पड़ी भूमि का समुचित उपयोग।
2. उपलब्ध स्वच्छ जल के साथ रसोई घर व स्नान घर से निकले पानी तथा कूड़ा–करकट का सही उपयोग तथा इनके निष्पादन और उससे होनेवाले प्रदूषण से भी मुक्ति।
3. परिवार के सदस्यों का मनोरंजन व व्यायाम का अच्छा साधन एवं इससे शरीर का स्वस्थ रहना।
4. सीमित क्षेत्र से आवश्यकता की पूर्ति के अलावा मनपसंद सब्जी की प्राप्ति तथा पारिवारिक व्यय में बचत।
5. स्वयं द्वारा सब्जी उत्पादन करने से इसमें रासायनिक पदार्थों का सीमित या नगण्य उपयोग।
6. सब्जी खरीदने के लिया अन्यत्र जाने की जरूरत नहीं।

## सब्जी बगीचा के लिए स्थान का चुनाव

सब्जी बगीचा के लिए घर का पिछवाड़ा ही होता है जिसे हम लोग बाड़ी भी कहते हैं। यह सुविधाजनक स्थान होता है क्योंकि परिवार के सदस्य खाली समय में साग–सब्जियों पर ध्यान दे सकते हैं तथा रसोईघर व स्नानघर से निकले पानी से आसानी से सब्जी की क्यारी की सिंचाई की जा सकती है। सब्जी बगीचा का आकार भूमि की उपलब्धता और व्यक्तियों की संख्या पर निर्भर करता है।

## ध्यान रखने योग्य बातें

सब्जी बगीचा के एक किनारे पर खाद का एक गडढा बनायें जिससे घर का कचरा, पौधो का अवशेष आदि, डाला जा सके जिसका बाद मे सड़कर खाद के रूप में प्रयोग किया जा सके।

- बगीचे की सुरक्षा हेतु कंटीले झाड़ी व तार से बाड़ लगाएँ, जिस पर बेल वाली सब्जियों को लगायें।
- क्यारिओं के बीच में आने–जाने के लिए छोटे–छोटे रास्ते बनाएँ ।
- रोपाई की जाने वाली सब्जियों के लिए बगीचे के एक साइड में छोटी पौधशाला बनाएँ ।
- छोटी–छोटी लगभग 12 क्यारियाँ बनाएँ तथा सिंचाई हेतु उन्हें नालियों से जोड़ें।
- फलदार वृक्षों को उत्तर–पश्चिम दिशा की ओर किनारे पर लगाएँ।
- फूलो को गमलों में लगाएँ तथा उन्हें रास्ते के साइड में रखें।
- जड़ वाली सब्जियों को क्यारियों की मेड़ों पर उगायें।
- समय–समय पर क्यारिओं की निराई–गुड़ाई करते रहें तथा खरपतवार निकालते रहें।
- सिंचाई हमेशा सुबह या फिर शाम के समय ही करें।
- कार्बनिक खादों व कीटनाशक एवं रोगाणुनाशक का अधिक जबकि रसायनों का प्रयोग कम या बिल्कुल न करें।

## खेत व क्यारियाँ तैयार करना

सर्वप्रथम 30–40 से.मी. की गहराई तक कुदाली या हल की सहायता से जुताई करें। खेत से पत्थर, झाड़ियों एवं बेकार के खरपतवार को हटा दें। खेत में अच्छे ढंग से निर्मित 100 कि.ग्रा. कृमि या केंचुए की खाद चारों ओर फैला दें। आवश्यकता के अनुसार 45 से.मी. या 60 से.मी. की दूरी पर मेड़ या क्यारी बनाएँ।

गृह वाटिका की क्यारी में खडी धनिया की फसल

## सब्जी बीज की बुआई और पौधरोपण

सीधे बुआई की जानेवाली सब्जी जैसे–भिंडी, पालक एवं लोबिया आदि की बुआई मेड़ या क्यारी बनाकर की जा सकती है। दो पौधों के बीच की दूरी 30 से 45 से.मी. रखनी चाहिए। प्याज, पुदीना एवं धनिया को खेत के मेड़ पर उगाया जा सकता है। प्रतिरोपित फसल, जैसे–टमाटर, बैंगन और मिर्ची आदि को एक महीना पूर्व में नर्सरी बेड या टूटे मटके में उगाया जा सकता है। बुआई के बाद मिट्टी से ढ़ककर उसके ऊपर सब्जी बगीचा का मुख्य उद्देश्य अधिकतम लाभ प्राप्त करना है तथा वर्षभर घरेलू साग–सब्जी की आवश्यकता की पूर्ति करना है।

बगीचा के एक छोर पर बारहमासी पौधों को उगाया जाना चाहिए जिससे इनकी छाया अन्य फसलों पर न पड़े तथा अन्य साग–सब्जी फसलों को पोषण दे सकें। बगीचा के चारों ओर तथा आने–जाने के रास्ते का उपयोग विभिन्न अल्पावधि की हरी साग–सब्जी जैसे– धनिया, पालक, मेथी, पुदीना आदि उगाने के लिए किया जा सकता है।

## फसल चक्र

खरीफ, रबी और जायद की फसलें तालिका में बतलाए, फसलचक्र के अनुसार बनाई गयी क्यारिओं में लेना चाहिए–

| क्यारी संख्या | खरीफ | रबी | जायद |
|---|---|---|---|
| 1. | टमाटर | मेथी | खीरा |
| 2. | मिर्ची | पालक | ग्वार |
| 3. | खीरा | टमाटर | भिंडी |
| 4. | भिंडी | प्याज | मूली |
| 5. | लोबिया | बैंगन | लौकी |
| 6. | लौकी | गाजर | खरबूजा |
| 7. | अरबी | लहसुन | तरबूज |
| 8. | करेला | धनिया | टिंडा |
| 9. | ग्वार | गोभी | करेला |
| 10. | कद्दू | चुकंदर | बैंगन |
| 11. | टिंडा | पत्तागोभी | लोबिया |
| 12. | मूली | मटर | ककड़ी |

बुआई के समय भी चीटियों से बचाव के लिए 50 ग्राम नीम के फली का पाउडर बनाकर छिड़काव करना चाहिए। टमाटर, गोभी, बैगन, मिर्ची, प्याज, आदि की पहले छोटी क्यारिओं में पौध तैयार कर लेनी चाहिए। टमाटर, गोभी, बैगन,

मिर्ची की पौध बुआई के 25–30 दिनों बाद तथा प्याज की पौध 40–45 दिनों में रोपाई योग्य तैयार होती है। टमाटर, बैंगन और मिर्ची को 30–45 से.मी. की दूरी पर मेड़ या उससे सटाकर रोपाई की जाती है। प्याज के लिए मेड़ के दोनों ओर रोपाई की जाती है। रोपण के बाद पौधों की सिंचाई की जाती है। प्रारंभिक अवस्था में इस प्रतिरोपण को लगभग रोज पानी देने वाले हजारे से पानी दिया जाए तथा बाद में 5–6 दिनों के बाद पानी दे सकते हैं।

सब्जी बगीचा का मुख्य उद्देश्य अधिकतम लाभ प्राप्त करना है तथा वर्षभर घरेलू साग–सब्जी की आवश्यकता की पूर्ति करना है।

## बारहमासी पौधे

सहजन की फली, केला, पपीता, कढ़ी पत्ता उपरोक्त फसल व्यवस्था से यह पता चलता है कि वर्ष भर बिना अंतराल के प्रत्येक खेत में कोई न कोई फसल अवश्य उगाई जा सकती है। साथ ही, कुछ क्यारियों में एक साथ दो फसलें (एक लम्बी अवधि वाली और दूसरी कम अवधि वाली) भी उगाई जा सकती है।

## सब्जी बगीचा निर्माण के आर्थिक लाभ

व्यक्ति पहले अपने परिवार का पोषण करता है उसके बाद बेचता है। आवश्यकता से अधिक होने पर उत्पाद को बाजार में बेच देता है या उसके बदले दूसरी सामग्री प्राप्त कर लेता है। कुछ मामले में घरेलू बगीचा आय सृजन का प्राथमिक उद्देश्य बन सकता है। अन्य मामले में, यह आय सृजन उद्देश्य के बजाय पारिवारिक सदस्यों के पोषण लक्ष्य को पूरी करने में मदद करता है। इस तरह, यह आय सृजन और पोषाहार का दोहरा लाभ प्रदान करता है

# तुड़ाई उपरान्त सब्जियों का प्रबंधन

पी.आर. मेघवाल एवं प्रदीप कुमार
केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर

सब्जियाँ मनुष्य के भोजन का अभिन्न अंग हैं। हर वर्ग के लोग अपनी आय के हिसाब से सब्जियों का उपयोग दैनिक जीवन में करते है क्योंकि ये संरक्षी भोजन की श्रेणी में आती हैं। सब्जियाँ खनिज लवण, विटामिन, रेशा इत्यादि का भण्डार होती है। तेजी से बदलती जीवन शैली व खान–पान में बदलाव की वजह से मानव जीवन में कई प्रकार के विकार व बीमारियाँ पनप रही है इस परिप्रेक्ष्य में सब्जियों के सेवन का महत्व और भी बढ़ जाता है। मांसाहार के दुष्परिणामों के प्रति बढ़ती जागरूकता के कारण शाकाहारियों की सख्या भी तेजी से बढ़ रही है। भारत दुनिया का दूसरा सबसे अधिक सब्जी उत्पादक देश होने के बावजूद, यहाँ माँग और आपूर्ति में बड़ा अन्तर है। एक व्यक्ति को प्रति दिन कम से कम 300 ग्राम सब्जियाँ जिसमें जड़, पत्तीदार व तना वाली सब्जी शामिल हो, का सेवन करना चाहिए लेकिन अभी उपलब्धता प्रति व्यक्ति केवल 130 ग्राम ही है। ऐसा इसलिए है क्योंकि तुड़ाई उपरान्त सब्जियों का लगभग 30 प्रतिशत हिस्सा उपभोग तक पहुँचने से पहले ही नष्ट हो जाता है।

पिछले कुछ वर्षों के दौरान सब्जियों में नई किस्मों का विकास, उत्पादन तकनीक व प्रबंधन में काफी बदलाव देखा गया है। इनमें नये उत्पादन क्षेत्रों का विकास, तकनीकी विकास व विपणन के रूप में देखा जा सकता है। आजकल रिटेल बाजारीकरण के प्रभाव से सब्जियों की पहुँच दूर–दराज के क्षेत्रों में भी होने लगी है। वर्तमान में सब्जियों का उत्पादन बढ़कर 16 करोड़ टन हो गया है। सब्जियों की गुणवत्ता को कटाई उपरान्त उत्तम प्रबंधन प्रक्रिया से बनाया रखा जा सकता है तथा इनसे संबंधित नुकसान को कम किया जा सकता है। कटाई उपरान्त प्रबंधन की अत्यन्त सरल विधियों को अपना कर किसानों, व्यापारियों व उपभोक्ताओं को दीर्घकालिक लाभ हो सकता है।

कटाई उपरान्त की निम्नलिखित विधियों को अपना कर लाभ प्राप्त किया जा सकता है।

## तुड़ाई की अवस्था व तुड़ाई

सब्जियों की तुड़ाई की अवस्था का तुड़ाई उपरान्त गुणवत्ता व उनकी सेल्फलाइफ का सीधा संबंध है इसलिए सब्जी की किस्मों व उनकी प्रकृति के अनुसार ही तुड़ाई की अवस्था का निर्धारण करना चाहिए। सब्जियों की तुड़ाई न तो अपरिपक्व और न ही अति परिपक्व अवस्था में करनी चाहिए। एक बार गलत अवस्था में तुड़ाई करके उनकी गुणवत्ता को बढ़ाना संभव नहीं होता है। डंठलयुक्त सब्जियों की तुड़ाई चाकू या कैंची की सहायता से काट कर करनी चाहिए ताकि पौधों को नुकसान न हो। सब्जियों की कटाई हमेशा प्रातःकाल में ही करनी चाहिए ताकि इसमें उष्मा की मात्रा कम से कम हो। कटाई पश्चात् सब्जियाँ प्लास्टिक क्रेट में रखकर छायादार स्थान में रखें। तुड़ाई के दौरान सब्जियों में चोट या खरोंच से बचें क्योंकि ऐसी स्थिति से तुड़ाई उपरान्त सूक्ष्म जीवों का आक्रमण आसान हो जाता है जिससे सब्जियाँ सड़ने लगती है।

## छंटाई

सब्जियों मे छंटाई का उद्देश्य कटी–फटी व असामान्य आकार वाली सब्जियों को अलग करना है। छंटाई से उत्पाद प्रभावशील व आकर्षक दिखता है जिससे बाजार में उनका अच्छा मूल्य मिल पाता है। छंटाई की प्रक्रिया खेत में तुड़ाई के तुरन्त बाद ही करनी चाहिए ताकि कटी–फटी सब्जियों के परिवहन व विपणन में होने वाले खर्चे से बचा जा सकें।

भण्डारण हेतु प्याज की छंटाई

## रचाई

कुछ फसले जैसे कंदीय, शल्कीय व जड़ वाली सब्जियाँ (आलू, प्याज, लहसुन, अदरक, शकरकन्द, हल्दी, अरबी) आदि को जमीन से निकालने के बाद कुछ समय के लिए खेत

में खुली अवस्था में रख देते है, इस क्रिया को क्यूरिंग या रचाई कहते है। कसाबा, शकरकन्द व अरबी की रचाई किसी कमरे या छायादार स्थान पर भी की जा सकती है। रचाई करने से इनके ऊपर का छिलका थोड़ा सख्त हो जाता है जिससे इनकी श्रेणीकरण, पैकिंग, परिवहन तथा भण्डारण करने में आसानी रहती है तथा इनकी भण्डारण क्षमता भी बढ़ जाती है। ज्यादातर सब्जियाँ विशेषकर पत्तेदार सब्जियाँ जैसे, पालक, मेथी इत्यादि खुले में भण्डारण करने पर पानी का ह्रास जल्दी होने लगता है जिससे वे अपनी कुदरती ताजगी खो देती है। ऐसी सब्जियों से पानी के ह्रास को कम किया जा सकता है। वेक्स कोटिंग से खीरा, भिण्डी, परवल, शिमला मिर्च इत्यादि में फायदा होता है। कारनोवा वैक्स के 1:10 अनुपात घोल से इन हरी सब्जियों को उपचारित करने से 2–10 दिन तक सब्जियों को ताजी अवस्था में रखा जा सकता है। इसमें खर्चा भी बहुत कम आता है।

## श्रेणीकरण

पिछले कुछ दशकों में फलों एवं सब्जियों का श्रेणीकरण करने का प्रचलन बढ़ा है। श्रेणीकरण से अभिप्राय सब्जियों को उनके वजन, आकार, रंग व रूप के अनुसार वर्गीकरण करने से है। ऐसा करने से उत्पाद की कीमत 20–25 प्रतिशत अधिक मिल सकती है। सब्जियों का श्रेणीकरण हाथ द्वारा या मशीन द्वारा किया जा सकता है। पत्ता गोभी, फूल गोभी, गांठ गोभी, मटर तथा कद्दू वर्गीय सब्जियों का श्रेणीकरण हाथ से ही किया जाता है, जबकि आलू, टमाटर बैंगन, कन्दीय फसलों आदि का श्रेणीकरण मशीनों से करना अधिक आसान होता है।

## धुलाई

तुड़ाई या जमीन से निकालने के पश्चात् सभी तरह की सब्जियों में धुलाई अनिवार्य नही है। उदाहरण के लिए प्याज, लहसुन, आलू इत्यादि की धुलाई करने से उनकी भण्डारण क्षमता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है जबकि अन्य सब्जियों जैसे पत्तेदार, गाजर, मूली, टमाटर, बैगन, शिमला मिर्च, करेला, टिण्डा इत्यादि की पानी से धुलाई करना अच्छा पाया गया है। धुलाई हमेशा साफ पानी से करनी चाहिए। क्लोरीन टेबलेट (20–25 पी.पी.एम.) व खाने वाला नमक 1 प्रतिशत पानी में घोलकर धुलाई करने से सब्जियों की सतह पर मौजूद कीटाणु खत्म हो जाते है और सब्जियाँ बिना सड़े गले ज्यादा समय तक ताजी बनी रहती है।

## मोमीकरण

कुछ सब्जियों में तरल मोम की पतली परत चढ़ा देते हैं जिससे उनकी श्वसन क्रिया व पानी के ह्रास की गति कम हो जाती है जिसके प्रभाव से वे अधिक समय तक ताजी बनी रहती है। सब्जियों की सतह पर घाव इत्यादि भी बन्द हो जाते है तथा मोम के साथ फफूंदनाशक दवा को भी मिलाया जा सकता है। मोमीकरण से टमाटर, बैंगन, परवल, शिमला मिर्च इत्यादि की चमक भी बढ़ जाती है जिससे उसका अधिक मूल्य मिलता है। सब्जियाँ तरल मोम के घोल में डुबोकर निकालने के पश्चात् हवा में सुखा देते है। इसके लिए पेराफीन या कारनोबा वैक्स का प्रयोग किया जाता है। आजकल मोमीकरण हेतु मशीनों का प्रयोग भी होने लगा है।

## पूर्वशीतलीकरण

सब्जियों की तुड़ाई सुबह के समय करने की सलाह दी जाती है ताकि खेत की गर्मी कम से कम रहे, परन्तु किसान अक्सर सब्जियाँ दिन में भी तोड़ देते है। दिन में तोड़ने से सब्जियों के भीतर काफी गर्मी रह जाती है जिससे उनकी भण्डारण क्षमता अधिक नहीं होती है। सब्जियों को तुड़ाई उपरान्त ठण्डी करने के लिए ठण्डे पानी (10–12 डिग्री सेन्टीग्रेड) में 15–20 मिनट तक डुबोकर निकालने के बाद उन्हें नमी युक्त ठण्डी हवा से उपचारित करते है इस क्रिया को प्रीकूलिंग अथवा पूर्व शीतलीकरण कहते है। इसके प्रभाव से सब्जियों की श्वसन व वाष्पोत्सर्जन गति मंद पड़ जाती है जिसके फलस्वरूप वे अधिक समय तक ताजी बनी रहती है।

## पैकिंग

सब्जियों की ढुलाई, भण्डारण, विपणन व परिवहन के दौरान ताजा बनाये रखने के लिए उचित पैकिंग अति आवश्यक कदम है। विभिन्न प्रकार की सब्जियों के लिए अलग–अलग तरह की पैकिंग सामग्री का प्रयोग किया जाता है। आमतौर से भारत में जूट बैग्स, कागज व लकड़ी के कार्टन, बांस की टोकरियाँ, प्लास्टिक बैग इत्यादि प्रयोग की जाती है।

शिमला मिर्च के फलों में स्रिंक रैपिंग

बांस और लकड़ी से बनी टोकरियों में पैकिंग करने से सब्जियों में खरोंच व अन्य घाव बन जात हैं। साथ ही इसके लिए जंगलों की कटाई भी होती है इसलिए आजकल कागज से बने कार्टन का ज्यादा उपयोग पैकिंग में हो रहा है। कागज के कार्टन में पैकिंग करते समय कुशनिंग पदार्थ का भी प्रयोग करना चाहिए ताकि लम्बी दूरी के परिवहन के दौरान उनको नुकसान कम से कम हो।

## परिवहन

कटाई उपरान्त प्रबंधन की श्रंखला में परिवहन एक महत्वपूर्ण घटक है। अधिकांश फल व सब्जी उत्पादक उत्पाद को बोरियों में भरकर ट्रको से शहरों में भेजते हैं अतः परिवहन से पहले पूर्व वर्णित सभी तरीकों का पालन करते हुए इन्हें गन्तव्य स्थान तक भेजा जाना चाहिए।

# शुष्क क्षेत्र में सब्जी परिरक्षण एवं मूल्य संवर्धन हेतु तकनीक

**सोमा श्रीवास्तव**
केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर

## सब्जी परिरक्षण व प्रसंस्करण

सब्जी परिरक्षण व प्रसंस्करण के द्वारा सब्जियों के गुणवत्ता व क्षरण काल में सुधार करने में मदद मिलती है। संरक्षण के द्वारा अतिरिक्त उत्पाद को भविष्य में उपयोग के लिए भण्डारित किया जा सकता है। सब्जी संरक्षण से भोजन की विविधता में वृद्धि होती है तथा इससे उन क्षेत्रों में खाद्य मदें उपलब्ध होती हैं जहां उन्हें उगाया नहीं जाता है व इससे खाद्यों का परिवहन एवं भण्डारण आसान हो जाता है। सब्जियों के संरक्षण को ग्रामीण महिलाओं एवं युवाओं द्वारा रोजगार के रूप में भी अपनाया जा सकता है। सब्जियों की गुणवत्ता के रख रखाव में वृद्धि के लिए खाद्य परिरक्षण के विभिन्न तरीकों का इस्तेमाल किया जा रहा है। सब्जियों का परिरक्षण एक निश्चित वातावरण में विशिष्ट तकनीकी क्रियाओं द्वारा किया जाता है। लवण तथा शर्करा, डिब्बाबंदी में वृद्धि करके प्रशीतन, हिमीकरण, पास्चुरीकरण, निष्कीटन, निर्जलन, इत्यादि परिरक्षण कुछ तरीके हैं जिन्हें सब्जियों के परिरक्षण के लिए इस्तेमाल में लाया जाता है। सब्जी परिरक्षण के अंतर्गत फल एवं सब्जियों को खराब न होने देने तथा उनसे विभिन्न प्रकार के खाद्य पदार्थ तैयार करने की विधियों का अध्ययन किया जाता है। लवण तथा शर्करा के द्वारा फल तथा सब्जी परिरक्षण के किए उपयुक्त कौशल व तकनीक की अच्छे तरीके से जानकारी होना अत्यंत आवश्यक है। सब्जियाँ क्यों खराब होती हैं व इन्हें खराब होने से कैसे बचाया जाए किन किन विधियों द्वारा विभिन्न फल सब्जियों को संरक्षित किया जा सकता है व उनके कौन से उत्पाद बन सकते हैं इसकी जानकारी के लिए फल परिरक्षण की व्यावहारिक जानकारी बहुत आवश्यक है। सब्जियों का शीतलन, हिमीकरण, कैनिंग, बोतलबंद उत्पादों का निर्माण, जूस, मार्म्लेड, स्कवैश, आदि का निर्माण इसके अंतर्गत आता है।

## परिरक्षण उद्योग स्थापना

परियोजना का आकार तथा परिव्यय, बाजार के आकार, प्रौद्योगिकी के प्रकार तथा आटोमेशन की डिग्री (हिस्सा) पर निर्भर करता है। उद्यमी परियोजना क्षेत्र में कच्चे माल की उपलब्धता एवं बाजार की माँग के आधार पर उत्पाद के प्रकार के बारे में निर्णय ले सकते हैं। नए उद्यमी एक व्यक्ति के रुप में अकेले मालिकाना संगठन, पार्टनरशिप फर्म अथवा ज्वाइंट स्टाक कंपनी के तौर पर अपना कारोबार शुरु कर सकते हैं। अकेले और मालिकाना संगठन का अपना पैन (PAN) नंबर होना चाहिए तथा बैंक खाता भी होना चाहिए। पार्टनरशिप फर्मो को राज्य सरकार के स्टाम्प एक्ट के अनुसार नान ज्यूडिशियल स्टाम्प पेपर पर इंडियन पार्टनरशिप एक्ट 1932 के अनुसार भागीदारी विलेख निष्पादित करना चाहिए तथा पार्टनरशिप फर्म को कारपोरेट कार्य मंत्रालय में पंजीकृत कराना चाहिए। ज्वाइंट स्टाक कंपनी, (दि. कंपनी एक्ट 2013) के अनुसार प्राइवेट लिमिटेड, पब्लिक लिमिटेड अथवा प्रोडयूसर्स कम्पनी के तौर पर गठित की जा सकती है जिसका ब्यौरा लिंक के रुप में खाद्य प्रौद्योगिकी मंत्रालय की वेबसाइट पर दिया गया है।

## परिरक्षण उद्योग की वितरण नीति

सब्जी उत्पादों का विपणन बहुत बड़ी चुनौती होता है। बाजार में पहले से कई लोकप्रिय ब्रांड मौजूद होते हैं जो नये खाद्य उत्पाद की राह में बड़ी रूकावट का काम करते हैं। भारतीय बाजार आयातित उत्पादों से भरा पड़ा है अतः नए लोगों को अपने उत्पादों के विपणन को अधिक महत्व देना पड़ता है। प्रसंस्कृत उत्पादों के वितरण के लिए (प्रोसेस्ड प्रोडक्टस) फूड सेफ्टी एण्ड स्टैंडर्ड अथॉरिटी ऑफ इंडिया (FSSAI) एक्ट 2006 का पालन किया जाना चाहिए। भारत में सभी खाद्य उत्पादों के लिए एफ एस एस ए आई (FSSAI) एक्ट लागू होता है। यह न्यूनतम मापदंडों, परिचालन प्रक्रिया, खाद्य सुरक्षा मापदंडों, पैकेजिंग तथा लेबलिंग मापदंडों के बारे में विनिर्देश निर्धारित करता है। कई इकाइयों को फूड सेफ्टी एंड स्टैंडडैर्स अथॉरिटी ऑफ इंडिया से एक लाइसेंस लेना पडता है जिसे एफ.एस.एस.ए.आई. नंबर कहते हैं। लाइसेंसिंग की प्रक्रिया एफ.एस.एस.ए.आई. के वेबसाइट पर दी गई है। प्रोडक्टस की ब्रैडिंग एवं मार्केटिंग के लिए किसी प्रोफेशनल एजेंसी की सेवाएं लेना बेहतर रहता है। इकाइयों को अपने प्रोडक्टस के विज्ञापन के लिए भी पर्याप्त बजट का आवंटन करना चाहिए।

## मूल्य संवर्धन के निम्नलिखित महत्व हैं

1. मौसमी उत्पाद का संरक्षण व नुकसान से बचाव
2. विभिन्न उत्पादों का निर्माण उत्पाद की गुणवत्ता को बढ़ाना
3. एक स्थान से दूसरे स्थान तक उत्पाद के प्रयोग को संभव बनाना
4. खाद्य सुरक्षा को बढ़ावा देना
5. आय उपार्जन के साधन मुहैया कराना

## मूल्य संवर्धन के लिए मूलभूत आवश्यकतायें क्या हैं

1. कच्चे माल यानि उत्पाद की उपलब्धता एवं तैयार होने के समय का ज्ञान
2. मूल्य संवर्धन की उचित तकनीक की पूरी जानकारी
3. उपभोक्ता की आवश्यकताओं की समझ
4. तकनीकी में दक्षता प्राप्त करना
5. संभावित बाजार व उपलब्ध संसाधनो का ज्ञान
6. कल्पशीलता, धैर्य, अनुभव, वाक्चातुर्य

## मूल्य संवर्धन के लिए उपयुक्त शुष्क क्षेत्र की सब्जियाँ

भारतीय मरुस्थल के शुष्क वातावरण की जटिल पारिस्थितिकी में प्रकृति प्रदत्त विभिन्न वानस्पतिक उत्पाद प्राकृतिक रूप से पाये जाते हैं जिनका शुष्क क्षेत्र के रहवासियों की पोषण सुरक्षा में अत्यधिक महत्व है तथा ये यहाँ के भोजन में आवश्यक रूप से सम्मिलित किए जाते हैं। भारत के शुष्क क्षेत्र में लगभग 30 प्रकार की विभिन्न वानस्पतिक उत्पाद पाये जाते जाते हैं जोकि न केवल यहाँ के भोजन को सुस्वादु बनाते हैं बल्कि विभिन्न प्रकार के पोषक तत्वों का भी बहुत अच्छा स्रोत हैं। इस प्रकार के मुख्य परंपरागत वानस्पतिक उत्पाद जोकि शुष्क क्षेत्र में बहुतायत से पाये जाते हैं, उनके पोषण में महत्व एवं प्रसंस्करण तकनीकियों के बारे में यहाँ विस्तार से वर्णन किया गया है।

### केर

केर झाड़ी या अनेक शाखाओं युक्त छोटे वृक्ष के रूप में शुष्क क्षेत्र में बहुतायत से पाया जाता है। केर में मार्च, अप्रैल के महीने में फूल आते हैं। केर के फल छोटे छोटे, 1.3–1.8 से.मी. व्यास के हरे रंग के, गोल, गूदेदार व बीजयुक्त होते हैं जोकि पकने पर लाल रंग के हो जाते हैं। मई जून के महीने में केर के फल बहुतायत से मिलते हैं। केर के फलों को सुखाकर संरक्षित किया जाता है जिनका वर्ष भर उपयोग किया जा सकता है। बाजार में सूखे हुए फलो का बहुत अच्छा मूल्य मिल जाता है। बच्चे एवं महिलाएं इनके फलों को तोड़कर एकत्र करते हैं। केर के वृक्ष में छोटे–छोटे कांटे होने के कारण इनको तोड़ते समय विशेष ध्यान रखना चाहिए अन्यथा हाथों को अत्यधिक नुकसान पहुँच सकता है। केर का प्रयोग अचार बनाने के लिए भी होता है। केर के फलों में प्रोटीन व खनिज लवण जैसे आयरन, कैल्शियम, जिंक, विटामिन–सी तथा बीटा–केरोटीन काफी अच्छी मात्रा में पाये जाते हैं।

### सांगरी

शुष्क क्षेत्र में खेजड़ी के वृक्ष बहुतायत से मिलते हैं जिन्हें सामाजिक आर्थिक रूप से काफी महत्वपूर्ण माना जाता है। इन्हें शुष्क क्षेत्र की जीवनरेखा की संज्ञा भी दी गयी है। खेजड़ी के वृक्ष में दिसंबर से अप्रैल के मध्य फूल आते हैं व मार्च से जून माह के मध्य इसमें 10–20 से.मी. लंबी फलियाँ लगती हैं। इन्हें मारवाड़ में सांगरी के नाम से जाना जाता है। कच्ची व छोटी फलियाँ हरे रंग की मुलायम व रेशेदार होती हैं जोकि सूखने पर भूरे रंग की हो जाती हैं। सांगरी अत्यधिक पौष्टिक व खाने में स्वादिष्ट होती है। इसमे 9–15% प्रोटीन विटामिन–सी, कैल्शियम फास्फोरस अच्छी मात्रा में पाया जाता है। सांगरी को सुखाकर साल भर प्रयोग में लिया जाता है। सूखे हुए केर व सांगरी का प्रयोग पंचकुटा बनाने में किया जाता है जोकि मारवाड़ में अत्यधिक प्रचलित है।

### लसोड़ा/गूंदा

गूंदा या लसोड़ा का वृक्ष मध्यम ऊँचाई वाला व बड़े–बड़े पत्तों से युक्त होता है जिसे खेतों में व्यवस्थित रूप से या फिर मेड़ पर लगाते हैं। वृक्षारोपण के लगभग 4–5 वर्षों के बाद गूंदे के वृक्ष में फल आने लगते हैं। ज्यादातर अप्रैल–मई के मध्य लसोड़े के फल आते हैं जोकि हरे रंग के, गूदेदार, चिपचिपे गूदे वाले व फीके होते हैं। कच्चे फलों का प्रयोग सब्जी या अचार बनाने में में किया जाता है। पके हुए फलों को भी खाने में काम में लेते हैं। गूंदे के प्रत्येक वृक्ष से लगभग 30–45 किलो फल प्राप्त किए जा सकते हैं। सरकार द्वारा भी गूंदे की बागवानी को काफी प्रोत्साहित किया जा रहा है।

### मतीरा

मतीरा तरबूज के समान दिखने वाला शुष्क क्षेत्र का फल है जोकि खेतों में बेलों के रूप में फैल जाता है। इसकी

व्यावसायिक खेती भी की जाती है। इसकी कई प्रकार की प्रजातियाँ भी विकसित की गयी हैं जिनके फलों की गुणवत्ता भिन्न–भिन्न होती है। इसकी कुछ प्रजातियों में बीज की मात्रा अत्यधिक होती है व कुछ में कम बीज पाये जाते हैं। इसका गूदा सफेद–पीले रंग का व रसदार तथा ऊपरी सतह (खोल) काफी मोटा होता होता है जिसपर हरे रंग की धारियाँ होती हैं। यह ज्यादातर अगस्त से दिसंबर के मध्य पैदा होता है। मतीरा में (टी.एस.एस.) 5–15 प्रतिशत के बीच पाया जाता है। कुछ प्रजातियों के फल कम मीठे व कुछ के अधिक मीठे होते हैं जोकि उसमे उपस्थित ग्लूकोस, फ्रक्टोस व सुकरोस शर्करा की मात्रा पर निर्भर करता है जोकि फल के पकने के साथ–साथ बढ़ती जाती हैं। मतीरा के छोटे व कच्चे फल जोकि लगभग 100 ग्राम वजन के होते हैं सब्जी बनाने में प्रयोग किए जाते हैं। मतीरा के बीज बहुत उपयोगी होते हैं व इनका प्रयोग मिठाई, लड्डू, आइसक्रीम, बिस्किट, नाश्ते के पकवानों में व शरबत आदि में बहुतायत से होता है। मतीरा के बीजों को स्थानीय भाषा में (मगज) कहा जाता है। मतीरा के बीज अत्यधिक पौष्टिक होते हैं व इनमें 25–32 प्रतिशत प्रोटीन व 30–40 प्रतिशत तेल पाया जाता है। मतीरा की कुछ उन्नत किस्में विकसित की गयी हैं जिनमें बीज की मात्रा देसी किस्मों से काफी अधिक होती है ।

## काचरी

काचरी शुष्क क्षेत्र में वर्षा ऋतु में प्राकृतिक रूप से पायी जाती है। यह अगस्त से नवंबर के मध्य बहुतायत से मिलती है। इसके फल छोटे, बेलनकार व हरे–पीले रंग के होते हैं जोकि पकने पर पीले रंग के चित्तीदार हो जाते हैं। इसके फल अनेक बीजयुक्त, खट्टे व रसदार होते हैं। काचरी में 88 प्रतिशत जल, 7.5 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट, कैल्शियम, आयरन, जिंक, विटामिन–सी व बीटा केरोटीन पाया जाता है। काचरी के फल सब्जी के रूप में खाये जाते हैं तथा इन्हें सुखाकर साल भर के लिए संरक्षित किया जा सकता है। इसके पाउडर का प्रयोग अमचूर के विकल्प के रूप में किया जा सकता है। काचरी के फलों को सुखाकर व पीसकर बनाया गया पाउडर खट्टा स्वाद लाने के लिए विभिन्न खाद्य वस्तुओं में किया जाता है जैसे अचार में व चिकन को गलाने में भी इसका प्रयोग किया जाता है। काचरी का उपयोग परंपरागत राजस्थानी सब्जी पंचकुटा में भी किया जाता है। काचरी में अनेक औषधीय गुण पाये जाते हैं अतः इसका प्रयोग औषधि निर्माण के लिए भी होता है जोकि मुख्यतया कब्ज, पेट से संबन्धित रोगों आदि के लिए किया जाता है।

## हिंगोटा

हिंगोटा का वृक्ष लगभग 20 फीट ऊँचा व धीमी गति से बढ़ने वाला होता है जोकि शुष्क क्षेत्र के लिए पूर्णतया उपयुक्त है। हिंगोटा के वृक्ष में दिसंबर से मार्च के मध्य फूल व मार्च से जुलाई के मध्य फल आते हैं । हिंगोटा को कच्चा या सुखाकर खाया जाता है। हिंगोटा में 26–30 प्रतिशत प्रोटीन पाया जाता है। हिंगोटा में कब्ज को दूर भगाने की क्षमता होती है अतः इसका आयुर्वेदिक औषधि बनाने में भी उपयोग किया जाता है। हिंगोटा 3–4 दिन पानी में भिगोकर या 60–70 डिग्री सेन्टीग्रेड के तापमान पर उबालकर व निथारकर फिर खाया जाता है। इसके द्वारा हिंगोटा में पाये जाने वाले कसैले तत्व पानी में आ जाते हैं और इसका स्वाद बढ़िया हो जाता है, इसके पश्चात् इसका कसैलापन कम करके नमक के साथ या फिर सुखाकर मीठे व्यंजनों में प्रयोग किया जाता है जोकि अत्यंत स्वादिष्ट लगता है।

## टमाटर तथा मौसमी सब्जियों के मूल्य संवर्धित उत्पाद निर्माण कैसे करें :

### टमाटर की चटनी

1. टमाटर – एक किलो
2. प्याज – 100 ग्राम

### शुष्क क्षेत्र के महत्वपूर्ण फल सब्जियाँ व उनके संभावित प्रसंस्कृत उत्पाद

| फल | प्रसंस्कृत उत्पाद |
|---|---|
| केर | अचार, चूर्ण |
| सांगरी | अचार, बिस्किट, लड्डू, सब्जी |
| मतीरा | जूस, स्कवैश, कैंडी |
| काचरी | अचार, चूर्ण, सब्जी |
| ग्वार | अचार, चूर्ण, सब्जी, आइसक्रीम स्टबिलाइजर, ग्वार गम |
| फोंग | चूर्ण, रायता |

3. अदरक – 50 ग्राम
4. लहसुन – 20 ग्राम
5. चीनी – 750 ग्राम
6. लाल मिर्च – 15 ग्राम
7. गरम मसाला – 10 ग्राम

टमाटर की चटनी

एक किलो कटे हुए टमाटरों में पिसे हुए प्याज 100 ग्राम, अदरक 50 ग्राम, लहसुन 20 ग्राम मिलाकर पकायें। गरम होने पर 750 ग्राम चीनी मिलायें व पकाते रहें। चाश्नी गाढ़ी होने पर पिसी लाल मिर्च 15 ग्राम व गरम मसाला 10 ग्राम मिलायें। गाढ़ी होने पर नमक मिलाकर नीचे उतारें व सोडियम बेंजोएट एक ग्राम प्रति किलो टमाटर की दर से अलग से घोल बनाकर मिलायें व बोतलों में भर दें।

सब्जियों से बना अचार

## सब्जियों का मिश्रित अचार

1. गोभी – 500 ग्राम (कटे हुये 2 ½ कप )
2. गाजर – 500 ग्राम ( कटे हुये 2 ½ कप)
3. हरे मटर के दाने या शलजम – 200 ग्राम ( 1 कप)
4. हींग – एक चने के दाने के बराबर
5. सरसों का तेल – 100 ग्राम ( आधा कप )
6. पीली सरसों – 2 चम्मच (पिसी हुई)
7. हल्दी पाउडर – 1 छोटी चम्मच
8. लाल मिर्च पाउडर – 1 छोटी चम्मच
9. सिरका – एक टेबल स्पून (2 नीबू का रस)
10. नमक – स्वादानुसार ( 2 ½ छोटी चम्मच)

गोभी को बड़े बड़े टुकड़ों में काट लीजिये (पानी गरम कीजिये और 1 छोटी चम्मच नमक मिलाइये) इस पानी में गोभी के टुकड़े डाल कर, ढककर, 10–15 मिनट के लिये रख दीजिये, अब गोभी को इस पानी से निकालिये और साफ पानी से धोइये। गाजर धोइये, छीलिये और फिर से धोइये अब इन गाजर के 2 इंच लम्बे पतले टुकड़े काट लीजिये। मटर छीलिये, दाने धो लीजिये। किसी बर्तन में इतना पानी गरम करने रख दीजिये कि सब्जियां पूरी तरह डूब सकें, पानी में उबाल आने पर, सारी कटी हुई सब्जियां उबलते पानी में डालिये, 3–4 मिनट उबालिये और ढककर 5 मिनट के लिये रख दीजिये। सब्जियों का पानी किसी चलनी में छान कर निकालिये और सब्जी को किसी धुले मोटे कपड़े के ऊपर, डाल कर धूप में 4–5 घंटे सुखाइये। जब सब्जियों में पानी बिलकुल न रहे तब इन्हें एक बड़े बर्तन में डालिये, तेल को कढ़ाई में डालकर गरम कीजिये, तेल गरम होने के बाद गैस बन्द कर दीजिये, तेल को हल्का गरम रहने पर, पीली सरसों, हल्दी पाउडर, नमक, लाल मिर्च, हींग पीस कर डालिये और सब्जियों में डालकर अच्छी तरह मिला दीजिये, सिरका या नीबू का रस भी मिला दीजिये। अचार को सूखे हुये काँच या प्लास्टिक कन्टेनर में भर कर रख दीजिये, 2 दिन में 1 बार चमचे से अचार को ऊपर नीचे कर दीजिये, 3–4 दिन में यह अचार खट्टा और स्वादिष्ट हो जाता है। गोभी, गाजर, मटर का अचार तैयार है, यह अचार 1 महीने तक बिलकुल अच्छा रहता है। अधिक दिन चलाने के लिये, अचार को फ्रिज में रखा जा सकता है या अचार में इतना तेल डाल दीजिये कि अचार तेल में डूबा रहे।

# कम्पोस्ट बनाने की उत्तम वैज्ञानिक विधियाँ

**महेश कुमार**
केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर

भारतीय कृषि क्षेत्र में पिछले चार दशकों से फसल उत्पादन में जो वृद्धि आई है, इसका मुख्य कारण उन्नत तकनीकों को अपनाया जाना और अधिक मात्रा में रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों का प्रयोग है। अपनी जरूरतों को पूरा करने के लिए इन कृत्रिम पदार्थों का भारी मात्रा में प्रयोग किया जा रहा है जिसके कारण मिट्टी की स्थिति की अनदेखी की जा रही है। इसके कई दुष्परिणाम हमारे समक्ष धीरे–धीरे प्रकट हो रहे हैं। मिट्टी के प्राकृतिक गुण धीरे–धीरे समाप्त होते जा रहे हैं। मिट्टी में जीवांश या कार्बनिक पदार्थों की कमी के कारण गर्मियों में कभी–कभी भूमि के ऊपरी भाग का तापमान 60 डिग्री सेंटीग्रेड तक पहुँच जाता है। मिट्टी की नमी भी ज्यादा देर तक नहीं टिकती है और इससे खेतों में दरारें पड़ने लगती हैं। निम्न जल धारण क्षमता के कारण सिंचाई जल की आवश्यकता बहुत अधिक बढ़ जाती है और संसाधनों का दुरूपयोग होता है।

कृषकों को यह बात जानना अति आवश्यक है कि मिट्टी एक भौतिक माध्यम ही नहीं, अपितु जीवित माध्यम भी है, जिसमें असंख्य लाभकारी सूक्ष्म जीव निवास करते हैं, जो विभिन्न तरीकों से पौधों का पोषण करते हैं। अतः मिट्टी में इनकी संख्या सुनिश्चित करना अति आवश्यक है, जो जीवांश या कार्बनिक पदार्थों द्वारा ही संभव है। इसके लिए प्रत्येक कृषक को ऐसी व्यवस्था करनी चाहिए जिससे उनके फार्म पर या घर में उपलब्ध कूड़ा–कचरा, जानवरों के मल–मूत्र, पौधों के अवशेष आदि का उपयोग एक उत्कृष्ट प्रकार के कम्पोस्ट बनाने में कर सकें।

अधिकांश किसानों के बाड़ी या प्रक्षेत्र में स्वनिर्मित खाद के गड्ढे होते हैं। कृषक इन गड्ढों का उपयोग खाद बनाने में करते हैं। यहां घर के अपशिष्ट और फार्म के कचरे का इस्तेमाल खाद बनाने में करते हैं। ठीक प्रकार से न सड़ने के कारण उसमें खरपतवार के बीज और निमेटोड (सूत्रकृम) पाए जाते हैं, जो फसलों के लिए नुकसानदेह हैं। खाद बनाते समय इसे खुला छोड़ दिया जाता है और अत्यधिक गर्मी और बारिश से बचाव की सुविधा नहीं होती है। इन कचरों का उपयोग व्यवस्थित और वैज्ञानिक तरीके से न होने के कारण खाद की गुणवत्ता निम्न स्तर की होती है, जिसमें जीवांश और पोषक तत्वों की मात्रा कम होती है। परंतु किसान बहुत कम खर्चे में स्वयं जैविक खादों का निर्माण कर सकते हैं। इनके पास उपलब्ध खाद गड्ढा अच्छी गुणवत्ता वाली खाद प्राप्त करने का अच्छा माध्यम हो सकता है, जिसे कम्पोस्टिंग (सड़न) की अत्यंत सरल प्रक्रिया द्वारा प्राप्त किया जा सकता है।

## खाद बनाने हेतु प्रयुक्त सामग्री

पौधों की पत्तियों, टहनियों, डंठल, भूसा, पैरा कुट्टी, घर से प्राप्त सब्जियों के अवशेष आदि को छोटे–छोटे हिस्सों में काटकर बांट देना चाहिए। घर और खेत पर उपलब्ध जानवरों के गोबर को उनके मूत्र के साथ एकत्रित करना चाहिए। जानवरों के बिछावन को इकट्ठा करने के लिए गौशाला में भूसा, लकड़ी बुरादा या रेत का बिछावन बिछाना चाहिए और इसे 10–15 दिनों में हटाते रहना चाहिए। जानवरों के मूत्र को एक सामान्य कंक्रीट टैंक में इकट्ठा करते रहना चाहिए।

## गोबर और कचरा संग्रह करने का तरीका

खाद के गड्ढे को भरने से पूर्व उसे घर या प्रक्षेत्र पर पहले अलग–अलग एकत्रित करना चाहिए। इसके लिए दो छोटे और गहरे गड्ढे बनाए जाते हैं। इन गड्ढों में मल–मूत्र और इनका बिछावन तथा वानस्पतिक कचरे को अलग–अलग गड्ढों में इकट्ठा किया जाता है। पौध अवशेष, पत्ती, टहनी, डंठल, घर से प्राप्त सब्जी के टुकड़ों को बारीक कर गड्ढे में नियमित रूप से गोबर के घोल से तर करके मिलाते रहना चाहिए। इन पदार्थों से पत्थर के टुकड़े, प्लास्टिक इत्यादि को अलग कर देना चाहिए।

खाद के गड्ढे का आकार 6 मीटर लंबा, डेढ़ मीटर चौड़ा और एक मीटर गहरा होना चाहिए। हालांकि पशुओं की संख्या और आवश्यकतानुसार आकार को छोटा–बड़ा कर सकते हैं। गड्ढे का आकार यदि बड़ा हो तो उसे 2 या 3 बराबर भागों में बाँट लेना चाहिए। खाद भरते समय जब पहला भाग भूतल से 45 से.मी. ऊँचा हो जाए तो उसे ढेर के रूप में बनाकर गोबर के घोल व मिट्टी से ढक देना चाहिए। फिर गड्ढे के शेष भाग में इसी तरह खाद भरना चाहिए। इससे वर्ष भर खेतों को उच्च

गुणवत्ता वाली कम्पोस्ट खाद की पूर्ति होती है। गड्ढों का चुनाव छायादार स्थान पर करना चाहिए और खाद बनाते समय नमी की पर्याप्त मात्रा होना आवश्यक है। गड्ढे के विभिन्न भागों के उपयोग के लिए समय नियोजित करना आवश्यक है, ताकि हर फसल के लिए खाद उपलब्ध हो सके।

## खाद बनाने की वैज्ञानिक विधि

जानवरों के मल–मूत्र, बिछावन और वनस्पति कचरों का संग्रह तब तक इन छोटे–छोटे गड्ढों में करना चाहिए जब तक कि दिए गए गड्ढों के आकार के अनुसार पूर्ति न हो जाए। गड्ढे भरने के पूर्व इन पदार्थों में प्रति क्विंटल कचरे की दर से एक किलोग्राम रॉक फास्फेट का प्रयोग करना चाहिए, जो–कि सस्ता और आसानी से उपलब्ध हो जाता है।

संग्रहित कचरों का उपयोग गड्ढा के पहले भाग में भराई हेतु विभिन्न परतों में डालना चाहिए। सर्वप्रथम गड्ढों की साफ–सफाई कर उसकी सतह को मिट्टी या बालू से दबाकर ठोस बनाएँ, फिर उसे गोबर के घोल से तर करें। इसके बाद पहली परत के रूप में वानस्पतिक कचरे का तीन से चार इंच परत में एक समान बिछाएं, जिसे गोबर के घोल से तर करें। इसी क्रम में गड्ढा भराई को पूर्ण करें। भराई का कार्य भूतल सतह से 45 से.मी. ऊंचा करें। फिर उसे ढेरी बनाकर मिट्टी और गोबर के घोल से लीप दें। बिल्कुल यही प्रक्रिया गड्ढे के शेष भाग में दोहरानी चाहिए, जिसके बनाने का क्रम निश्चित करें। अपघटन प्रक्रिया के लिए 70 फीसदी नमी होनी चाहिए, जिसकी पूर्ति के लिए नियमित जल दें।

20 से 25 दिनों बाद जब गलन प्रक्रिया से उत्पन्न गर्मी कम हो जाए, तब खाद के विभिन्न परतों में सूक्ष्म जीव ट्राइकोडर्मा विरडी का छिड़काव करें। यह बाजार में आसानी से उपलब्ध है। इससे खाद की गलन क्रिया और गुणवत्ता में वृध्दि होती है।

6 से 8 दिनों बाद खाद पलटने का कार्य करें। इसमें प्रत्येक परत का पलटा जाना आवश्यक है। खाद पलटने की प्रक्रिया तीन बार हर पंद्रह दिनों में करें। यह क्रिया ढाई माह तक करते रहें। अंतिम बार पलटने के समय जैव उर्वरक जैसे राइजोबियम (दलहन फसलों के लिए), पीएसबी, एजोटोबैक्टर, एजोस्पाइरिलम आदि खाद में मिश्रित करें। इससे खाद में लाभकारी जीवाणु की संख्या बढ़ती है और खाद की गुणवत्ता अधिक बढ़ जाती है। इसके एक माह बाद खाद का प्रयोग खेतों में करें। इसे खेतों में समान रूप से फैलाना चाहिए।

कम्पोस्टिंग या सड़न की आसान प्रक्रिया को जानकर किसान स्वयं अपने परंपरागत गड्ढे से कम समय में उत्तम गुणों वाली खाद बना सकता है, जिसमें जीवांश और पोषक तत्व भरपूर मात्रा में होते हैं।

पिट में तैयार हो रही कम्पोस्ट

# कृषि में शहरी एवं औद्योगिक अपशिष्ट पदार्थों का उपयोग

**नवरतन पंवार**
केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर

**"जीवेत शरद: शतम्"** सौ वर्ष तक हम जीवित रहें, सौ वर्ष या उससे अधिक जीवित रहने को मिला वैदिक संदेश तब ही सच है जब हम शुद्ध वायु में सांस लें, स्वच्छ पानी पीयें, शुद्ध एंव पौष्टिक भोजन करें। परन्तु आजकल देश विदेश में प्रदूषण इतना बढ़ गया हैं कि कोई भी वस्तु स्वच्छ एवं शुद्ध नहीं रह गई हैं, न तो शुद्ध वायु सुलभ है और न ही शुद्ध जल, अन्न और मृदा। इन सभी को कल–कारखानों से निकले अपद्रव्य, अपशिष्ट और धुएं, वाहनो से निकली गैसों, घरेलू अपशिष्ट, कूड़े कचरे, वन विनाश तथा खेती में प्रयुक्त कृषि रसायनों ने इतना प्रदूषित किया है कि सौ वर्ष या अधिक जीने का सपना केवल संदेश ही रह गया है।

सभ्यता के विकास के साथ–साथ मनुष्य की भोगवादी प्रवृति का विकास हुआ तथा अपनी सुख–सुविधाओं के लिए उसने जंगलो का दोहन करना प्रारंभ किया, जिसके फलस्वरूप भू–क्षरण की स्थिति उत्पन्न हो गई। यह सर्वमान्य तथ्य है कि मृदा हमारी बुनियादी जरूरत है तथा इसे खींचतान कर बढ़ाया या फैलाया नहीं जा सकता हैं। चट्टानों, पर्यावरण, जीवों एंव समय के आपसी क्रिया–कलापों के परिणामस्वरूप विकसित मिट्टी की स्थिति आज कुप्रबंध एंव अनुचित क्रियाओं के कारण मृदा की उपजाऊ क्षमता निरन्तर घटती जा रही है।

मृदा प्रकृति का एक आधारभूत संसाधन है, जिसके गुणों में कमी का प्रभाव सारे जीवित कारकों पर पड़ता है। मृदा की उर्वरा शक्ति में कमी होने से उत्पादन में कमी के साथ–साथ बढ़ती जनसंख्या के भरण–पोषण की समस्या उत्पन्न हो जायेगी।

विभिन्न प्रकार के अपशिष्टों के अनियमित विक्षेपण से वातावरण में दुर्गन्ध द्वारा सिर्फ प्रदूषण ही नहीं होता है बल्कि अनेक प्रकार के हानिकारक जीवों की संख्या बढ़ जाती हैं।

औद्योगिक इकाइयों, सार्वजनिक संस्थानो, होटलों, घरों से निकलने वाले प्रदूषित जल की समुचित व्यवस्था न होने के कारण जगह–जगह जल का जमाव हो जाता है साथ ही मृदा प्रदूषित हो जाती है।

इन अपशिष्ट पदार्थो एंव जल में विभिन्न प्रकार के पोषक तत्व प्रचुर मात्रा में उपलब्ध रहते हैं। साथ ही इसमें कार्बनिक कार्बन की उचित मात्रा पाई जाती है। अतः इन पदार्थो का कृषि में समुचित ढंग से उपयोग करके हम मृदा स्वास्थ्य को सुधार सकते हैं।

## खाद्य प्रसंस्करण सह–उत्पाद

खाघ प्रसंस्करण औद्योगिक इकाइयों से निकले अपद्रव्य एंव अपशिष्ट में कार्बनिक कार्बन एंव पोषक तत्वों की भरपूर मात्रा होती है। इन अपशिष्ट एंव अपद्रव्यों में कुछ हानिकारक तत्व भी पाये जाते हैं जिसके कारण मृदा स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है अतः इन पदार्थो का समुचित मात्रा में ही उपयोग करना चाहिए अन्यथा मृदा की वैद्युत चालकता, पी.एच. पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। जहाँ तक हो सके सड़ने वाले अपशिष्ट का उपयोग खाद बनाकर किया जाए। इस प्रकार खाद बनाते समय इसमें कूड़े–करकट एवं गोबर का उपयोग भी करना चाहिए जिससे इस खाद की गुणवत्ता और बढ़ जाती है। इस खाद का मृदा में प्रयोग करने पर मृदा के भौतिक, रासायनिक एंव जैविक गुणों में सुधार होता है।

**परिष्कृत फल एवं सब्जियों के ठोस अवशेषों में मुख्य पोषक तत्वों (ग्राम प्रति कि.ग्रा.) की मात्रा**

| फल / सब्जी | नत्रजन | फास्फोरस | पोटेशियम | कैल्शियम | मैग्नीशियम | सल्फर |
|---|---|---|---|---|---|---|
| आलू | 7.5 | 1.2 | 0.10 | 0.02 | 0.03 | 0.7 |
| नाशपाती | 13.7 | 1.8 | 0.12 | 0.03 | 0.01 | 3.7 |
| संतरा / नींबू / मौसमी | 9.9 | 10.9 | 0.96 | 1.21 | 0.26 | 8.8 |
| टमाटर | 20.8 | 3.0 | 0.20 | 0.30 | – | 1.7 |
| आलू | 22.4 | 0.8 | – | – | – | – |
| भुट्टा (मक्का) | 14.1 | – | – | – | – | – |
| गाजर | 15.8 | – | – | – | – | – |

सब्जी प्रसंस्करण इकाइयों से निकला अपशिष्ट

## चीनी कारखानों से प्राप्त अपशिष्ट

भारत में लगभग 580 चीनी के कारखाने हैं जिनसे प्रतिवर्ष 700 लाख टन प्रैसमड पैदा होता है एवं 75 लाख टन मौलेसेज का उत्पादन होता है। इसमें से मौलेसेज का उपयोग अल्कोहल के उत्पादन में किया जाता है। प्रैसमड में पर्याप्त मात्रा में पोषक तत्व पाये जाते हैं। प्रैसमड दो प्रकार का होता हैं (1) सल्फाइटेशन प्रैसमड तथा (2) कारबोनेशन प्रैसमड। सल्फाइटेशन प्रैसमड में सल्फर की पर्याप्त मात्रा पाई जाती है। फसल उत्पादन के लिए सल्फाइटेशन प्रैसमड का उपयोग कारबोनेशन प्रैसमड की तुलना में लाभदायक होता है। क्षारीय मृदाओं के उपचार के लिए प्रैसमड का उपयोग किया जाता है। इसके अपघटन से कार्बन डाई आक्साइड, कार्बनिक तथा अन्य अम्ल बनते हैं जो कि मृदा के पी.एच. मान को कम करने के साथ–साथ कैल्शियम की विलेयता को बढ़ाते हैं। कार्बोनेशन क्रियाविधि वाले प्रैसमड का चूने की अधिक मात्रा होने के कारण, चूना युक्त क्षारीय मृदाओं के अतिरिक्त अन्य क्षारीय मृदाओं में लगभग 12.5 टन प्रति हेक्टेयर का प्रयोग करके क्षारीय मृदाओं का सुधार किया जा सकता है। इसी प्रकार से सल्फाइटेशन क्रियाविधि से प्राप्त प्रैसमड का उपयोग सभी प्रकार की क्षारीय भूमि के सुधार में किया जा सकता है क्योंकि इसमें चूने की मात्रा बहुत कम तथा गंधक एवं उसके यौगिकों की मात्रा काफी अधिक पाई जाती है जो कि अपघटन के बाद गंधक का अम्ल बनाकर मृदा में जिप्सम पैदा करते हैं जिसका कैल्शियम सोडियम को अवक्षेपित कर देता है। प्रैसमड का उपयोग बुवाई से 4–5 सप्ताह पहले करके सिंचाई कर देनी चाहिए।

## आसवन इकाई (एल्कोहल उत्पादन) के अपद्रव्य/अपशिष्ट

आसवन इकाई, एक प्रमुख कृषि आधारित औद्योगिक ईकाई है जिससे औधोगिक एवं पीने योग्य अल्कोहल का उत्पादन होता है। वर्तमान समय में भारत में 285 आसवन इकाई कार्यशील हैं। इन इकाईयों से लगभग 4.07 लाख

### प्रैसमड का रासायनिक गठन

| रासायनिक गुण | सल्फाइटेशन प्रैसमड | कार्बोनेशन प्रैसमड |
|---|---|---|
| पी.एच. मान | 6.5–7.5 | 8.0–8.5 |
| वैद्युत चालकता (डैसी सायमन प्रति मी.) | 2.5–3.0 | 2.0–2.5 |
| कार्बनिक कार्बन (प्रतिशत) | 26.0–43.2 | 13.1–15.1 |
| नाइट्रोजन (प्रतिशत) | 1.1–3.1 | 0.6–0.9 |
| फास्फोरस (प्रतिशत) | 0.6–3.6 | 0.4–2.4 |
| पौटेशियम (प्रतिशत) | 1.5–2.0 | 1.4–1.8 |
| सल्फर (प्रतिशत) | 2.0–2.6 | – |
| लौहा (पी.पी.एम.) | 2000–2500 | 1800–2200 |
| मैगनीज (पी.पी.एम.) | 1250–1600 | 1800–2200 |
| ताँबा (पी.पी.एम.) | 126–211 | 200–300 |
| जस्ता (पी.पी.एम.) | 248–320 | 275–344 |
| चूना (प्रतिशत) | – | 60 |
| जिप्सम (प्रतिशत) | 9.4 | – |

लीटर स्पेन्ट वॉश (आसवन अपद्रव्य) पैदा होता है जो पर्यावरण प्रदूषण का एक कारण बनता है। आसवन अपद्रव्य को सीधे पीने योग्य जल या बहते जल में अनुपचारित अवस्था में मिलाने से जल प्रदूषण तो होता ही है साथ ही बड़ी मात्रा में मछलियों एवं जलीय जीवों की मृत्यु हो जाती है।

उपचारित आसवन द्रव्य को फसल उत्पादन के लिए समुचित मात्रा में उपयोग किया जा सकता है, परन्तु अत्यधिक एवं लगातार उपयोग करने से लवणीयता की समस्या उत्पन्न हो जाती है। ऐसा अनुमान है कि आसवन अपद्रव्य (उपचारित) की 10 से.मी. सिचाई से 300 कि.ग्रा. नत्रजन, 20 कि.ग्रा फास्फोरस, 6000 कि.ग्रा. पौटेशियम तथा 1000 कि.ग्रा. सल्फेट तथा कार्बनिक पदार्थ की अत्यधिक मात्रा भूमि में प्राप्त होती है।

आसवन इकाई के अपद्रव्य/अपशिष्ट पदार्थो के प्रयोग से काली मृदा के पी.एच. में कोई परिवर्तन नही पाया गया लेकिन पाँच साल तक फसलें उगाने के बाद मृदा की लवणता बढ़ जाती है। विभिन्न फसल चक्रों में लगातार पाँच साल तक आसवन इकाई पदार्थो के प्रयोग से कार्बनिक कार्बन, सुलभ फास्फोरस एवं सुलभ पोटेशियम के स्तर में वृद्धि हुई।

स्पेन्ट वॉश मदिरा उद्योग से प्राप्त एक अपद्रव्य है जिसका उपयोग क्षारीय मृदा सुधारक के रूप में किया जा सकता है क्योंकि इसका पी.एच. मान 3.8–4.0 तक होता है। साथ ही कार्बनिक पदार्थ की मात्रा लगभग 31.5 प्रतिशत तक होती है। स्पेन्ट वॉश का उपयोग एक बार ही करना उपयुक्त रहता है।

## स्पेन्ट वॉश का क्षारीय भूमि के उपचार में उपयोग करने की प्रक्रिया

1. खेत की जुताई करें।
2. ढलान एवं उबड़–खाबड़ खेतों को 25 वर्ग मीटर के छोटे–छोटे टुकड़ों में बाट लेवें।
3. स्पेन्ट वॉश का उपयोग समान रूप से करें।
4. फिर 5–7 दिन तक इंतजार करें।
5. अच्छे गुण वाले पानी से इतनी सिंचाई करें कि भूमि सतह पर 10–15 से.मी. पानी 24 घंटे तक खड़ा रहे। इसके बाद इस पानी का निकास कर देवें।
6. उपरोक्त प्रक्रिया दो बार दोहरायें।
7. भूमि को सूखने देना चाहिए जिससे उसकी जुताई की जा सके और भूमि का प्राकृतिक ऑक्सीकरण भी हो सके।
8. अच्छी सड़ी गोबर की खाद 5 टन प्रति हेक्टेयर की दर से खेत में डालनी चाहिए।
9. स्पेन्ट वॉश देने के 45–60 दिन बाद खेत में बुवाई करनी चाहिए।

## प्रैसमड से खाद बनाना

प्रैसमड का उपयोग गन्ने की पत्तियॉ तथा गाय के गोबर के साथ या अकेले ही सड़ाकर खाद बनाने में किया जा सकता है। इसके लिए लगभग 9 इंच की सल्फाइटेशन प्रैसमड की परत तथा 9 इंच की गन्ने की पत्तियॉ, गाय का गोबर तथा अन्य खेत के कचरे की परत को एक के उपर एक लगाकर 4 फीट तक ढ़ेर बनाकर उसको गारे से लेप देते हैं। हर 15–20 दिन पश्चात् इसकी पलटाई करते रहना चाहिए। इस तरह 75–90 दिन में अच्छी खाद तैयार हो जाती है।

शहरों के जैविक अपशिष्ट (रसोई का कचरा, सब्जी मण्डी का कचरा एवं भोजनालय/होटल का कचरा) को प्रैसमड तथा गोबर के साथ सड़ाकर एक अच्छी खाद बनाई जा सकती है। इसके लिए ढ़ेर विधि सबसे लाभदायक होती है। जैविक अपशिष्टों को पृथक करके प्रेसमड तथा गोबर के साथ बनाई गई खाद में भारी धातुओं की मात्रा बहुत कम होती है तथा खाद के गुणों में आशातीत वृद्धि होती हैं।

**प्रैसमड से तैयार खाद का रासायनिक संगठन (प्रतिशत)**

| खाद | नत्रजन | फास्फेट | पोटाश | कार्बनिक कार्बन | कार्बन : नत्रजन |
|---|---|---|---|---|---|
| गोबर + गन्ने का कचरा | 0.57 | 0.36 | 0.57 | 7.9 | 13.9 |
| कार्बोनेशन प्रैसमड + गन्ने का कचरा | 0.42 | 0.45 | 0.67 | 6.2 | 14.8 |
| कार्बोनेशन प्रैसमड + गन्ने का कचरा + गोबर | 0.50 | 0.39 | 0.59 | 6.8 | 13.6 |
| सल्फाइटेशन प्रैसमड + गन्ने का कचरा | 0.96 | 0.74 | 0.74 | 11.3 | 11.8 |
| सल्फाइटेशन प्रैसमड + गन्ने का कचरा + गोबर | 0.70 | 0.59 | 0.76 | 8.9 | 12.7 |

## शहरी अपशिष्ट

शहरी क्षेत्रों में जैविक एवं अजैविक अपशिष्ट वहाँ की भूमि या मृदा को बहुत बुरी तरह से प्रदूषित करते हैं। घरेलू, नगरपालिका तथा उद्योगों का कूड़ा–कचरा इस समस्या को और अधिक बढ़ा देता है। इस कूड़े कचरे में प्लास्टिक की थैलियां, लोहा, कॉच, एल्युमिनियम तथा ऐसे ही अन्य पदार्थ सम्पूर्ण वातावरण को बहुत प्रदूषित करती हैं, क्योंकि इनका अपघटन नहीं होता है। इन अपशिष्टों का कृषि उत्पादन में कोई महत्व नहीं होता है। अतः इनके निष्पादन हेतु इन्हें जगह–जगह से उठाकर, नगर निगम/परिषद द्वारा कचरा इकट्ठा करके कल कारखानों में भेज देना चाहिए, जहाँ इनसे अन्य उपयोगी वस्तु बन सकें। शहरों में कचरा बीनने वाले लोग इस काम को बड़े अच्छे ढ़ग से करते हैं। हालाकि इस प्रकार बनी वस्तुओं की गुणवत्ता उतनी अच्छी नहीं होती है, फिर भी अपशिष्टों के पुनः चक्रण का यह एक अच्छा तरीका है।

पुनः चक्रण से बचे अपशिष्टों का प्रयोग भूमि भराव के रुप में भी किया जा सकता हैं। ये भूमि भराव अनुपयोगी भूमियों में बनाये जाने चाहिए। साथ ही यह भी ध्यान रखना चाहिए कि पास में ही कोई जलाशय या नदी नहीं हो, अन्यथा इन भूमि भरावों में से होकर बहा पानी उसे भी प्रदूषित कर देगा।

शहरों के जैविक अपशिष्ट (रसोई का कचरा, सब्जी मण्डी का कचरा एवं भोजनालय/होटल का कचरा) को गोबर के साथ सड़ाकर एक अच्छी खाद बनाई जा सकती है। इसके लिए ढ़ेर विधि सबसे लाभदायक होती है क्योंकि इससे हानिकारक जीवाणु समाप्त हो जाते है। साथ ही इस प्रकार बनी खाद के उपयोग करने से कचरे के निष्पादन के लिए अधिक भूमि की आवश्यकता नहीं पड़ती है। जैविक अपशिष्टों को पृथक करके बनाई गई खाद में भारी धातुओं की मात्रा बहुत कम होती है तथा खाद के गुणों में आशातीत वृद्धि होती है। अतः इस खाद का उपयोग फसल उत्पादन में किया जा सकता है।

बिना पृथक किये हुए शहरी कचरे से खाद बनाना

जैविक अपशिष्टों को पृथक करके कचरे को 15–20 दिन तक सड़ाकर इसमें केचुओं को छोड़कर केचुआ खाद भी बनाई जा सकती है। यह खाद गुणात्मक रुप से अच्छी होती है।

सब्जी मंड़ी एवं रसोई के कचरे को केचुऑ खाद के लिए सड़ाना

### जैविक अपशिष्ट से बनाई खाद्य का रासायनिक गठन

| गुण | बिना पृथक किये | आंशिक पृथक | पृथक किये |
|---|---|---|---|
| नमी (प्रतिशत) | 13.41 | 17.29 | 25.53 |
| पी.एच. मान | 7.38 | 7.46 | 7.54 |
| वैद्युत चालकता (डैसी सायमन/मी.) | 2.34 | 2.88 | 3.71 |
| कुल कार्बनिक कार्बन (प्रतिशत) | 9.98 | 11.95 | 13.92 |
| नत्रजन (प्रतिशत) | 0.62 | 0.69 | 1.02 |
| फास्फोरस (प्रतिशत) | 0.16 | 0.15 | 0.27 |
| पोटेशियम (प्रतिशत) | 0.46 | 0.54 | 0.50 |
| कार्बनः नत्रजन अनुपात | 17.94 | 19.24 | 22.73 |

पृथक किये हुए शहरी जैविक कचरे से केचुऑ खाद बनाना

## शहरी वाहित मल

भारत में 450 से ज्यादा शहरों में प्रतिदिन 17 x $10^6$ घन मीटर से ज्यादा वाहित मल उत्पादित होता है। प्रायः कच्चे या अपरिष्कृत वाहितमल को सीधे ही किसी नदी, नाले या निम्नस्थ भूमियों में बहा दिया जाता है अथवा खेतों की सिचांई के काम में लिया जाता है। इस प्रकार कच्चे वाहित मल का बहाया जाना या सिचांई के लिए काम में लिया जाना अत्यन्त गलत कार्य है। इससे प्रदूषण के साथ–साथ बीमारियाँ फैलने का भी डर रहता हैं। अपरिष्कृत वाहित मल से सिंचित मृदाओं में हानिकारक भारी धातुओं का संचयन हो जाता है।

इस वाहित मल को परिष्कृत करने के उपरांत बाग–बगीचों में इसका उपयोग करना चाहिए। जहाँ तक हो सके वाहित मल से सिंचित मृदाओं में पत्तेदार सब्जियों को नहीं उगाना चाहिए। परिष्कृत वाहित मल में पोषक तत्वों की उपलब्धता के कारण इसका उपयोग फसल उत्पादन में किया जा सकता है।

शहरी वाहित मल जल

वाहित मल का उपयोग सिंचाई के लिए करने से मृदा उर्वरता पर अच्छा प्रभाव पड़ता हैं। भूमिगत एवं नहर के पानी से सिंचाई की अपेक्षा वाहित मल/स्लज (कीचड़) का उपयोग करने पर मृदा में पर्याप्त मात्रा में कार्बनिक कार्बन, फास्फोरस एवं पोटाश की वृद्धि होती हैं। वाहित मल से सिंचाई करने से सतही मृदा की एन्जाइम क्रियाशीलता में वृद्धि होती है।

## औद्योगिक अपशिष्ट

मृदा को प्रदूषित करने में आधुनिक उद्योगों का बहुत बड़ा हाथ है। इनकी चिमनियों द्वारा वायु में फेंके गये धुएँ, कालिख और विभिन्न गैसें, मृदा को प्रदूषित करती हैं। इसके साथ ही उद्योगों के कचरे के रुप में फेंकी गई भारी धातुएं भी मृदा को प्रदूषित करती हैं। उद्योगों की चिमनियों से वायु में छोड़ी गई राख और कालिख वायु में निलंबित अवस्था में उड़ते–उड़ते दूर तक चली जाती हैं और जब वायु की गति कम होने लगती है, तब धीरे–धीरे अवसादन की क्रिया के द्वारा यह मृदा सतह, पेड़–पौधों और इमारतों पर जमा हो जाती है।

औद्योगिक इकाइयों से निकली फ्लाईएश तथा उसका भंडारण

शेष बची हुई राख बाद में वर्षा ऋतु में वर्षा जल के साथ नीचे आ जाती है। तापीय विद्युत उत्पादन केन्द्रों की चिमनियों से निकली फ्लाई ऐश तथा साधारण राख मृदा को अत्यंत प्रदूषित करते हैं। साधारण राख का प्रयोग इमारतों के निर्माण के साथ ही उसकी गुणवत्ता के आधार पर मृदा सुधारक और भूमि भराव के रुप भी प्रयोग करते हैं।

एल्यूमिनियम के कारखानों के पास की मृदाओं में फ्लोराइड की अधिकता होती है। फ्लोराइड की अधिकता से दांत खराब हो जाते है और हड्डियां टेढ़ी हो जाती हैं। फ्लाई ऐश में चूंकि अत्यधिक पोषक तत्व भी होते हैं, अतः आजकल इसका प्रयोग फसल उत्पादन में भी किया जाता है। फ्लाई ऐश में भारी धातुएं भी अधिक मात्रा में होती हैं अतः खेतों में इसका उपयोग सीमित मात्रा में ही करना चाहिए।

सघन कृषि पद्धति तथा असंतुलित रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग के कारण दिनों दिन मृदा उर्वरता में ह्रास हो रहा है, जिसे शहरी एवं औद्योगिक अपशिष्ट/अपद्रव्य को परिष्कृत करके या उससे बनी खाद का उपयोग कर रोका जा सकता है। शहरी क्षेत्रों में अजैविक अपशिष्ट पदार्थो को अलग से इकठ्ा करके कल कारखानों में भेजकर उनसे अन्य आवश्यक वस्तुएँ बनाई जा सकती हैं या भूमि भराव किया जा सकता हैं। शहरी जैविक अपशिष्ट से बनी खाद का उपयोग फसल उत्पादन के लिए कर सकते हैं जिससे कचरे के निष्पादन के लिए अधिक भूमि की आवश्यकता से बचा जा सकता है। परिष्कृत या कम्पोस्टेड औद्योगिक अपशिष्टों का उपयोग सीमित मात्रा में फसल उत्पादन के लिए किया जा सकता है। परिष्कृत वाहित मल का उपयोग बाग बगीचों में किया जाना चाहिए। वाहित मल से सिंचित खेतों में पत्तेदार सब्जियों की खेती नहीं करनी चाहिए।

चीनी कारखानों एवम् इससे सम्बन्धित कारखानों के उप–उत्पाद (अपशिष्ट/अपद्रव्य) का उपयोग खाद बनाने में, जैविक पदार्थ के रूप में खेत में देने तथा क्षारीय मृदाओं में मृदा सुधारक के रूप में प्रयोग कर न सिर्फ मृदाओं की उत्पादन क्षमता बढ़ाई जा सकती है अपितु मृदाओं को सुधारा भी जा सकता है एवं इनसे होने वाले पर्यावरण प्रदूषण को भी रोका जा सकता है।

CAZRI™

Enhancing resilience of arid lands